श्रीबालकृष्ण-पदावली

ॐ

(श्रीबालकृष्ण-पदावली)

मुद्रक तथा प्रकाशक
घनश्यामदास जालान
गीताप्रेस, गोरखपुर

सं० २०१२ प्रथम संस्करण १०,०००

मूल्य अजिल्द ।।।=) चौदह आना
सजिल्द १।) एक रुपया चार आना

पता—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

श्रीहरिः

नम्र निवेदन

श्रीसूरदासजी हिंदी-साहित्य-गगनके सूर्य तो हैं ही, बाल-वर्णनके क्षेत्रमें भी सम्राट् हैं—यह बात सर्वमान्य है। उनके दिव्य नेत्रोंके सम्मुख उनके श्यामसुन्दर नित्य क्रीड़ा करते हैं। सूर कल्पना नहीं करते, वे तो देखते हैं और वर्णन करते हैं। इसीलिये उनकी वाणी इतनी सजीव है, इतनी ललित है, इतनी मर्म-स्पर्शिनी है।

अनन्त-सौन्दर्य-माधुर्यघन श्रीश्यामसुन्दरकी बालमाधुरी-का वर्णन जो सूरकी सरस वाणीसे हुआ है, रसका सर्वस्व-सार है। उसका गान करके वाणी पवित्र होती है, उसका चिन्तन करके हृदय परिशुद्ध होता है, उसके श्रवणसे श्रवण सार्थक हो जाते हैं।

श्रीकृष्ण-बालमाधुरी (श्रीबालकृष्ण-पदावली) में सूरसागर-के ३३५ पदोंका संग्रह है। 'श्रीकृष्ण-रूपमाधुरी' नामसे एक संग्रह और पृथक् किया गया है, जिसे इसके बाद ही प्रकाशित करना है। सुतरां इस संग्रहमें श्रीकृष्णचन्द्रकी शिशु-लीलाके मधुर-मञ्जुल पद ही लिये गये हैं। जिन पदोंमें बालरूपकी सुन्दर झाँकी है, उन्हें दूसरे संग्रहमें ले लिया गया है।

पदोंका सरल भावार्थ दिया गया है तथा अन्तमें पदोंमें आये वे मुख्य कथाप्रसङ्ग दे दिये गये हैं, जो श्रीरामावतार

अथवा श्रीकृष्णावतारकी कथाके नहीं हैं; क्योंकि श्रीरामचरित प्रायः पूरा ही 'सूररामचरितावली' में आ चुका है और 'श्रीकृष्ण-ललितलीलापदावली'के नामसे एक पृथक् संग्रह किया जा चुका है। प्रारम्भमें पदोंकी अकारादि क्रमसे सूची भी दे दी गयी है।

पदोंके पाठ तथा भावार्थ करनेमें कोई त्रुटि रही हो तो सूचना मिलनेपर उसे आगामी संस्करणमें सुधारा जा सकेगा।

आशा है यह सानुवाद संग्रह सभी साहित्य-प्रेमियों, सूर-साहित्यके अध्ययन करनेवालोंको प्रिय होगा। भगवान् श्री-श्यामसुन्दरके प्रियजनोंको तो प्रिय होगा ही और वे इसे पाकर प्रसन्न होंगे।

विनीत—**प्रकाशक, गीताप्रेस, गोरखपुर**

श्रीहरिः

पद-सूची

जसोदा हरि पालनैं झुलावै ।

॥ श्रीहरिः ॥

श्रीसूरदासजीरचित

श्रीबालकृष्ण-पदावली

राग गौड़ मलार

[१]

आदि सनातन, हरि अविनासी । सदा निरंतर घट-घट बासी ॥
पूरन ब्रह्म, पुरान बखानैं । चतुरानन, सिव अंत न जानैं ॥
गुन-गन अगम, निगम नहिं पावै । ताहि जसोदा गोद खिलावै ॥
एक निरंतर ध्यावै ज्ञानी । पुरुष पुरातन सो निर्वानी ॥
जप-तप-संजम ध्यान न आवै । सोइ नंद कैं आँगन धावै ॥
लोचन-स्त्रवन न रसना-नासा । बिनु पद-पानि करै परगासा ॥
बिस्वंभर निज नाम कहावै । घर-घर गोरस सोइ चुरावै ॥
सुक-सारद-से करत बिचारा । नारद-से पावहिं नहिं पारा ॥
अबरन, बरन सुरति नहिं धारै । गोपिनि के सो बदन निहारै ॥
जरा-मरन तैं रहित, अमाया । मातु, पिता, सुत, बंधु न जाया ॥
ज्ञान-रूप हिरदै मैं बोलै । सो बछरनि के पाछैं डोलै ॥
जल, धर, अनिल, अनल, नभ, छाया । पंचतत्त्व तैं जग उपजाया ॥
माया प्रगटि सकल जग मोहै । कारन-करन करै सो सोहै ॥
सिव-समाधि जिहि अंत न पावै । सोइ गोप की गाइ चरावै ॥
अच्युत रहै सदा जल-साई । परमानंद परम सुखदाई ॥
लोक रचै राखै अरु मारै । सो ग्वालनि सँग लीला धारै ॥
काल डरै जाकैं डर भारी । सो ऊखल बाँध्यौ महतारी ॥
गुन अतीत, अविगत, न जनावै । जस अपार, स्तुति पार न पावै ॥

जाकी महिमा कहत न आवै। सो गोपिनि सँग रास रचावै॥
जाकी माया लखै न कोई। निर्गुन-सगुन धरै बपु सोई॥
चौदह भुवन पलक मैं टारै। सो बन-बीथिनि कुटी सँवारै॥
चरन-कमल नित रमा पलोवै। चाहति नैंकु नैन भरि जोवै॥
अगम, अगोचर, लीला-धारी। सो राधा-बस कुंज-बिहारी॥
बड़भागी वै सब ब्रजवासी। जिन कैं सँग खेलैं अबिनासी॥
जो रस ब्रह्मादिक नहिं पावैं। सो रस गोकुल-गलिनि बहावैं॥
सूर सुजस कहि कहा बखानै। गोबिंद की गति गोबिंद जानै॥

जो श्रीहरि सबके आदिकारण हैं, सनातन हैं, अविनाशी हैं, सदा-सर्वदा सबके भीतर निवास करते हैं, पुराण पूर्णब्रह्म कहकर जिनका वर्णन करते हैं, ब्रह्मा और शंकर भी जिनका पार नहीं पाते, वेद भी जिनके अगम्य गुणगणोंको जान नहीं पाते, उन्हींको मैया यशोदा गोदमें खिलाती हैं। ज्ञानीजन जिस एक तत्त्वका निरन्तर ध्यान करते हैं, वह निर्वाण-स्वरूप पुराणपुरुष जप, तप, संयमसे ध्यानमें भी नहीं आता; वही नन्दबाबाके आँगनमें दौड़ता है। जिसके नेत्र, कर्ण, जिह्वा, नासिका आदि कोई इन्द्रिय नहीं, बिना हाथ-पैरके ही जो सम्पूर्ण विश्वको प्रकाशित कर रहा है, जिसका अपना नाम विश्वम्भर कहा जाता है, वही (गोकुलमें) घर-घर गोरस (दही-माखन) की चोरी करता है। शुकदेव, शारदा-जैसे जिसका चिन्तन किया करते हैं, देवर्षि नारद-जैसे जिसका पार नहीं पाते, जिस अरूपके रूपकी वेद भी कोई धारणा नहीं कर पाते, (प्रेमपरवश) वही गोपियोंके मुख देखा करता है। जो बुढ़ापा और मृत्युसे रहित एवं मायातीत है, जिसका न कोई माता है, न पिता है, न पुत्र है, न भाई है, न स्त्री है, जो ज्ञानस्वरूप हृदयमें बोल रहा (वाणीका आधार) है, वही (व्रजमें) बछड़ोंके पीछे-पीछे घूमता है। जल, पृथ्वी, वायु, अग्नि और आकाशका विस्तार करके जिसने इन पञ्च तत्त्वोंसे सारे जगत्‌को उत्पन्न किया, अपनी मायाको प्रकट करके जो समस्त संसारको मोहित

किये है, जगत्का कारण, जगत्-निर्माणके करण (साधन) तथा जगत्के कर्ता–(तीनों ही) रूपोंमें जो स्वयं शोभित है, शंकरजी समाधिके द्वारा भी जिसका अन्त नहीं पाते, वही गोपोंकी गायें चराता है। जो अच्युत सदा जलशायी (क्षीरसिन्धुमें शयन करनेवाला) है, परम सुखदाता परमानन्दस्वरूप है, जो विश्वकी रचना, पालन और संहार करनेवाला है, वही गोपोंके साथ (अनेक प्रकारकी) क्रीडाएँ करता है। जिसके महान् भयसे काल भी डरता रहता है, माता यशोदाने उसीको ऊखलमें बाँध दिया। जो गुणातीत है, अविज्ञात है, जिसे जाना नहीं जा सकता, जिसके अपार सुयशका अन्त वेद भी नहीं पाते, जिसकी महिमाका वर्णन किया नहीं जा सकता, वही गोपियोंके साथ रास-लीला करता है। जिसकी मायाको कोई जान नहीं सकता, वही निर्गुण और सगुण स्वरूपधारी भी है। जो (इच्छा करते ही) एक पलमें चौदहों भुवनोंको ध्वस्त कर सकता है, वही वृन्दावनकी वीथियोंमें निकुञ्जोंको सजाता है। लक्ष्मीजी जिसके चरणकमलोंको नित्य पलोटती रहती हैं और यही चाहती हैं कि तनिक ये नेत्र भरकर (भली प्रकार) मेरी ओर देख लें, वही अगम्य, अगोचर लीलाधारी (भगवान्) श्रीराधाजीके वश होकर निकुञ्जोंमें विहार करता है। वे सब व्रजबासी बड़े ही भाग्यवान् हैं, जिनके साथ अविनाशी (परमात्मा) खेलता है। जिस रसको ब्रह्मादि देवता नहीं पाते, उसी प्रेमरसको वह गोकुलकी गलियोंमें ढुलकाता-बहाता है। सूरदास कहाँतक उसका वर्णन करे, गोविन्दकी गति तो वह गोविन्द ही जानता है।

राग सारंग

[२]

बाल-बिनोद भावती लीला, अति पुनीत मुनि भाषी।
सावधान ह्वै सुनौ परीच्छित, सकल देव मुनि साखी॥
कालिंदी कैं कूल बसत इक मधुपुरि नगर रसाला।
कालनेमि खल उग्रसेन कुल उपज्यौ कंस भुवाला॥

आदिब्रह्म जननी सुर-देवी, नाम देवकी बाला।
दई बिबाहि कंस बसुदेवहिं, दुख-भंजन, सुख-माला॥
हय गय रतन हेम पाटंबर, आनँद मंगलचारा।
समदत भई अनाहत बानी, कंस कान झनकारा॥
याकी कोखि औतरै जो सुत, करै प्रान परिहारा।
रथ तैं उतरि, केस गहि राजा, कियौ खड्ग पटतारा॥
तब बसुदेव दीन ह्वै भाष्यौ, पुरुष न तिय-बध करई।
मोकौं भई अनाहत बानी, तातैं सोच न टरई॥
आगैं बृच्छ फरै जो बिष-फल, बृच्छ बिना किन सरई।
याहि मारि, तोहिं और बिबाहौं, अग्र-सोच क्यौं मरई॥
यह सुनि सकल देव-मुनि भाष्यौ, राय, न ऐसी कीजै।
तुम्हरे मान्य बसुदेव-देवकी, जीव-दान इहिं दीजै॥
कीन्यौ जज्ञ होत है निष्फल, कह्यौ हमारौ कीजै।
याकैं गर्भ अवतरैं जे सुत, सावधान ह्वै लीजै॥
पहिलौ पुत्र देवकी जायौ, लै बसुदेव दिखायौ।
बालक देखि कंस हँसि दीन्यौ, सब अपराध छमायौ॥
कंस कहा लरिकाई कीनी, कहि नारद समुझायौ।
जाकौ भरम करत हौ राजा, मति पहिलैं सो आयौ॥
यह सुनि कंस पुत्र फिरि माँग्यौ, इहिं बिधि सबनि सँहारौं।
तब देवकी भई अति ब्याकुल, कैसैं प्रान प्रहारौं॥
कंस बंस कौ नास करत है, कहँ लौं जीव उबारौं।
यह बिपदा कब मेटहिं श्रीपति अरु हौं काहिं पुकारौं॥
धेनु-रूप धरि पुहुमि पुकारी, सिव-बिरंचि कैं द्वारा।
सब मिलि गए जहाँ पुरुषोत्तम, जिहिं गति अगम अपारा॥

छीर-समुद्र-मध्य तैं यौं हरि, दीरघ बचन उचारा।
उधरौं धरनि, असुर-कुल मारौं, धरि नर-तन-अवतारा॥
सुर, नर, नाग तथा पसु-पच्छी, सब कौं आयसु दीन्हौ।
गोकुल जनम लेहु सँग मेरैं, जो चाहत सुख कीन्हौ॥
जेहिं माया बिरंचि-सिव मोहे, वहै बानि करि चीन्हौ।
देवकि गर्भ अकर्षि रोहिनी, आप बास करि लीन्हौ॥
हरि कैं गर्भ-बास जननी कौ बदन उजारौ लाग्यौ।
मानहुँ सरद-चंद्रमा प्रगट्यौ, सोच-तिमिर तन भाग्यौ॥
तिहिं छन कंस आनि भयौ ठाढ़ौ, देखि महातम जाग्यौ।
अब की बार आपु आयौ है अरी, अपुनपौ त्याग्यौ॥
दिन दस गएँ देवकी अपनौ बदन बिलोकन लागी।
कंस-काल जिय जानि गर्भ मैं, अति आनंद सभागी॥
मुनि नर-देव बंदना आए, सोवत तैं उठि जागी।
अबिनासी कौ आगम जान्यौ, सकल देव अनुरागी॥
कछु दिन गएँ गर्भ कौ आलस, उर-देवकी जनायौ।
कासौं कहौं सखी कोउ नाहिं न, चाहति गर्भ दुरायौ॥
बुध रोहिनी-अष्टमी-संगम, बसुदेव निकट बुलायौ।
सकल लोकनायक, सुखदायक, अजन्, जन्म धरि आयौ॥
माथैं मुकुट, सुभग पीतांबर, उर सोभित भृगु-रेखा।
संख-चक्र-गदा-पद्म बिराजत, अति प्रताप सिसु-भेषा॥
जननी निरखि भई तन ब्याकुल, यह न चरित कहुँ देखा।
बैठी सकुचि, निकट पति बोल्यौ, दुहुँनि पुत्र-मुख पेखा॥
सुनि देवकि! इक आन जन्म की, तोकौं कथा सुनाऊँ।
तैं माँग्यौ, हौं दियौ कृपा करि, तुम सौ बालक पाऊँ॥

सिव-सनकादि आदि ब्रह्मादिक ज्ञान ध्यान नहिं आऊँ।
भक्तबछल बानौ है मेरौ, बिरुदहिं कहा लजाऊँ॥
यह कहि मया मोह अरुझाए, सिसु ह्वै रोवन लागे।
अहो बसुदेव, जाहु लै गोकुल, तुम हौ परम सभागे॥
घन-दामिनि धरती लौं कौंधै, जमुना-जल सौं पागे।
आगैं जाउँ जमुन-जल गहिरौ, पाछैं सिंह जु लागे॥
लै बसुदेव धँसे दह सूधे, सकल देव अनुरागे।
जानु, जंघ, कटि, ग्रीव, नासिका, तब लियौ स्याम उछाँगे॥
चरन पसारि परसि कालिंदी, तरवा नीर तियागे।
सेष सहस फन ऊपर छायौ, लै गोकुल कौं भागे॥
पहुँचे जाइ महर-मंदिर मैं, मनहिं न संका कीनी।
देखी परी जोगमाया, बसुदेव गोद करि लीनी॥
लै बसुदेव मधुपुरी पहुँचे प्रगट सकल पुर कीनी।
देवकी-गर्भ भई है कन्या, राइ न बात पतीनी॥
पटकत सिला गई, आकासहिं दोउ भुज चरन लगाई।
गगन गई, बोली सुरदेवी, कंस, मृत्यु नियराई॥
जैसैं मीन जाल मैं क्रीड़त, गनै न आपु लखाई।
तैसैंहि कंस, काल उपज्यौ है, ब्रज मैं जादवराई॥
यह सुनि कंस देवकी आगैं रह्यौ चरन सिर नाई।
मैं अपराध कियौ, सिसु मारे, लिख्यौ न मेट्यौ जाई॥
काकैं सत्रु जन्म लीन्यौ है, बूझै मतौ बुलाई।
चारि पहर सुख-सेज परे निसि, नेकु नींद नहिं आई॥
जागी महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, आनंद-तूर बजायौ।
कंचन-कलस, होम, द्विज-पूजा, चंदन भवन लिपायौ॥

बरन-बरन रँग ग्वाल बने, मिलि गोपिनि मंगल गायौ।
बहु बिधि ब्योम कुसुम सुर बरषत, फूलनि गोकुल छायौ॥
आनँद भरे करत कौतूहल, प्रेम-मगन नर-नारी।
निर्भर अभय-निसान बजावत, देत महरि कौं गारी॥
नाचत महर मुदित मन कीन्हे, ग्वाल बजावत तारी।
सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे, मथुरा-गर्व-प्रहारी॥

मुनि शुकदेवजीने हृदयको प्रिय लगनेवाली श्रीकृष्णचन्द्रके बाल-विनोदकी लीलाका वर्णन करते हुए कहा—महाराज परीक्षित्! सावधान होकर सुनो, सभी देवता एवं मुनिजन इस वर्णनके साक्षी हैं। (सबने इसे देखा है।) यमुना-किनारे एक मथुरा नामकी रसमयी नगरी बसी है, वहाँ उग्रसेनके कुलमें (उनका पुत्र होकर) दुष्ट कालनेमि ही कंसके रूपमें उत्पन्न हुआ, जो (पीछे) वहाँका नरेश हो गया। परम ब्रह्मको जन्म देनेवाली, समस्त देवात्मिका, दुःखको नष्ट करनेवाली तथा सुखस्वरूपा देवकी नामक (अपनी चचेरी) बहिनका विवाह कंसने वसुदेवजीके साथ कर दिया। हाथी, घोड़े, रत्न, स्वर्णराशि, रेशमी वस्त्र आदि देकर आनन्द-मङ्गल मनाते हुए (बहनोईका) समादर करते समय कंसके कानोंको झंकृत करते यह आकाशवाणी हुई कि 'इसके गर्भसे जो पुत्र प्रकट होगा, वह तेरे प्राणोंका हर्ता होगा।' (यह सुनते ही) रथसे उतरकर राजा कंसने (देवकीके) केश पकड़ लिये और तलवार म्यानसे खींच ली। तब वसुदेवजीने बड़ी नम्रतासे कहा—'कोई भी पुरुष स्त्रीकी हत्या नहीं करता है।' (कंसने कहा—) 'मुझे जो आकाशवाणी हुई है, उसके कारण मेरी चिन्ता दूर नहीं होती है। जो वृक्ष आगे विषफल फलनेवाला हो, उस वृक्षके ही न रहनेपर फिर वह कैसे फल सकता है। तुम अभीसे शोक करके क्यों मरे जाते हो, इसे मारकर तुम्हारा विवाह दूसरी कुमारीसे कर दूँगा।' यह सुनकर सभी देवताओं तथा मुनियोंने कहा—'ऐसा विचार मत करो। वसुदेव और देवकी तुम्हारे सम्मान्य हैं, इन्हें जीवनदान दो। तुमने (कन्यादानरूप)

जो यज्ञ किया था, वह निष्फल हुआ जाता है, अतः हमारा कहना मान लो। इसके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हों, उन्हें सावधानीपूर्वक ले लिया करो।' जब देवकीजीके पहला पुत्र उत्पन्न हुआ, तब उसे लेकर वसुदेवजीने कंसको दिखलाया। बालकको देखकर कंस हँस पड़ा, उसने सब अपराध क्षमा कर दिये। लेकिन नारदजीने उसे समझाया—'कंस! तुमने यह क्या लड़कपन किया? तुम जिसका संदेह (जिससे भय) करते हो, वह कहीं पहले पुत्रके रूपमें ही न आया हो।' यह सुनकर कंसने फिर उस पुत्रको माँग लिया। इस प्रकार उसने देवकीके सभी पुत्रोंका संहार किया। तब देवकी अत्यन्त व्याकुल हो गयीं। (वे सोचने लगीं) 'मैं अपने प्राणोंका त्याग कैसे कर दूँ। कंस मेरे वंशका ही नाश कर रहा है, किस प्रकार मैं अपने जीवनको बचाऊँ। भगवान् श्रीलक्ष्मीनाथ यह विपत्ति कब दूर करेंगे। मैं और किसे पुकारूँ।' (उसी समय) पृथ्वीने गायका रूप धारण करके शंकरजी और ब्रह्माजीके द्वारपर जाकर पुकार की (कि अब मुझसे असुरोंके पापका भार सहा नहीं जाता।) तब सब देवता एकत्र होकर वहाँ गये, जहाँ वे श्रीपुरुषोत्तम निवास करते हैं, जिनकी गति अगम्य और अपार है। (देवताओंकी प्रार्थना सुनकर) श्रीहरिने क्षीरसागरमेंसे ही इस प्रकार उच्च स्वरसे कहा—'मैं पृथ्वीका उद्धार करूँगा, मनुष्यरूपमें अवतार धारण करके असुर-कुलका संहार कर दूँगा।' प्रभुने सभी देवता, मनुष्य, नाग तथा (दिव्य) पशु-पक्षियोंको आज्ञा दी कि 'यदि मेरे साथका सुख लेना चाहते हो तो गोकुलमें मेरे साथ जन्म लो।' जिस मायाने ब्रह्मा और शिवको भी मोहित किया, उसीने प्रभुकी आज्ञा स्वीकार करके देवकीजीके (सातवें) गर्भको रोहिणीजीके उदरमें खींचकर स्थापित कर दिया और स्वयं (यशोदाजीके) गर्भमें निवास किया। श्रीहरिके गर्भ-निवाससे माता देवकीके मुखपर इतना प्रकाश प्रतीत होने लगा मानो शरत्पूर्णिमाका चन्द्रमा प्रकट हो गया हो, शोकरूपी सब अन्धकार दूर हो गया। उसी समय कंस (कारागारमें) आकर खड़ा हुआ और (गर्भकी) महिमा देखकर सावधान हो गया। (वह सोचने लगा) 'मेरा शत्रु

अपनेपन (विष्णुरूप) को छोड़कर इस बार स्वयं गर्भमें आया है। दस दिन बीत जानेपर जब माता देवकी अपना मुख (दर्पणमें) देखने लगीं, तब यह समझकर कि मेरे गर्भमें अब कंसका काल आया है, अत्यन्त आनन्दसे अपनेको भाग्यवती मानने लगीं। मुनिगण, मनुष्य (यक्ष-किन्नरादि) तथा देवता उनकी वन्दना करने आये, इससे वे निद्रासे जाग गयीं। अविनाशी परम पुरुषके आनेका यह लक्षण है, ऐसा जानकर सभी देवताओंके प्रति उनका स्नेह हो गया। कुछ समय बीतनेपर माता देवकीके मनमें गर्भजन्य (पुत्रोत्पत्तिका) आलस्य प्रतीत होने लगा। (वे सोचने लगीं–) 'किससे कहूँ, कोई सखी भी पास नहीं है, इस गर्भ (के पुत्र) को तो छिपा देना चाहती हूँ।' उन्होंने वसुदेवजीको अपने पास बुलाया (उसी समय) बुधवारके दिन अष्टमी तिथिको जब रोहिणी नक्षत्रका योग था, समस्त लोकोंके स्वामी, आनन्ददाता, अजन्मा प्रभु जन्म लेकर प्रकट हुए। उनके मस्तकपर मुकुट था, सुन्दर पीताम्बर धारण किये थे, वक्षःस्थलपर भृगुलता सुशोभित थी, शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म हाथोंमें विराजमान थे, अत्यन्त प्रताप होनेपर भी शिशुका वेष था। माता यह स्वरूप देखकर व्याकुल हो गयी, ऐसा चरित्र (इस प्रकारके पुत्रकी उत्पत्ति) उसने कहीं देखा नहीं था। संकुचित होकर वह बैठ गयी और पतिको पास बुलाया। दोनोंने पुत्रके मुखका दर्शन किया। (तब प्रभुने कहा—) 'माता देवकी! सुनो, तुम्हारे एक अन्य जन्मकी कथा मैं तुम्हें सुनाता हूँ। तुमने (वरदान) माँगा कि तुम्हारे-जैसा बालक मुझे मिले और कृपा करके यह वरदान मैंने दे दिया, वैसे तो शिव, सनकादि ऋषि तथा ब्रह्मादि ज्ञानी देवताओंके ध्यानमें भी मैं नहीं आता हूँ। किंतु मेरा स्वरूप ही भक्तवत्सल है, अपने विरदको मैं लज्जित क्यों करूँ।' (अर्थात् भक्तवत्सलतावश अपने वरदानके कारण अब तुम्हारा पुत्र बना हूँ।) 'हे वसुदेवजी! आप परम भाग्यवान् हैं, अब मुझे गोकुल ले जाइये।' यह कहकर माया-मोहमें उलझेकी भाँति शिशु बनकर रुदन करने लगे। (वसुदेवजी सोचने लगे–) 'बादल छाये हैं, बिजली बार-बार पृथ्वीतक चमकती (वज्रपात होता) है, यमुनामें

जल उमड़ रहा है। आगे जाऊँ तो गहरा यमुना-जल है और पीछे सिंह लगता (दहाड़ रहा) है।' (यह सोचते हुए–) सभी देवताओंमें प्रेम किये (देवताओंको मनाते हुए) श्रीवसुदेवजी सीधे ह्रद (गहरे जल) में घुसे। पानी क्रमशः घुटनों, जंघा, कमर, कण्ठतक बढ़ता जब नाकतक आ गया, तब श्यामसुन्दरको दोनों हाथोंमें उठा लिया। (उसी समय श्रीकृष्णचन्द्रने) चरण बढ़ाकर यमुनाका स्पर्श कर दिया, इससे उन्होंने इतना जल घटा दिया कि वह केवल पैरके तलवेतक ही रह गया। शेषजी अपने सहस्र फणोंसे ऊपर छाया किये चल रहे थे, इस प्रकार (शीघ्रतापूर्वक वसुदेवजी) गोकुलको दौड़े। उन्होंने मनमें कोई शंका-संदेह नहीं किया, सीधे नन्दभवनमें जा पहुँचे। (वहाँ यशोदाजीकी गोदमें कन्यारूपसे) सोयी योगमायाको देखकर वसुदेवजीने गोदमें उठा लिया। उसे लेकर वसुदेवजी मथुरा आ गये। उन्होंने पूरे नगरमें यह बात प्रकट की कि देवकीके गर्भसे पुत्री उत्पन्न हुई है; किंतु राजा कंसने इस बातका विश्वास नहीं किया। (कंसके द्वारा) पत्थरपर पटकते समय (उसकी) दोनों भुजाओंपर चरण-प्रहार करके वह आकाशमें चली गयी। आकाशसे वह देवीरूपमें बोली—'कंस! तेरी मृत्यु पास आ गयी है। जैसे मीन जालमें खेलते हुए कुछ न समझते हों और उन्हें अपना काल न दीखता हो, कंस! तू वैसा ही हो रहा है। तेरे काल श्रीयादवनाथ श्रीकृष्ण तो व्रजमें उत्पन्न हो गये हैं।' यह सुनकर कंसने देवकीके आगे उनके चरणोंपर मस्तक रख दिया (और बोला—) 'मैंने तुम्हारे बालक मारकर बड़ा अपराध किया; किंतु जिसके भाग्यमें जो लिखा है, वह मिटाया नहीं जा सकता (उन बालकोंके भाग्यमें मेरे हाथों मरना ही लिखा था, इसमें मेरा क्या दोष?) फिर वह अपने सहायकोंको बुलाकर उनकी सम्मति पूछने लगा कि मेरे शत्रुने किसके घर जन्म लिया है।' (इस चिन्तामें) रात्रिके चारों प्रहर सुखदायी शय्यापर पड़े रहनेपर भी उसे तनिक भी निद्रा नहीं आयी थी। (उधर गोकुलमें) जब श्रीनन्दरानी जागीं, तब उन्होंने पुत्रका मुख देखा—(पुत्रोत्पत्तिकी सूचनाके लिये) आनन्दपूर्वक तुरही

बजवायी। सोनेके कलश सजाये गये, हवन तथा ब्राह्मणोंका पूजन हुआ, भवन चन्दनसे लीपे गये, गोप अनेक रंगोंके वस्त्र पहिनकर सज गये, गोपियाँ एकत्र होकर मङ्गल-गान करने लगीं। देवता आकाशसे नाना प्रकारके पुष्पोंकी वर्षा करने लगे, पूरा गोकुल पुष्पोंसे आच्छादित हो गया। प्रेममग्न सभी नर-नारी आनन्दमें भरे अनेक प्रकारकी क्रीडा करने लगे। सभी नारियाँ अत्यन्त प्रेम-विभोर होकर अभयदुन्दुभी बजाते यशोदाजीको (प्रेमभरी) गाली गाने लगीं। श्रीनन्दबाबा प्रमुदित मन नाचने लगे, गोपगण ताली बजाने लगे। सूरदासजी कहते हैं कि मथुराके गर्वका नाश करनेवाले मेरे प्रभु गोकुलमें प्रकट हो गये हैं।

राग बिलावल

[३]

हरि-मुख देखि हो बसुदेव।
कोटि-काल-स्वरूप सुंदर, कोउ न जानत भेव॥
चारि भुज जिहिं चारि आयुध, निरखि कै न पत्याउ।
अजहुँ मन परतीति नाहीं नंद-घर लै जाउ॥
स्वान सूते, पहरुवा सब, नींद उपजी गेह।
निसि अँधेरी, बीजु चमकै, सघन बरषै मेह॥
बंदि बेरी सबै छूटी, खुले बज्र-कपाट।
सीस धरि श्रीकृष्न लीने, चले गोकुल-बाट॥
सिंह-आगैं, सेष पाछैं, नदी भई भरिपूरि।
नासिका लौं नीर बाढ्यौ, पार पैलो दूरि॥
सीस तैं हुंकार कीनी, जमुन जान्यौ भेव।
चरन परसत थाह दीन्ही, पार गए बसुदेव॥
महरि-ढिग उन जाइ राखे, अमर अति आनंद।
सूरदास बिलास ब्रज-हित, प्रगटे आनँद-कंद॥

श्रीवसुदेवजी ! श्रीहरिका मुख तो देखो ! ये परम सुन्दर होनेपर भी करोड़ों कालके समान हैं, इनका रहस्य कोई नहीं जानता । इनकी ये चारों भुजाएँ जिनमें (शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म) चार आयुध हैं, देखकर भी आप विश्वास नहीं करते ? अबतक भी आपके मनमें (इनके द्वारा कंसके मारे जानेका) विश्वास नहीं है, अतः इन्हें नन्दजीके घर ले जाइये । कुत्ते सो गये हैं, घरके सब रक्षकोंको निद्रा आ गयी है, अँधेरी रात है, बिजली चमक रही है और बादल बड़े जोरकी वर्षा कर रहे हैं । बंदी वसुदेवजीकी सब बेड़ियाँ (स्वतः) खुल गयीं, लोहेके भारी किवाड़ भी खुल गये, मस्तकपर श्रीकृष्ण-चन्द्रको उठाकर वे गोकुलके मार्गपर चल पड़े । आगे सिंह दहाड़ रहा था, पीछे-पीछे शेषनाग चल रहे थे, यमुनामें पूरी बाढ़ आयी थी, अभी दूसरा किनारा बहुत दूर था कि जल नासिकातक आ गया । लेकिन श्यामने सिरपरसे हुंकार की, यमुनाने संकेतके मर्मको समझ लिया, प्रभुके चरणोंका स्पर्श करके उन्होंने थाह दे दिया (पार जाने-जितना जल कर दिया) इससे श्रीवसुदेवजी पार चले गये । उन्होंने श्रीनन्दरानीके पास ले जाकर श्रीकृष्णको रख दिया, इससे देवताओंको बड़ा आनन्द हुआ । सूरदासजी कहते हैं कि ये आनन्दकन्द तो व्रजक्रीडा करनेके लिये ही प्रकट हुए हैं ।

[४]

गोकुल प्रगट भए हरि आइ ।
अमर-उधारन, असुर-सँहारन, अंतरजामी त्रिभुवन राइ ॥
माथैं धरि बसुदेव जु ल्याए, नंद-महर-घर गए पहुँचाइ ।
जागी महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, पुलकि अंग उर मैं न समाइ ॥
गदगद कंठ, बोलि नहिं आवै, हरषवंत ह्वै नंद बुलाइ ।
आवहु कंत, देव परसन भए, पुत्र भयौ, मुख देखौ धाइ ॥
दौरि नंद गए, सुत-मुख देख्यौ, सो सुख मोपै बरनि न जाइ ।
सूरदास पहिलैं ही माँग्यौ, दूध पियावन जसुमति माइ ॥

देवताओंका उद्धार करनेके लिये और असुरोंका संहार करनेके लिये ये अन्तर्यामी त्रिभुवननाथ श्रीहरि गोकुलमें आकर प्रकट हुए हैं। श्रीवसुदेव-जी इन्हें मस्तकपर रखकर ले आये और व्रजराज श्रीनन्दजीके घर पहुँचा गये। माता यशोदाजीने जाग्रत् होनेपर जब पुत्रका मुख देखा, तब उनका अङ्ग-अङ्ग पुलकित हो गया, हृदयमें आनन्द समाता नहीं था, कंठ गद्-गद हो उठा, बोलातक नहीं जाता था, अत्यन्त हर्षित होकर उन्होंने श्री-नन्दजीको बुलवाया कि स्वामी! पधारो! देवता प्रसन्न हो गये हैं, आपके पुत्र हुआ है, शीघ्र आकर उसका मुख देखो। श्रीनन्दरायजी दौड़कर पहुँचे, पुत्रका मुख देखकर उन्हें जो आनन्द हुआ, वह मुझसे वर्णन नहीं किया जाता है। सूरदासजी कहते हैं कि माता यशोदा! मैंने पहले ही (धायके रूपमें) दूध-पिलानेकी न्योछावर माँगी है।

राग गांधार

[५]

उठीं सखी सब मंगल गाइ।
जागु जसोदा, तेरैं बालक उपज्यो, कुँवर कन्हाइ॥
जो तू रच्यौ-सच्यौ या दिन कौं, सो सब देहि मँगाइ।
देहि दान बंदीजन गुनि-गन, ब्रज-बासिनि पहिराइ॥
तब हँसि कहत जसोदा ऐसैं, महरहिं लेहु बुलाइ।
प्रगट भयौ पूरब तप कौ फल, सुत-मुख देखौ आइ॥
आए नंद हँसत तिहिं औसर, आनँद उर न समाइ।
सूरदास ब्रज बासी हरषे, गनत न राजा-राइ॥

सब सखियाँ मङ्गलगान करने लगीं। (उन्होंने कहा—) 'यशोदा-रानी! जागो, कुँवर कन्हाई तुम्हारे पुत्र होकर प्रकट हुए हैं। इस दिनके लिये तुमने जो सामग्री सजाकर एकत्र की है, वह सब मँगवा लो। बंदी लोगों तथा अन्य गुणी जनों (नट, नर्तक, गायकादि) को दान दो, व्रजकी सौभाग्यवती नारियोंको पहिरावा (वस्त्र-आभूषण) दो।' तब यशोदाजी

हँसकर इस प्रकार कहने लगीं—'व्रजराजको बुला लो। उनके पहले किये हुए तपका फल प्रकट हुआ है, वे आकर पुत्रका मुख देखें।' (यह समाचार पाकर) श्रीनन्दजी आये, वे उस समय हँस रहे हैं, आनन्द उनके हृदयमें समाता नहीं। सूरदासजी कहते हैं—सभी व्रजवासी हर्षित हो रहे हैं। वे आज राजा या कंगाल किसीकी गणना नहीं करते। (मर्यादा छोड़कर आनन्द मना रहे हैं।)

राग रामकली

[६]

हौं इक नई बात सुनि आई।
महरि जसौदा ढोटा जायौ, घर-घर होति बधाई॥
द्वारैं भीर गोप-गोपिनि की, महिमा बरनि न जाई।
अति आनंद होत गोकुल मैं, रतन भूमि सब छाई॥
नाचत बृद्ध, तरुन अरु बालक, गोरस-कीच मचाई।
सूरदास स्वामी सुख-सागर, सुंदर स्याम कन्हाई॥

(कोई गोपिका कहती है–)मैं एक नवीन समाचार सुन आयी हूँ—'व्रजरानी श्रीयशोदाजीके पुत्र उत्पन्न हुआ है। घर-घरमें बधाई (मङ्गल-गान) हो रही है। (व्रजराजके) द्वारपर गोप-गोपियोंकी भीड़ लगी है। आजके उनके महत्त्वका वर्णन नहीं हो सकता। गोकुलमें अत्यन्त आनन्द मनाया जा रहा है। (वहाँकी) सारी पृथ्वी रत्नोंसे ढक गयी है। सभी वृद्ध, तरुण और बालक नाच रहे हैं। (उन्होंने) गोरस (दूध, दही, माखन) का कीचड़ मचा रक्खा है।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी श्यामसुन्दर कन्हाई सुखके समुद्र हैं (उनके गोकुल आनेसे वहाँ आनन्द-महोत्सव तो होगा ही)।

[७]

हौं सखि, नई चाह इक पाई।
ऐसे दिननि नंद कैं सुनियत, उपज्यौ पूत कन्हाई॥
बाजत पनव-निसान पंचबिध, रुंज-मुरज सहनाई।
महर-महरि ब्रज-हाट लुटावत, आनँद उर न समाई॥

चलौ सखी, हमहूँ मिलि जैऐ, नैंकु करौ अतुराई।
कोउ भूषन पहिर्‌यौ, कोउ पहिरति, कोउ वैसैंहिं उठि धाई॥
कंचन-थार दूब-दधि-रोचन, गावति चारु बधाई।
भाँति-भाँति बनि चलीं जुवति जन, उपमा बरनि न जाई॥
अमर विमान चढ़े सुख देखत, जै-धुनि-सब्द सुनाई।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत-हित, दुष्टनि के दुखदाई॥

(कोई गोपी कहती है–) 'सखी ! मैंने एक नवीन बात सुनी है कि इन्हीं दिनों व्रजराज श्रीनन्दजीके पुत्र उत्पन्न हुआ है जिसे सब लोग कन्हैया कहते हैं। (वहाँ) नगाड़े, ढोलक, शृंगे, मृदंग, सहनाई आदि पाँचों प्रकारके बाजे * बज रहे हैं। व्रजराज और व्रजरानी (आज) व्रजका पूरा बाजार (उपहारमें) लुटाये दे रहे हैं, उनके हृदयमें आनन्द समाता नहीं है ! इसलिये सखी ! तनिक शीघ्रता करो ! हम सब भी एकत्र होकर वहाँ चलें।' किसीने आभूषण पहिन लिया, कोई पहिनने लगी और कोई जैसे थी वैसे ही उठी और दौड़ पड़ी। स्वर्णके थालमें दूर्वा, दही तथा गोरोचन लिये, बधाईके सुन्दर गीत गाती हुई (व्रजकी) युवतियाँ नाना प्रकारके शृंगार करके चल पड़ीं, उनकी उपमाका तो वर्णन नहीं किया जा सकता। देवता विमानोंपर चढ़े इस आनन्दको देख रहे हैं, उनके जय-जय-कार करनेका शब्द सुनायी पड़ रहा है। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे प्रभु भक्तोंके लिये हितकारी तथा दुष्टोंके लिये दुःखदायक (उनका विनाश करनेवाले) हैं।

---

* वाद्योंके पाँच प्रकार ये हैं–१–क्वणित (वंशी, सहनाई, शृंगे आदि मुखसे फूँककर बजाये जानेवाले), २–रणित (घूँघरू-जैसे अङ्ग-चालनसे झनकार करनेवाले), ३–घोष (मृदंग, ढोल, नगाड़े आदि गम्भीर नाद करनेवाले), ४–ताड्य (परस्पर पीटकर झाँझके समान बजाये जानेवाले), ५–झंकृति (सितार-जैसे तारयुक्त)।

राग आसावरी

[८]

ब्रज भयौ महर कैं पूत, जब यह बात सुनी।
सुनि आनंदे सब लोग, गोकुल नगर-गुनी॥
अति पूरन पूरे पुन्य, रोपी सुथिर थुनी।
ग्रह-लगन-नषत-पल सोधि, कीन्ही बेद-धुनी॥
सुनि धाईं सब ब्रजनारि, सहज सिंगार किये।
तन पहिरे नूतन चीर, काजर नैन दिये॥
कसि कंचुकि, तिलक लिलार, सोभित हार हिये।
कर-कंकन, कंचन-थार, मंगल-साज लिये॥
सुभ स्रवननि तरल तरौन, बेनी सिथिल गुही।
सिर बरषत सुमन सुदेस, मानौ मेघ फुही॥
मुख मंडित रोरी रंग, सेंदुर माँग छुही।
उर अंचल उड़त न जानि, सारी सुरँग सुही॥
ते अपनैं-अपनैं मेल, निकसीं भाँति भली।
मनु लाल-मुनैयनि पाँति, पिंजरा तोरि चली॥
गुन गावत मंगल-गीत, मिलि दस पाँच अली।
मनु भोर भएँ रवि देखि, फूलीं कमल-कली॥
पिय पहिलैं पहुँचीं जाइ अति आनंद भरीं।
लइँ भीतर भवन बुलाइ सब सिसु पाइ परीं॥
इक बदन उघारि निहारि, देहिं असीस खरी।
चिरजीवौ जसुदा-नंद, पूरन काम करी॥
धनि दिन है, धनि यह राति, धनि-धनि पहर घरी।
धनि-धन्य महरि की कोख, भाग-सुहाग भरी॥

जिनि जायौ ऐसौ पूत, सब सुख-फरनि फरी।
थिर थाप्यौ सब परिवार, मन की सूल हरी॥
सुनि ग्वालनि गाइ वहोरि, बालक बोलि लए।
गुहि गुंजा घसि बन-धातु, अंगनि चित्र ठए॥
सिर दधि-माखन के माट, गावत गीत नए।
डफ-झाँझ-मृदंग बजाइ, सब नँद-भवन गए॥
मिलि नाचत करत कलोल, छिरकत हरद-दही।
मनु बरषत भादौं मास, नदी घृत-दूध वही॥
जब जहाँ-जहाँ चित जाइ, कौतुक तहीं-तहीं।
सब आनँद-मगन गुवाल, काहूँ बदत नहीं॥
इक धाइ नंद पै जाइ, पुनि-पुनि पाइ परैं।
इक आपु आपुहीं माहिं, हँसि-हँसि मोद भरैं॥
इक अभरन लेहिं उतारि, देत न संक करैं।
इक दधि-गोरोचन-दूब, सब कैं सीस धरैं॥
तब न्हाइ नंद भए ठाढ़, अरु कुस हाथ धरे।
नांदीमुख पितर पुजाइ, अंतर सोच हरे॥
घसि चंदन चारु मँगाइ, विप्रनि तिलक करे।
द्विज-गुरु-जन कौं पहिराइ, सब कैं पाइ परे॥
तहँ गैयाँ गनी न जाहिं, तरुनी वच्छ बढ़ीं।
जे चरहिं जमुन कैं तीर, दूनैं दूध चढ़ीं॥
खुर ताँवैं, रूपैं पीठि, सोनैं सींग मढ़ीं।
ते दीन्हीं द्विजनि अनेक, हरषि असीस पढ़ीं॥
सब इष्ट मित्र अरु बंधु, हँसि-हँसि बोलि लिये।
मथि मृगमद-मलय-कपूर, माथैं तिलक किये॥

उर मनि-माला पहिराइ, बसन बिचित्र दिये।
दै दान-मान-परिधान, पूरन-काम किये॥
बंदीजन-मागध-सूत, आँगन-भौन भरे।
ते बोलैं लै-लै नाउँ, नहिं हित कोउ बिसरे॥
मनु बरषत मास अषाढ़, दादुर-मोर ररे।
जिन जो जाँच्यौ सोइ दीन, अस नँदराइ ढरे॥
तब अंबर और मँगाइ, सारी सुरँग चुनी।
ते दीन्हीं बधुनि बुलाइ, जैसी जाहि बनी॥
ते निकसीं देति असीस, रुचि अपनी-अपनी।
बहुरीं सब अति आनंद, निज गृह गोप-धनी॥
पुर घर-घर भेरि-मृदंग, पटह-निसान बजे।
बर बारनि बंदनवार, कंचन कलस सजे॥
ता दिन तैं वै ब्रज लोग, सुख-संपति न तजे।
सुनि सबकी गति यह सूर, जे हरि-चरन भजे॥

व्रजमें श्रीव्रजराजके पुत्र हुआ है, जब यह बात सुनायी पड़ी, तब इसे सुनकर गोकुल-नगरके सभी गुणवान् लोग आनन्दमग्न हो गये। (उन्होंने माना कि) सभी पुण्य पूर्ण हो गये और उनका आत्यन्तिक फल प्राप्त हो गया जिससे स्थिर मङ्गल-स्तम्भ स्थापित हुआ (व्रजराजका वंश चलनेसे व्रजको आधार-स्तम्भ मिल गया)। ग्रह, लग्न, नक्षत्र तथा समयका विचार करके वेदपाठ (जातकर्म-संस्कार) किया गया। यह समाचार पाते ही व्रजकी सभी नारियाँ स्वाभाविक श्रृंगार किये हुए (नन्दभवन) दौड़ पड़ीं। शरीरपर उन्होंने नवीन वस्त्र धारण कर रक्खे थे, नेत्रोंमें काजल लगाये थे, कंचुकी (चोली) कसकर बाँधी थीं, ललाटपर तिलक (बेंदी) लगाये थीं, हृदयपर हार शोभित थे, हाथोंमें कंकण पहिने और मङ्गल द्रव्योंसे सुसज्जित स्वर्णथाल लिये थीं। सुन्दर कानोंमें चंचल कुंडल थे, वेणियाँ ढीली गुँथी हुई थीं, जिससे सिरमें गूँथे पुष्प इस प्रकार उत्तम

भूमिपर वर्षा-सी करते गिर रहे थे, मानो मेघसे फुहारें पड़ रही हों। मुख रोलीके रंगसे शोभित था और माँगमें सिन्दूर भरा था। (आनन्दके मारे) वक्षःस्थलसे उड़ते हुए अंचलको वे जान नहीं पाती थीं, उनकी साड़ियाँ सुन्दर सुहावने रंगोंवाली थीं। वे भलीभाँति अपने-अपने मेलकी सखियों-के साथ इस प्रकार निकलीं, मानो लालमुनियाँ पक्षियोंकी पंक्ति पिंजड़ेको तोड़कर चली जा रही हो। दस-पाँच सखियाँ मिलकर (व्रजराजके) गुण-के मङ्गल-गीत इस प्रकार गा रही थीं मानो प्रातःकाल होनेपर सूर्यका दर्शन करके कमलकी कलियाँ खिल गयी हों। अत्यन्त आनन्दमें भरी वे (गोपियाँ) अपने स्वामियोंसे पहिले ही (नन्दभवन) जा पहुँचीं। (व्रजरानीने) उन्हें भवनके भीतर (प्रसूतिगृहमें) बुला लिया, सब शिशुके पैरों पड़ीं। कोई (शिशुका) मुख खोलकर देखकर सच्चा आशीर्वाद देने लगी कि—'यशोदानन्दन चिरजीवी हो! तुमने हम सबको पूर्णकाम कर दिया। (हमारी सब इच्छाएँ पूर्ण कर दीं।) यह दिन धन्य है, यह रात्रि धन्य है, यह प्रहर और उसकी यह घड़ी भी धन्य-धन्य है। सौभाग्य और सुहागसे पूर्ण श्रीव्रजरानीकी कोख अत्यन्त धन्य-धन्य है, जिसने ऐसे पुत्रको उत्पन्न किया। (नन्दरानी तो) सब सुखके फल फलित हुईं, उन्होंने सारे परिवारकी (वंशधरको जन्म देकर) स्थिर स्थापना कर दी, मनकी वेदनाको उन्होंने दूर कर दिया। गोपियोंने फिर बालकोंको बुलाकर गायोंको मँगाया और गुंजा (घुँघची) की मालासे तथा वनकी धातुओं (गेरू, रामरज आदि) को घिसकर उनके अङ्गोंपर चित्र बनाकर उन्हें सजाया। सब गोप मस्तकपर दही और मक्खनसे भरे बड़े-बड़े मटके लिये, नवीन (अपने बनाये) गीत गाते, डफ, झाँझ, मृदंग आदि बजाते नन्दभवन पहुँचे। वे एकत्र होकर नाचते थे, परस्पर विनोद करते थे, (परस्पर) हल्दी मिला दही छिड़क रहे थे, मानो भाद्रपदके महीनेके मेघ वर्षा कर रहे हों, वहाँ घी और दूधकी नदी बहने लगी। जब जहाँ-जहाँ उनका चित्त चाहता था, वहीं-वहीं एकत्र होकर वे क्रीडा (नृत्य, गान तथा दधिकाँदो) करने लगते थे। सभी गोप आनन्दमग्न-से किसीकी भी

परवा नहीं करते थे। कोई दौड़कर श्रीनन्दजीके पास जाकर बार-बार उनके पैरों पड़ता है, कोई अपने-आपमें ही आनन्दपूर्ण होकर स्वतः हँस रहा है, कोई अपने आभूषण उतार लेता है और उसे (किसीको भी उपहार) देते कोई संकोच नहीं करता और कोई सबके मस्तकपर दही, गोरोचन तथा दूर्वा डाल रहा है। तब श्रीनन्दजी स्नान करके हाथमें कुश लेकर खड़े हुए, नान्दीमुख श्राद्ध करके, पितरोंकी पूजा करवाकर (उनके) हृदयका (हमारा वंशधर आगे नहीं रहा) शोक दूर कर दिया। उत्तम चन्दन घिसवाकर मँगाया और उससे ब्राह्मणोंको तिलक लगाया। ब्राह्मणों तथा गुरुजनोंको वस्त्राभूषण पहिनाकर सबके पैर पड़े (सबको चरणस्पर्श करके प्रणाम किया)। वहाँ बछड़ेवाली सुपुष्ट तरुणी गायें इतनी मँगायीं जो गिनी नहीं जा सकती थीं, वे गायें यमुना-किनारे चरा करती थीं और (उन दिनों) दुगुने दूध-चढ़ी (दुगुना दूध दे रही) थीं। उनके खुर ताँबेसे, पीठ चाँदीसे तथा सींगें सोनेसे मढ़ी (आच्छादित) थीं। वे (गायें) अनेकों ब्राह्मणोंको दान कर दीं। हर्षित होकर ब्राह्मणोंने आशीर्वाद दिया। फिर हँसते हुए सब इष्ट-मित्र तथा बन्धु-बान्धवोंको बुला लिया और कस्तूरी-कपूर-मिला चन्दन घिसकर उनके मस्तकपर तिलक लगाया, उनके गलेमें मणियोंकी मालाएँ पहिनाकर अनेक रंगोंके वस्त्र उन्हें भेंट किये। उपहार देकर, सम्मान करके, वस्त्राभूषण पहिनाकर उन्हें पूर्णतः संतुष्ट कर दिया। वंदीजन, मागध, सूत आदिकी भीड़ आँगनमें और भवनमें भरी हुई थी। श्रीनन्दजी उनमेंसे किसीको भूले नहीं। (सबको दान-मानसे सत्कृत किया।) वे लोग नाम ले-लेकर यशोगान कर रहे थे। मानो आषाढ़ महीनेमें वर्षा प्रारम्भ होनेपर मेढक और मयूर ध्वनि करते हों। श्रीनन्दरायजी ऐसे द्रवित हुए कि जिसने जो कुछ माँगा, उसे वही दिया। फिर सुन्दर रंगोंवाली चुनी हुई साड़ियोंकी और ढेरी मँगायी और वधुओं (सौभाग्यवती स्त्रियों) को बुलाकर जो जिसके योग्य थी, उसे वह दी। अपनी-अपनी रुचिके अनुसार आशीर्वाद देती हुई वे (नन्दभवनसे) निकलीं, अत्यन्त आनन्दभरी वे गोपनारियाँ अपने-अपने

घर लौटीं । नगरमें प्रत्येक घरमें भेरी, मृदंग, पटह (डफ) आदि बाजे बजने लगे । श्रेष्ठ बंदनवारें बाँधी गयीं और सोनेके कलश सजाये गये । उसी दिनसे उन व्रजके लोगोंको सुख और सम्पत्ति कभी छोड़ती नहीं । सूरदासजी कहते हैं—जो श्रीहरिके चरणोंका भजन करते हैं, उन सबकी यही गति सुनी गयी है (वे नित्य सुख-सम्पत्तिसमन्वित रहते हैं)।

राग धनाश्री

[९]

आजु नंद के द्वारैं भीर ।
इक आवत, इक जात बिदा ह्वै, इक ठाढ़े मंदिर कैं तीर ॥
कोउ केसरि कौ तिलक बनावति, कोउ पहिरति कंचुकी सरीर ।
एकनि कौं गो-दान समर्पत, एकनि कौं पहिरावत चीर ॥
एकनि कौं भूषन पाटंबर, एकनि कौं जु देत नग हीर ।
एकनि कौं पुहुपनि की माला, एकनि कौं चंदन घसि नीर ॥
एकनि माथैं दूब-रोचना, एकनि कौं बोधति दै धीर ।
सूरदास धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य-सरीर ॥

आज नन्दजीके द्वारपर भीड़ हो रही है। कोई आ रहा है, कोई विदा होकर जा रहा है और कोई भवनके समीप खड़ा है । कोई गोपिका केशरका तिलक लगा रही है, कोई शरीरमें कंचुकी पहिन रही है । (श्रीनन्दजी) किसीको गोदान दे रहे हैं, किसीको वस्त्र पहिना रहे हैं, किसीको आभूषण और पीताम्बर देते हैं, किसीको मणियाँ और हीरे देते हैं, किसीको पुष्पोंकी माला पहिनाते हैं, किसीको (स्वयं) जलमें घिसकर चन्दन लगाते हैं, किसीके मस्तकपर दूर्वा और गोरोचन डालते हैं और किसीको धैर्य दिलाकर (स्थिर होकर कार्य करनेके लिये) समझाते हैं । सूरदासजी कहते हैं कि ये श्यामसुन्दरके प्रेमी (गोप-गोपी) धन्य हैं और पवित्र देहधारिणी माता यशोदा धन्य हैं ।

राग गौरी

[१०]

बहुत नारि सुहाग-सुंदरि और घोष कुमारि।
सजन-प्रीतम-नाम लै-लै, दै परसपर गारि॥
अनँद अतिसै भयौ घर-घर, नृत्य ठावँहिं ठावँ।
नंद-द्वारैं भैंट लै-लै उमह्यौ गोकुल गावँ॥
चौक चंदन लीपि कै, धरि आरती संजोइ।
कहति घोष-कुमारि, ऐसौ अनँद जौ नित होइ!
द्वार सथिया देति स्यामा, सात सींक बनाइ।
नव किसोरी मुदित ह्वै-ह्वै गहति जसुदा-पाइ॥
करि अलिंगन गोपिका, पहिरैं अभूषन-चीर!
गाइ-बच्छ सँवारि ल्याए, भई ग्वारनि भीर॥
मुदित मंगल सहित लीला करैं गोपी-ग्वाल।
हरद, अच्छत, दूब, दधि लै, तिलक करैं ब्रजबाल॥
एक एक न गनत काहूँ, इक खिलावत गाइ।
एक हेरी देहिं, गावहिं, एक भैंटहिं धाइ॥
एक बिरध-किसोर-बालक, एक जोबन जोग।
कृष्न-जन्म सु प्रेम-सागर, क्रीड़ैं सब ब्रज-लोग॥
प्रभु मुकुंद कैं हेत नूतन होहिं घोष-विलास।
देखि ब्रज की संपदा कौं, फूलै सूरजदास॥

बहुत-सी सौभाग्यवती सुन्दरी स्त्रियाँ और गोपकुमारियाँ एक दूसरीके प्यारे पतिका नाम ले-लेकर परस्पर गाली गा रही हैं। (गोकुलके) घर-घरमें अतिशय आनन्द हो रहा है। स्थान-स्थानपर नृत्य हो रहा है। पूरा गोकुल नगर ही भेंट ले-लेकर श्रीनन्दजीके द्वारपर उमड़ पड़ा है। आँगनको चन्दनसे लीपकर आरती सजाकर रक्खी गयी है। गोप-

कुमारियाँ कहती हैं—'यदि ऐसा आनन्द नित्य हुआ करे······' युवतियाँ सात सींकोंसे सजाकर द्वारपर स्वस्तिक चिह्न बना रही हैं। नवकिशोरियाँ आनन्दित होकर बार-बार श्रीयशोदाजीके पैर पकड़ लेती हैं। गोपिकाओंने (श्रीयशोदाजीको) आलिङ्गन करके (उनसे उपहारमें मिले) आभूषण तथा वस्त्र पहिन लिये। (दूसरी ओर) गायों तथा बछड़ोंको सजाकर ले आये। गोपोंकी भीड़ एकत्र हो गयी। सभी गोपियाँ और गोप प्रमुदित हैं, अनेक प्रकारकी मङ्गल-क्रीडा कर रहे हैं। गोपियाँ एक-दूसरीको हल्दी, अक्षत, दूर्वा और दही लेकर तिलक लगा रही हैं। (आज) कोई किसीकी भी परवा नहीं करता है, कोई गायोंको खिला रहे हैं, कोई 'हेरी-हेरी' कहकर पुकारते हैं, कोई गाते हैं, कोई दौड़कर दूसरेको भेंट रहे हैं। क्या वृद्ध, क्या युवक, क्या बालक और क्या तरुण—सभी व्रजके लोग श्रीकृष्णजन्मसे प्रेमसागरमें ही मग्न क्रीडा कर रहे हैं। प्रभु मुकुन्दके जन्मोपलक्षमें गोपोंमें होनेवाले नये-नये क्रीडा-कौतुक हो रहे हैं। व्रजकी यह सम्पत्ति देखकर सूरदास प्रफुल्लित हो रहे हैं।

राग धनाश्री

[११]

आजु बधायौ नंदराइ कैं, गावहु मंगलचार।
आईं मंगल-कलस साजि कै, दधि फल नूतन-डार॥
उर मेले नंदराइ कैं, गोप-सखनि मिलि हार।
मागध-बंदी-सूत अति करत कुतूहल बार॥
आए पूरन आस कै, सब मिलि देत असीस।
नंदराइ कौ लाड़िलौ, जीवै कोटि बरीस॥
तब व्रज-लोगनि नंद जू, दीने बसन बनाइ।
ऐसी सोभा देख कै, सूरदास बलि जाइ॥

आज श्रीनन्दरायजीके यहाँ मङ्गल-बधाई बज रही है, सब मङ्गलगान करो। (गोपियाँ) मङ्गल-कलश सजाकर दही, फल तथा (आमकी)

नवीन डालियाँ (टहनियाँ) लिये आयीं। गोप-सखाओंने एकत्र होकर श्रीनन्दरायजीके गलेमें पुष्पोंकी माला पहिनायी। सूत, मागध, बंदीजन बार-बार अनेक प्रकारके विनोद कर रहे हैं। जो भी आये, व्रजराजने उनकी आशाएँ पूर्ण कीं। सभी मिलकर आशीर्वाद दे रहे हैं कि 'श्री-नन्दरायजीके लाड़िले लाल करोड़ों वर्ष जीवें।' श्रीनन्दजीने सभी व्रजके लोगोंको सजाकर वस्त्र दिये। ऐसी शोभाको देखकर सूरदास अपनेको ही न्योछावर करता है।

राग गौरी

[१२]

धनि-धनि नंद-जसोमति, धनि जग पावन रे।
धनि हरि लियौ अवतार, सु धनि दिन आवन रे॥
दसएँ मास भयौ पूत, पुनीत सुहावन रे।
संख-चक्र-गदा-पद्म, चतुरभुज भावन रे॥
बनि ब्रज-सुंदरि चलीं, सु गाइ बधावन रे।
कनक-थार रोचन-दधि, तिलक बनावन रे॥
नंद-घरहिं चलि गईं, महरि जहँ पावन रे।
पाइनि परि सब बधू, महरि बैठावन रे॥
जसुमति धनि यह कोखि, जहाँ रहे बावन रे।
भलैं सु दिन भयौ पूत, अमर अजरावन रे॥
जुग-जुग जीवहु कान्ह, सबनि मन भावन रे।
गोकुल-हाट-बजार करत जु लुटावन रे॥
घर-घर बजै निसान, सु नगर सुहावन रे।
अमर-नगर उतसाह, अप्सरा-गावन रे॥
ब्रह्म लियौ अवतार, दुष्ट के दावन रे।
दान सबै जन देत, बरषि जनु सावन रे॥

मागध, सूत, भाँट, धन लेत जुरावन रे ।
चोवा-चंदन-अबिर, गलिनि छिरकावन रे ॥
ब्रह्मादिक, सनकादिक, गगन भरावन रे ।
कस्यप रिषि सुर-तात, सु लगन गनावन रे ॥
तीनि भुवन आनंद, कंस-डरपावन रे ।
सूरदास प्रभु जनमे, भक्त-हुलसावन रे ॥

श्रीनन्दजी धन्य हैं, माता यशोदा धन्य हैं, पवित्र जगत् धन्य है (जिसमें श्रीहरि प्रकट हुए) ये दम्पति परम धन्य हैं। श्रीहरिका अवतार लेना धन्य है,(जिस दिन वे आये) वह उनके आनेका दिन धन्य है । (श्रीयशोदाजीको) दसवें महीने पवित्र और सुन्दर पुत्र हुआ । शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये चतुर्भुजरूप (प्रकट होते समय) बड़ा ही प्रिय था । व्रजकी सुन्दरियाँ शृंगार करके मङ्गल बधाई गाने चलीं । स्वर्णके थालोंमें तिलक करनेके लिये वे दही और गोरोचन लिये थीं । वे उस नन्दभवनमें गयीं, जहाँ परम पवित्र श्रीव्रजरानी थीं । सब गोपवधुएँ उनके पैरों पड़ीं, व्रजरानीने उन्हें बैठाया। (वे बोलीं) 'यशोदाजी ! तुम्हारी यह कोख धन्य है, जहाँ साक्षात् भगवान्ने निवास किया। तुम्हारा यह देवताओंको भी उज्ज्वल(अभय) करनेवाला पुत्र बड़े उत्तम दिन उत्पन्न हुआ है । यह सभीके मनको प्रिय लगनेवाला कन्हाई युग-युग जीवे ।' गोकुलके मार्गोंमें, बाजारोंमें सब लोग न्योछावर लुटा रहे हैं । घर-घर बाजे बज रहे हैं, पूरा नगर सुन्दर सुहावना हो रहा है । देवलोकमें भी बड़ा उत्साह है, अप्सराएँ गान कर रही हैं कि दुष्टोंका दलन करनेवाले साक्षात् परमब्रह्मने अवतार धारण कर लिया। जैसे श्रावणमें वर्षा हो रही हो, इस प्रकार सभी लोग दान कर रहे हैं । मागध, सूत, भाट लोग धन एकत्र कर रहे हैं । गलियोंमें चोवा, चन्दन और अबीर छिड़की जा रही है । आकाश ब्रह्मादि देवताओं तथा सनकादि ऋषियोंसे भर गया है । देवताओंके पिता महर्षि कश्यप उत्तम लग्नकी गणना कर रहे (जन्म-फल बतला रहे) हैं । तीनों लोकोंमें आनन्द हो रहा

है, किंतु कंसके लिये भयका कारण हो गया है। सूरदासजी कहते हैं— भक्तोंको उल्लसित करनेवाले मेरे प्रभुने अवतार लिया है।

राग कल्यान

[१३]

सोभा-सिंधु न अंत रही री।
नंद-भवन भरि पूरि उमँगि चलि, ब्रज की बीथिनि फिरति बही री॥
देखी जाइ आजु गोकुल मैं, घर-घर बेंचति फिरति दही री।
कहँ लगि कहौं बनाइ बहुत बिधि, कहत न मुख सहसहुँ निबही री॥
जसुमति-उदर-अगाध-उदधि तैं, उपजी ऐसी सबनि कही री।
सूरस्याम प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री॥

आज शोभाके समुद्रका पार नहीं रहा। नन्दभवनमें वह पूर्णतः भरकर अब व्रजकी गलियोंमें उमड़ता बहता जा रहा है। आज गोकुलमें जाकर देखा कि (शोभाकी अधिदेवता लक्ष्मी ही) घर-घर दही बेचती घूम रही है। अनेक प्रकारसे बनाकर कहाँतक कहूँ, सहस्रों मुखोंसे वर्णन करनेपर भी पार नहीं मिलता है। सूरदासजी कहते हैं कि सभीने इसी प्रकार कहा कि श्रीयशोदाजीकी कोखरूपी अथाह सागरसे मेरे प्रभुरूपी इन्द्रनीलमणि उत्पन्न हुई है, जिसे व्रजयुवतियोंने हृदयसे लगाकर पकड़ रक्खा है (हृदयमें धारण कर लिया है)।

राग काफी

[१४]

आजु हो निसान बाजै, नंद जू महर के।
आनँद-मगन नर गोकुल सहर के॥
आनंद भरी जसोदा उमँगि अंग न माति, आनंदित भईं गोपी गावति चहर के।
दूब-दधि-रोचन कनक-थार लै-लै चली, मानौ इंद्र-बधू जुरीं पाँतिनि बहर के॥

आनंदित ग्वाल-बाल, करत बिनोद ख्याल, भुज भरि-भरि धरि अंकम महर के।

आनंद-मगन धेनु स्रवैं थनु पय-फेनु, उमँग्यौ जमुन-जल उछलि लहर के॥

अंकुरित तरु-पात, उकठि रहे जे गात, बन-बेली प्रफुलित कलिनि कहर के।

आनंदित बिप्र, सूत, मागध, जाचक-गन, उमँगि असीस देत सब हित हरि के॥

आनँद-मगन सब अमर गगन छाए पुहुप बिमान चढ़े पहर पहर के।

सूरदास प्रभु आइ गोकुल प्रगट भए, संतनि हरष, दुष्ट-जन-मन धरके॥

आज व्रजराज श्रीनन्दजीके घर मङ्गल वाद्य बज रहा है। गोकुल नगरके सभी लोग आनन्दमग्न हैं। आनन्दपूर्ण श्रीयशोदाजी उमंगके मारे अपने आपमें समाती नहीं हैं। गोपियाँ आनन्दसे उल्लसित होकर मङ्गलगान कर रही हैं। सोनेके थालोंमें दूर्वा, दही तथा गोरोचन लिये वे इस प्रकार चली जा रही हैं, मानो इन्द्रवधूटियोंकी पंक्ति एकत्र होकर बाहर निकल पड़ी हो। ग्वालबाल आनन्दित होकर अनेक विनोद-विचार करते हैं और बार-बार श्रीव्रजराजको दोनों भुजाओंमें भरकर हृदयसे लगा लेते हैं। गायें आनन्दमग्न होकर थनोंसे फेनयुक्त दूध गिरा रही हैं। उमंगसे यमुनाजीके जलमें ऊँची लहरें उछल रही हैं। जो वृक्ष पूरे सूख गये थे, उनमें भी पत्ते अंकुरित हो गये हैं। वनकी लताएँ प्रफुल्लित होकर कलियोंकी राशि बन गयी हैं। ब्राह्मण, सूत, मागध तथा याचकवृन्द आनन्दित होकर सभी उमंगपूर्वक श्रीहरिके हितके लिये आशीर्वाद दे रहे हैं। आनन्दमग्न सभी देवता वस्त्राभूषण पहिनकर पुष्पसज्जित विमानोंपर बैठे आकाशमें छाये (फैले) हुए हैं। सूरदासके स्वामी गोकुलमें प्रकट हो गये हैं, इससे सत्पुरुषोंको प्रसन्नता हो रही है और दुष्टोंके हृदय (भयसे) धड़कने लगे हैं।

[१५]

(माई) आजु हो बधायौ बाजै नंद गोप-राइ कै।
जदुकुल-जादौराइ जनमे हैं आइ के॥
आनंदित गोपी-ग्वाल, नाचैं कर दै-दै ताल, अति अहलाद भयौ
जसुमति माइ कै।
सिर पर दूब धरि, बैठे नंद सभा-मधि, द्विजनि कौं गाइ दीनी
बहुत मँगाइ कै॥
कनक कौ माट लाइ, हरद-दही मिलाइ, छिरकैं परसपर छल-
बल धाइ कै।
आठैं कृष्न पच्छ भादौं, महर कैं दधि कादौं, मोतिनि बँधायौ
वार महल मैं जाइ कै॥
ढाढ़ी औ ढाढ़िनि गावैं, ठाढ़े हुरके बजावैं, हरषि असीस देत
मस्तक नवाइ कै।
जोइ-जोइ माँग्यौ जिनि, सोइ-सोइ पायो तिनि, दीजै सूरदास
दर्स भक्तनि बुलाइकै॥

(सखी!) आज गोपराज श्रीनन्दजीके यहाँ बधाईके बाजे बज रहे हैं। श्रीयदुनाथ यदुकुलमें आकर प्रकट हो गये हैं। गोपियाँ और गोप आनन्दित होकर ताल दे-देकर नृत्य कर रहे हैं। माता यशोदाको अत्यन्त आह्लाद हुआ है। श्रीनन्दजी मस्तकपर दूर्वा धारण करके गोपोंकी सभामें बैठे हैं, उन्होंने बहुत-सी गायें मँगाकर ब्राह्मणोंको दान दीं। (गोप) सोनेके बड़े मटकोंमें हल्दी और दही मिलाकर ले आये और दौड़-दौड़कर एक दूसरेपर छिड़क रहे हैं। भाद्रपद महीनेके कृष्णपक्षकी अष्टमी है, आज व्रजराजके यहाँ दधिकाँदो हो रहा है, अपने भवनमें जाकर उन्होंने मोतियोंका बंदनवार बँधवाया है। ढाढ़ी और ढाढ़िनें मङ्गल गा रही हैं, वे खड़े-खड़े सिंगे बजा रहे हैं और हर्षित होकर मस्तक झुकाकर आशीर्वाद दे रहे हैं।

जिस-जिसने जो कुछ माँगा, उसने वही-वही पाया। सूरदासजी कहते हैं—प्रभो! भक्तोंको बुलाकर उन्हें भी दर्शन दे दीजिये।

राग जैतश्री

[१६]

आजु बधाई नंद कैं माई। ब्रज की नारि सकल जुरि आईं॥
सुंदर नंद महर कैं मंदिर। प्रगट्यौ पूत सकल सुख-कंदर॥
जसुमति-ढोटा ब्रज की सोभा। देखि सखी, कछु औरै गोभा॥
लछिमी-सी जहँ मालिनि बोलै। बंदन-माला बाँधत डोलै॥
द्वार बुहारति फिरति अष्ट सिधि। कौरनि सथिया चीतति नवनिधि॥
गृह-गृह तैं गोपी गवनीं जब। रंग-गलिनि बिच भीर भई तब॥
सुबरन-थार रहे हाथनि लसि। कमलनि चढ़ि आए मानौ ससि॥
उमँगी प्रेम-नदी-छबि पावैं। नंद-सदन-सागर कौं धावैं॥
कंचन-कलस जगमगैं नग के। भागे सकल अमंगल जग के॥
डोलत ग्वाल मनौ रन जीते। भए सबनि के मन के चीते॥
अति आनंद नंद रस भीने। परबत सात रतन के दीने॥
कामधेनु तैं नैंकु न हीनी। द्वै लख धेनु द्विजनि कौं दीनी॥
नंद-पौरि जे जाँचन आए। बहुरौ फिरि जाचक न कहाए॥
घर के ठाकुर कैं सुत जायौ। सूरदास तब सब सुख पायौ॥

सखी! आज श्रीनन्दजीके यहाँ बधाई बज रही है। व्रजकी सभी नारियाँ आकर एकत्र हो गयी हैं। व्रजराज श्रीनन्दजीके सुन्दर भवनमें सभी सुखोंका निधान पुत्र प्रकट हुआ है। श्रीयशोदाजीका पुत्र तो व्रजकी शोभा है। सखी, देखो! उसकी कान्ति ही कुछ और (अलौकिक) ही है। जहाँ लक्ष्मीजी-सी देवियाँ मालिनि कहलाती हैं और वन्दनवारमें मालाएँ बाँधती घूमती हैं। आठों सिद्धियाँ द्वारपर झाड़ू लगाती हैं। नवों निधियाँ द्वार-भित्तियोंपर स्वस्तिकके चित्र बनाती हैं। जब गोपियाँ घर-घरसे चलीं, तब अनुरागमयी वीथियोंमें भीड़

हो गयी। उनके करोंमें सोनेके थाल ऐसे शोभा दे रहे थे मानो अनेकों चन्द्रमा कमलोंपर बैठ-बैठकर आ गये हों। (ये गोपियाँ) प्रेमसे उमड़ी नदियोंके समान शोभा दे रही हैं, जो नन्दभवनरूपी समुद्रकी ओर दौड़ती जा रही हैं। भवनोंपर मणिजटित स्वर्णकलश जगमग कर रहे हैं। आज विश्वके समस्त अमङ्गल भाग गये। गोप इस प्रकार घूम रहे हैं, मानो युद्धमें विजयी हो गये हों, सबकी मनोऽभिलाषा आज पूरी हो गयी है। श्रीनन्दजीने अत्यन्त आनन्द-रससे आर्द्र होकर रत्नोंके सात पर्वत दान किये। जो गायें कामधेनुसे तनिक भी घटकर नहीं थीं, ऐसी दो लाख गायें ब्राह्मणोंको दान कीं। जो आज नन्दजीके द्वारपर माँगने आ गये, फिर कभी वे याचक नहीं कहे गये (उनसे इतना धन मिला कि फिर कभी माँगना नहीं पड़ा)। सूरदासजी कहते हैं—मेरे घरके (निजी) स्वामी (श्रीनन्दजी) के जब पुत्र उत्पन्न हुआ, तब मैंने सब सुख पा लिया।

राग बिलावल

[१७]

आजु गृह नंद महर कैं बधाइ।
प्रात समय मोहन मुख निरखत, कोटि चंद-छबि पाइ॥
मिलि ब्रज-नागरि मंगल गावतिं, नंद-भवन मैं आइ।
देतिं असीस, जियौ जसुदा-सुत कोटिनि बरष कन्हाइ॥
अति आनंद बढ़्यौ गोकुल मैं, उपमा कही न जाइ।
सूरदास धनि नँद की घरनी, देखत नैन सिराइ॥

आज व्रजराज श्रीनन्दजीके यहाँ बधाई बज रही है। करोड़ों चन्द्रमाके समान सुशोभित मोहनका मुख प्रातःकाल ही उन्होंने देखा है। व्रजकी नागरिकाएँ एकत्र होकर नन्दभवनमें आकर मङ्गलगान कर रही हैं। वे आशीर्वाद देती हैं—'यशोदा रानीका पुत्र कन्हाई करोड़ों वर्ष जीवे।' गोकुलमें अत्यन्त आनन्द उमड़ा है, उसकी उपमाका वर्णन नहीं किया जा सकता। सूरदासजी कहते हैं कि नन्दपत्नी धन्य हैं, उनके दर्शन करके ही नेत्र शीतल हो जाते हैं।

राग जैजैवंती

[१८]

(माई) आजु तौ बधाइ बाजै मंदिर महर के ।
फूले फिरैं गोपी-ग्वाल ठहर ठहर के ॥
फूली फिरैं धेनु धाम, फूली गोपी अँग अँग ।
फूले फरे तरवर आनँद लहर के ॥
फूले बंदीजन द्वारे, फूले फूले बंदवारे ।
फूले जहाँ जोइ सोइ गोकुल सहर के ॥
फूलैं फिरैं जादौकुल आनँद समूल मूल ।
अंकुरित पुन्य फूले पाछिले पहर के ॥
उमँगे जमुन-जल, प्रफुलित कुंज-पुंज ।
गरजत कारे भारे जूथ जलधर के ॥
नृत्यत मदन फूले, फूली रति अँग अँग ।
मन के मनोज फूले हलधर वर के ॥
फूले द्विज-संत-बेद, मिटि गयौ कंस-खेद ।
गावत बधाइ सूर भीतर बहर के ॥
फूली है जसोदा रानी, सुत जायौ साङ्गपानी ।
भूपति उदार फूले भाग फरे घर के ॥

(सखी !) आज तो व्रजराजके भवनमें बधाई बज रही है । गोपियाँ और गोप उत्फुल्ल हुए रुक-रुककर (आनन्दक्रीडा करते) घूम रहे हैं । गायें गोष्ठोंमें आनन्दमग्न घूम रही हैं, गोपियोंके अङ्ग-अङ्ग पुलकित हैं । आनन्दोल्लाससे सभी वृक्ष फूल उठे और फलित हो गये हैं । द्वारपर वन्दीजन प्रफुल्लित हैं, प्रफुल्लित फूलोंके वन्दनवार बाँधे गये हैं, आज गोकुल-नगरमें जो जहाँ है, वहीं प्रफुल्लित हो रहा है । यदुकुलके लोग आनन्दसे उल्लसित घूम रहे हैं, उनके पिछले जन्मोंके पुण्य आज अपने मूलके साथ

अङ्कुरित होकर फूल उठे हैं (उनके जन्म-जन्मान्तरके पुण्योंका फल उदय हो गया है) । यमुनाका जल उमंगमें उमड़ रहा है, कुञ्जोंके समूह प्रफुल्लित हो गये हैं, मेघोंके बड़े-बड़े काले-काले समूह गर्जना कर रहे हैं । कामदेव उल्लसित होकर नाच रहा है, रतिके अङ्ग-अङ्ग उल्लसित हैं (कि अब मेरे पति अनङ्गको शरीर प्राप्त होगा । वे श्रीकृष्णचन्द्रके पुत्र बन सकेंगे) । बड़े भाई श्रीबलरामजीके चित्तकी सभी अभिलाषाएँ उत्फुल्ल हो गयी (पूर्ण हो गयी) हैं। ब्राह्मण, सत्पुरुष और वेद उल्लसित हैं, उनका कंससे होनेवाला भय दूर हो गया है । सूरदासजी कहते हैं कि सभी (घरोंसे) बाहर निकलकर बधाई गा रहे हैं । श्रीयशोदा रानी प्रफुल्लित हो रही हैं, साक्षात् शार्ङ्गपाणि श्रीहरि उनके पुत्र होकर प्रकट हुए हैं । उदार व्रजराज प्रफुल्लित हैं, आज उनके भवनका सौभाग्य फलशाली हो गया (भवनमें पुत्र आ गया) है।

राग जैतश्री

[१९]

कनक-रतन-मनि पालनौ, गढ़्यौ काम सुतहार ।
बिबिध खिलौना भाँति के (बहु) गज-मुक्ता चहुँधार ॥
जननि उबटि न्हवाइ कै (सिसु) क्रम सौं लीन्हे गोद ।
पौढ़ाए पट पालनैं (हँसि) निरखि जननि-मन-मोद ॥
अति कोमल दिन सात के (हो) अधर चरन कर लाल ।
सूर स्याम छबि अरुनता (हो) निरखि हरष ब्रज-बाल ॥

बढ़ईने रत्न तथा मणियोंसे जड़ा पलना बड़ी कारीगरी करके बनाया है । उसमें अनेक भाँतिके खिलौने लटक रहे हैं और चारों ओर गजमुक्ताकी लड़ियाँ लगी हैं । माताने उबटन लगाकर,स्नान कराके धीरेसे शिशुको गोदमें उठाया और पलनेमें सुलाकर वस्त्र ऊपर डाला, फिर हँसकर (पुत्रको) देखकर माताके मनमें बड़ा आनन्द हुआ । अभी अत्यन्त कोमल हैं, केवल सात दिनके हैं, अधर, चरन तथा कर लाल-लाल हैं, सूरदासजी कहते हैं— श्यामसुन्दरकी अरुणिम छटा देखकर व्रजकी नारियाँ हर्षित हो रही हैं ।

राग धनाश्री

[२०]

जसोदा हरि पालनैं झुलावै।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ-सोइ कछु गावै॥
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया, काहैं न आनि सुवावै।
तू काहैं नहिं बेगहिं आवै, तोकौं कान्ह बुलावै॥
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि-करि सैन बतावै॥
इहिं अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरैं गावै।
जो सुख सूर अमर-मुनि दुरलभ, सो नँद-भामिनि पावै॥

श्रीयशोदाजी श्यामको पलनेमें झुला रही हैं। कभी झुलाती हैं, कभी प्यार करके पुचकारती हैं और चाहे जो कुछ गाती जा रही हैं। (वे गाते हुए कहती हैं—) 'निद्रा! तू मेरे लालके पास आ। तू क्यों आकर इसे सुलाती नहीं है। तू झटपट क्यों नहीं आती? तुझे कन्हाई बुला रहा है।' श्यामसुन्दर कभी पलकें बंद कर लेते हैं, कभी अधर फड़काने लगते हैं। उन्हें सोते समझकर माता चुप हो रहती हैं और (दूसरी गोपियोंको भी) संकेत करके समझाती हैं (कि यह सो रहा है, तुम सब भी चुप रहो)। इसी बीचमें श्याम आकुल होकर जग जाते हैं, श्रीयशोदाजी फिर मधुर स्वरसे गाने लगती हैं। सूरदासजी कहते हैं कि जो सुख देवताओं तथा मुनियोंके लिये भी दुर्लभ है, वही (श्यामको बालरूपमें पाकर लालन-पालन तथा प्यार करनेका) सुख श्रीनन्दपत्नी प्राप्त कर रही हैं।

राग कान्हरौ

[२१]

पलना स्याम झुलावति जननी।
अति अनुराग पुरस्सर गावति, प्रफुलित मगन होति नँद-घरनी॥
उमँगि-उमँगि प्रभु भुजा पसारत, हरषि जसोमति अंकम भरनी।
सूरदास प्रभु मुदित जसोदा, पूरन भई पुरातन करनी॥

माता श्यामसुन्दरको पलनेमें झुला रही हैं। अत्यन्त प्रेमवश वे नन्दपत्नी गाती जाती हैं, वे आनन्दसे प्रफुल्लित हैं, मन-ही-मन प्रसन्न हो रही हैं। बार-बार उल्लसित होकर प्रभु भुजाएँ फैलाते हैं और श्रीयशोदाजी हर्षित होकर उन्हें गोदमें उठा लेती हैं। सूरदासजी कहते हैं—श्रीयशोदाजी आनन्दित हो रही हैं, उनके पूर्वकृत पुण्यफल पूर्णतः सफल हो गये हैं।

राग बिलावल

[२२]

पालनैं गोपाल झुलावैं।
सुर-मुनि-देव कोटि तैंतीसौ, कौतुक अंबर छावैं॥
जाकौ अंत न ब्रह्मा जानै, सिव-सनकादि न पावैं।
सो अब देखौ नंद-जसोदा, हरषि-हरषि हलरावैं॥
हुलसत, हँसत, करत किलकारी, मन अभिलाष बढ़ावैं।
सूर स्याम भक्तनि हित कारन, नाना भेष बनावैं॥

(श्रीयशोदाजी) गोपालको पलनेमें झुलाती हैं। गन्धर्वादि उपदेवता, मुनिगण तथा तैंतीसों करोड़ देवता यह विनोद देखने आकाशमें छाये रहते हैं। जिसकी महिमाका पार न ब्रह्माजी जानते, न शंकरजी या सनकादि ऋषि पाते, उसीको अब देखो तो ये नन्दजी और यशोदाजी बार-बार हर्षित होकर झुला रही हैं। (श्यामसुन्दर) उल्लसित होते हैं, हँसते हैं और किलकारी मारते हैं, इस प्रकार (माता-पिताके) हृदयकी अभिलाषा (वात्सल्य-प्रेम) को बढ़ाते हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर तो भक्तोंके हितैषी हैं, वे भक्तोंके लिये नाना प्रकारके रूप बनाया करते हैं।

राग गौरी

[२३]

हालरौ हलरावै माता। बलि-बलि जाउँ घोष-सुख-दाता॥
जसुमति अपनौ पुन्य बिचारै। बार-बार सिसु बदन निहारै॥
अँग फरकाइ अलप मुसकाने। या छबि की उपमा को जाने॥

हलरावति गावति कहि प्यारे। बाल-दसा के कौतुक भारे॥
महरि निरखि मुख हिय हुलसानी। सूरदास प्रभु सारँगपानी॥

माता पलना झुलाती है (और कहती है—) 'व्रजको आनन्दित करनेवाले लाला! तुझपर मैं बार-बार बलिहारी जाती हूँ। माता यशोदा अपने पुण्योंका विचार करती हैं (अहो, कितने पुण्य हैं मेरे कि मैंने यह पुत्र पाया।) और बार-बार बालकका मुख देखती हैं। श्याम ओठ फड़काकर तनिक हँस पड़े, इस शोभाकी उपमा भला कौन जान सकता है। माता झुलाती है और 'प्यारे लाल!' कह-कहकर गाती है। श्यामसुन्दरकी शिशु अवस्थाकी लीलाएँ अपार हैं। व्रजरानी उनका श्रीमुख देखकर हृदयमें उल्लसित हो रही हैं। सूरदासजी कहते हैं—ये मेरे स्वामी (जो शिशु बने हैं) साक्षात् शार्ङ्गपाणि नारायण हैं।

राग धनाश्री

[२४]

कन्हैया हालरु रे।
गढ़ि गुढ़ि ल्यायौ बढ़ई, धरनी पर डोलाइ, बलि हालरु रे॥
इक लख माँगे बढ़ई, दुइ लख नंद जु देहिं, बलि हालरु रे।
रतन जटित बर पालनौ, रेसम लागी डोर, बलि हालरु रे॥
कबहुँक झूलै पालना, कबहुँ नंद की गोद, बलि हालरु रे।
झूलै सखी झुलावहीं, सूरदास बलि जाइ, बलि हालरु रे॥

(माता गा रही हैं—) 'कन्हैया, झूलो! बढ़ई बहुत सजाकर पलना गढ़ ले आया और उसे पृथ्वीपर चलाकर दिखा दिया, लाल! मैं तुझपर न्योछावर हूँ, तू (उस पलनेमें) झूल! बढ़ई एक लाख (मुद्राएँ) माँगता था, व्रजराजने उसे दो लाख दिये। लाल! तुझपर मैं बलि जाऊँ, तू (उस पलनेमें) झूल! पलना रत्न-जड़ा है और उसमें रेशमकी डोरी लगी है, लाल! मैं तेरी बलैया लूँ, तू (उसमें) झूल! मेरा लाल कभी पलनेमें झूलता है, कभी व्रजराजकी गोदमें, मैं तुझपर बलि जाऊँ, तू झूल! सखियाँ झूलेको झुला रही हैं, सूरदास इसपर न्योछावर है! बलिहारी नन्दलाल, झूलो!

राग बिहागरौ

[२५]

नैंकु गोपालहिं मोकौं दै री।
देखौं बदन कमल नीकैं करि, ता पाछैं तू कनियाँ लै री॥
अति कोमल कर-चरन-सरोरुह, अधर-दसन-नासा सोहै री।
लटकन सीस, कंठ मनि भ्राजत, मनमथ कोटि वारनैं गै री॥
बासर-निसा बिचारति हौं सखि, यह सुख कबहुँ न पायौ मैं री।
निगमनि-धन, सनकादिक-सरबस, बड़े भाग्य पायौ है तैं री॥
जाकौ रूप जगत के लोचन, कोटि चंद्र-रवि लाजत भै री।
सूरदास बलि जाइ जसोदा, गोपिनि-प्रान, पूतना-बैरी॥

(कोई गोपिका कहती है—यशोदाजी !) 'तनिक गोपालको तुम मुझे दे दो ! मैं इसके कमलमुखको एक बार भली प्रकार देख लूँ, इसके बाद तुम गोदमें लेना।' (गोदमें लेकर कहती है—) 'इसके कर तथा चरण कमलके समान अत्यन्त कोमल हैं, अधर, दँतुलियाँ और नासिका बहुत शोभा दे रही है, मस्तकपर यह लटकन (केशोंमें गूँथे मोती) तथा गलेमें कौस्तुभमणि ऐसी छटा दे रहे हैं कि इनपर करोड़ों कामदेव भी न्योछावर हो गये। सखी ! मैं रात-दिन सोचती रहती हूँ कि यह सुख (जो कन्हाईके आनेपर मिला है) मैंने और कभी नहीं पाया। यह तो वेदोंकी सम्पत्ति और सनकादि ऋषियोंका सर्वस्व है, जिसे तुमने बड़े सौभाग्यसे पा लिया है। इसके रूप ही जगत्‌के नेत्र हैं (जगत्‌के नेत्रोंकी सफलता इसके रूपका दर्शन करना ही है)। करोड़ों सूर्य-चन्द्र (इस रूपको देखकर) लज्जित हो जाते हैं।' सूरदासजी कहते हैं—माता यशोदा अपने लालपर बलि-बलि जाती हैं। (उनका लाल) गोपियोंका प्राणधन और पूतनाका शत्रु है।

राग जैतश्री

[२६]

कन्हैया हालरौ हलरोइ।
हौं वारी तव इंदु-बदन पर, अति छबि अलग भरोइ॥

कमल-नयन कौं कपट किए माई, इहिं ब्रज आवै जोइ ।
पालागौं बिधि ताहि बकी ज्यौं, तू तिहिं तुरत बिगोइ ॥
सुनि देवता बड़े, जग-पावन, तू पति या कुल कोइ ।
पद पूजिहौं, वेगि यह बालक करि दै मोहिं बड़ोइ ॥
दुतिया के ससि लौं बाढ़ै सिसु, देखै जननि जसोइ ।
यह सुख सूरदास कैं नैननि, दिन-दिन दूनौ होइ ॥

(माता गा रही हैं—) 'कन्हैया ! पलनेमें झूल ! मैं तेरे इस चन्द्रमुख-की बलिहारी जाऊँ जो अपार शोभासे अलग ही (अद्भुतरूपसे) परिपूर्ण है । 'माई री !'(पूतनाका स्मरण करके यह उद्गार करके तब प्रार्थना करती हैं–) 'दैव ! मैं तेरे पैरों पड़ती हूँ, इस कमललोचनसे छल करने इस व्रजमें जो कोई आवे, उसे तू उस पूतनाके समान ही तुरंत नष्ट कर देना । सुना है तू महान् देवता है, संसारको पवित्र करनेवाला है, इस कुलका स्वामी है, सो मैं तेरे चरणोंकी पूजा करूँगी, मेरे इस बालकको झटपट बड़ा कर दे । मेरा शिशु द्वितीयाके चन्द्रमाकी भाँति बढ़े और यह माता यशोदा उसे देखे ।' सूरदासजी कहते हैं–मेरे नेत्रोंके लिये भी यह सुख दिनोंदिन द्विगुना बढ़ता रहे ।

राग बिलावल

[२७]

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत ।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले, हरषि-हरषि अपनैं रँग खेलत ॥
सिव सोचत, बिधि बुद्धि बिचारत, बट बाढ़्यौ सागर-जल झेलत ।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत ॥
मुनि मन भीत भए, भुव कंपित, सेष सकुचि सहसौ फन पेलत ।
उन ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत ॥

श्यामसुन्दर अकेले पलनेमें सोये हैं, बार-बार हर्षित होकर अपनी धुनमें खेल रहे हैं । हाथोंसे चरण पकड़कर (पैरके) अँगूठेको वे मुखमें

डाल रहे हैं। इससे शंकरजी चिन्ता करने लगे, ब्रह्मा अपनी बुद्धिसे विचार करने लगे (कि प्रलयका तो समय आया नहीं, क्या करना चाहिये ?) अक्षयवट बढ़ने लगा, समुद्रका जल उमड़ पड़ा, प्रलयकालके मेघ प्रलय-काल समझकर चारों ओर बिखरकर दौड़ पड़े (क्योंकि प्रलयके समय ही भगवान् बालमुकुन्द-रूपसे पैरका अँगूठा मुखमें लेते हैं), दिक्पाललोग (भूमिके आधारभूत) दिग्गजोंको समेटने (वहाँसे हटाने) लगे। (सनकादि) मुनि भी मन-ही-मन भयभीत हो गये, पृथ्वी काँपने लगी, सकुचित होकर शेषनागने सहस्रफण उठा लिये (कि मुझे तो प्रभुकी प्रलय-सूचनासे पहिले ही फणोंकी फुंकारसे अग्नि उगलकर विश्वको जला देना था, जब मेरे काममें देरी हुई।) लेकिन (यह सब आधिदैविक जगत्में हो जानेपर भी) उन व्रजवासियोंने (जो नन्दभवनमें थे) कोई विशेष बात नहीं समझी। सूरदासजी कहते हैं; वे तो यही समझते रहे कि श्याम (खेलमें) छकड़ेको पैरसे हटा रहा है।

[२८]

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत।
नंद-घरनि गावति, हलरावति, पलना पर हरि खेलत॥
जे चरनारबिंद श्री-भूषन, उर तैं नैंकु न टारति।
देखौं धौं का रस चरननि मैं, मुख मेलत करि आरति॥
जा चरनारबिंद के रस कौं सुर-मुनि करत बिषाद।
सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ, तातैं लेत सवाद॥
उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ।
सेष सहसफन डोलन लागे, हरि पीवत जब पाइ॥
बढ़्यौ बृच्छ बट, सुर अकुलाने, गगन भयौ उतपात।
महा प्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात॥
करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौ, जानि सुरनि मन संस।
सूरदास प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि कैं उर गंस॥

श्रीनन्दपत्नी गाती जाती हैं, झुलाती हैं, श्याम पलनेमें लेटे खेल रहे हैं। वे हाथसे चरण पकड़कर अँगूठेको मुखमें डाल रहे हैं। 'मेरे जिस चरणकमलको लक्ष्मीजी अपना आभूषण बनाये रहती हैं। हृदयपरसे जिसे तनिक भी नहीं हटातीं, देखूँ तो उन चरणोंमें क्या रस है।' यह सोचकर बड़ी उत्सुकतापूर्वक उसे मुखमें डाल रहे हैं। 'मेरे जिस चरणकमलके रसको पानेके लिये देवता और मुनिगण भी चिन्ता किया करते हैं, वह (अपने चरणोंका) रस तो मेरे लिये भी दुर्लभ है, इसीलिये मानो प्रभु उसका स्वाद ले रहे हैं। लेकिन जब श्रीहरि अपने पैरके अँगूठेको पीने लगे, तब (प्रलयकाल समझकर) समुद्र उछलने लगा, पर्वत काँपने लगे, (शेषको भी धारण करनेवाले) कच्छपकी पीठ व्याकुल हो उठी, (भारको हटानेके लिये) शेषनागके सहस्र फण (फूत्कार करनेके लिये) हिलने लगे, अक्षयवटका वृक्ष बढ़ने लगा, देवता व्याकुल हो उठे, आकाशमें उत्पात होने लगा (तारे टूटने लगे) और महाप्रलयके बादल स्थान-स्थानपर वज्रपात करने प्रकट हो गये। इससे देवताओंके मनको सशंकित समझकर प्रभुने कृपा करके पैर छोड़ दिया। सूरदासजी कहते हैं— मेरे स्वामी तो असुरोंका विनाश करनेवाले हैं (प्रलय करनेवाले नहीं हैं)। केवल दुष्टोंके हृदयमें उनके कारण काँटा चुभता (वेदना होती) है।

राग बिहागरौ

[२९]

जसुदा मदन गुपाल सोवावै।
देखि सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै॥
असित-अरुन-सित आलस लोचन उभय पलक परि आवै।
जनु रबि गत संकुचित कमल जुग, निसि अलि उड़न न पावै॥
स्वास उदर उससित यौं, मानौ दुग्ध-सिंधु छबि पावै।
नाभि-सरोज प्रगट पदमासन उतरि नाल पछितावै॥

कर सिर तर करि स्याम मनोहर, अलक अधिक सोभावै।
सूरदास मानौ पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै॥

माता यशोदाजी मदनगोपालको सुला रही हैं, किंतु उनके शयनकी रीति देखकर (भगवान्‌के सोनेपर तो प्रलय हो जाता है, यह समझकर) तीनों लोक भयसे काँप रहे हैं, शंकर और ब्रह्माजी भी भ्रममें पड़ गये हैं (कि प्रभु क्या सचमुच सो रहे हैं) ? काले, कुछ लाल तथा श्वेत नेत्रोंमें आलस्य आ गया है, उनकी दोनों पलकें बंद हो जाती हैं, (ऐसी शोभा है) मानो सूर्यास्त हो जानेपर दो कमल संकुचित (बंद) हो रहे हैं, जिससे उनमें बैठे भौंरे रात्रिमें उड़ नहीं पाते । श्वाससे उदर इस प्रकार ऊपर-नीचे होता है, मानो क्षीरसागर शोभा दे रहा हो । नाभिकमल तो प्रत्यक्ष ही है; किंतु ब्रह्माजी कमलनालसे उतर जानेके कारण अब पश्चात्ताप करते हैं (कि मैं प्रभुकी नाभिसे निकले कमलपर बैठा ही रहता तो आज भी उनके समीप रह पाता) । श्यामसुन्दरने हाथको मस्तकके नीचे रख लिया है, अतः अब मुखपर घिरी अलकें और अधिक शोभा दे रही हैं । सूरदासजी कहते हैं कि (यह ऐसी छटा है) मानो शेषनाग प्रभुके ऊपर अपने फणोंसे छाया किये (छत्र लगाये) हों ।

राग बिलावल

[३०]

अजिर प्रभातहिं स्याम कौं, पलिका पौढ़ाए।
आप चली गृह-काज कौं, तहँ नंद बुलाए॥
निरखि हरषि मुख चूमि कै, मंदिर पग धारी।
आतुर नँद आए तहाँ जहँ ब्रह्म मुरारी॥
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग-चतुराई।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि-मुनि-राई॥
सो छबि नंद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई।
निरखि चरित गोपाल के, सूरज बलि जाई॥

(माता यशोदाने) प्रातःकाल श्यामसुन्दरको आँगनमें छोटी पलंगिया (खटुलिया) पर लिटा दिया। श्रीव्रजराजको वहाँ बुलाकर स्वयं घरका कार्य करने जाने लगीं। पुत्रका मुख देखकर हर्षित होकर उसका चुम्बन लेकर वे भवनमें चली गयीं। साक्षात् परमब्रह्म मुरके शत्रु श्रीकृष्णचन्द्र जहाँ सोये थे, वहाँ श्रीनन्दजी शीघ्रतापूर्वक आ गये। (श्यामसुन्दर) पिताका मुख देखकर हँसे और पैरोंसे चतुराई करके (पैरोंको एक ओर करके) किलकारी मारकर वे देवताओं तथा मुनियोंके स्वामी झटकेसे उलट गये (पेटके बल हो गये)। यह शोभा देखकर श्रीनन्दजीने व्रजरानीको वहाँ बुलाया। गोपालकी लीला देख-देखकर सूरदास उनपर न्योछावर होता है।

राग रामकली

[३१]

हरषे नंद टेरत महरि।
आइ सुत-मुख देखि आतुर, डारि दै दधि-डहरि॥
मथति दधि जसुमति मथानी, धुनि रही घर-घहरि।
स्रवन सुनति न महर-बातैं, जहाँ-तहँ गइ चहरि॥
यह सुनत तब मातु धाई, गिरे जाने झहरि।
हँसत नँद-मुख देखि धीरज तब कर्‍यौ ज्यौं ठहरि॥
स्याम उलटे परे देखे, बढ़ी सोभा लहरि।
सूर प्रभु कर सेज टेकत, कबहुँ टेकत ढहरि॥

श्रीनन्दजी आनन्दित होकर व्रजरानीको पुकार रहे हैं—'दहीका मटका एक ओर रख दो। झटपट आकर पुत्रका मुख देखो।' लेकिन श्रीयशोदाजी मथानी लिये दधि-मन्थन कर रही हैं, घरमें (दही मथनेके) घरघराहटका शब्द हो रहा है, स्थान-स्थानपर चहल-पहल हो रही है, इसलिये व्रजरानी श्रीनन्दजीकी पुकार कानोंसे सुन नहीं पातीं। लेकिन जब उन्होंने पुकार सुनी तो यह समझकर कि (कन्हाई पलनेसे) गिर पड़ा है, झपटकर दौड़ पड़ीं; किंतु श्रीनन्दजीका हँसीसे खिला मुख देखकर उन्हें

धैर्य हुआ और हृदयकी धड़कन रुकी। (पास आकर) श्यामसुन्दरको उलटे पड़े देख वहाँ छबिकी लहर बढ़ गयी । सूरदासजी कहते हैं— प्रभु (सीधे होनेके लिये) कभी हाथोंको पलँगपर टेक रहे थे और कभी पाटीपर टेक रहे थे।

[३२]

महरि मुदित उलटाइ कै मुख चूमन लागी।
चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, मैं भई सभागी॥
एक पाख त्रय-मास कौ मेरौ भयौ कन्हाई।
पटकि रान उलटौ पर्‍यौ, मैं करौं बधाई॥
नंद-घरनि आनँद भरी, बोलीं ब्रजनारी।
यह सुख सुनि आईं सबै, सूरज बलिहारी॥

श्रीव्रजरानी (प्रभुको) उलटा करके (पीठके बल सीधे लिटाकर) आनन्दित होकर उनके मुखका चुम्बन करने लगीं। (बोलीं—) 'मेरा प्यारा लाल चिरजीवी हो! मैं आज भाग्यवती हो गयी। मेरा कन्हाई साढ़े तीन महीनेका ही हुआ है, पर आज जानुओंको टेककर स्वयं उलटा हो गया। मैं आज इसका मङ्गल-बधाई बँटवाऊँगी।' आनन्दभरी श्रीव्रजरानीने व्रजकी गोपियोंको बुलवाया। यह संवाद पाकर सब वहाँ आ गयीं। सूरदास इस छबिपर बलिहारी है।

[३३]

जो सुख व्रज मैं एक घरी।
सो सुख तीनि लोक मैं नाहीं धनि यह घोष-पुरी॥
अष्टसिद्धि नवनिधि कर जोरे, द्वारैं रहति खरी।
सिव-सनकादि-सुकादि-अगोचर, ते अवतरे हरी॥
धन्य-धन्य बड़भागिनि जसुमति, निगमनि सही परी।
ऐसैं सूरदास के प्रभु कौं, लीन्हौ अंक भरी॥

व्रजमें जो आनन्द प्रत्येक घड़ी हो रहा है, वह आनन्द तीनों लोकोंमें नहीं है। यह गोप-नगरी धन्य है। आठों सिद्धियाँ और नवों निधियाँ द्वारपर यहाँ हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं; क्योंकि शिव, सनकादि-ऋषि तथा शुकदेवादि परमहंसोंके लिये भी जिनका दर्शन दुर्लभ है, उन श्रीहरिने यहाँ अवतार लिया है। परम सौभाग्यवती श्रीयशोदाजी धन्य हैं, धन्य हैं, यह आज वेद भी सत्य मानते हैं (इसपर उन्होंने हस्ताक्षर कर दिया है); क्योंकि सूरदासके ऐसे महिमामय प्रभुको उन्होंने गोदमें ले लिया है।

[३४]

यह सुख सुनि हरषीं व्रजनारी। देखन कौं धाईं बनवारी॥
कोउ जुवती आई,कोउ आवति। कोउ उठि चलति,सुनत सुख पावति॥
घर-घर होति अनंद-बधाई। सूरदास प्रभु की बलि जाई॥

यह आनन्द-संवाद (कि कन्हाईने आज स्वयं करवट ले ली है) सुनकर व्रजकी स्त्रियाँ हर्षित हो गयीं। वे वनमाली श्यामसुन्दरको देखने दौड़ पड़ीं। कोई युवती (नन्दभवनमें) आ गयी है, कोई आ रही है, कोई उठकर चली है, कोई समाचार सुनते ही आनन्दमग्न हो रही है। घर-घर आनन्द-बधाई बँट रही है। सूरदास अपने प्रभुपर बलिहारी जाता है।

[३५]

जननी देखि छबि, बलि जाति।
जैसैं निधनी धनहिं पाएँ, हरष दिन अरु राति॥
बाल-लीला निरखि हरषति, धन्य धनि व्रजनारि।
निरखि जननी-बदन किलकत, त्रिदस-पति दै तारि॥
धन्य नँद, धनि धन्य गोपी, धन्य ब्रज कौ बास।
धन्य धरनी करन पावन जन्म सूरजदास॥

माता (श्यामकी) शोभा देखकर बलिहारी जाती है। जैसे निर्धनको धन प्राप्त हो जानेसे रात-दिन आनन्द हो रहा हो। (श्रीकृष्ण-चन्द्रकी) बाल-लीला देखकर हर्षित होनेवाली व्रजकी नारियाँ धन्य हैं। त्रिलोकीनाथ प्रभु माताका मुख देखकर ताली बजाकर (हाथ परस्पर मिलाकर) किलकारी मारते हैं। व्रजराज श्रीनन्दजी धन्य हैं। ये गोपिकाएँ धन्य-धन्य हैं और जिन्हें व्रजमें निवास मिला है वे भी धन्य हैं। सूरदास कहते हैं कि पृथ्वीको पवित्र करनेवाला प्रभुका अवतार धन्य है।

राग बिलावल

[३६]

जसुमति भाग-सुहागिनी, हरि कौं सुत जानै।
मुख-मुख जोरि बत्यावई, सिसुताई ठानै॥
मो निधनी कौ धन रहै, किलकत मन मोहन।
बलिहारी छबि पर भई, ऐसी बिधि जोहन॥
लटकति बेसरि जननि की, इकटक चख लावै।
फरकत बदन उठाइ कै, मन हीं मन भावै॥
महरि मुदित हित उर भरै, यह कहि, मैं वारी।
नंद-सुवन के चरित पर, सूरज बलिहारी॥

सौभाग्यशालिनी श्रीयशोदाजी श्रीहरिको अपना पुत्र समझती हैं। (वात्सल्य-प्रेम करती हुई) उनके मुखसे अपना मुख सटाकर बातें करती हैं। श्यामसुन्दर लड़कपन ठान लेते हैं (हाथसे मैयाकी नाक पकड़ लेते हैं) (वह कहती हैं—) 'मुझ कंगालिनीका धन यह मनमोहन किलकता (प्रसन्न) रहे। लाल! तेरे इस प्रकार देखने तथा तेरी छटापर मैं बलिहारी हूँ।' माताकी लटकती हुई बेसरपर मोहन एकटक दृष्टि लगाये है, कभी ओठ फड़काते हुए मुख उठाकर मन-ही-मन मुदित होते हैं। व्रजरानी यह कहकर कि 'लाल! मैं तुझपर न्योछावर हूँ' हर्षित होकर प्रेमसे उठाकर हृदयसे लगा लेती हैं। सूरदास श्रीनन्दनन्दनकी इस शिशु-लीलापर बलिहारी जाता है।

राग आसावरी

[३७]

गोद लिए हरि कौं नँदरानी, अस्तन पान करावति है।
बार-बार रोहिनि कौ कहि-कहि, पलिका अजिर मँगावति है॥
प्रात समय रवि-किरनि कोंवरी, सो कहि, सुतहिं बतावति है।
आउ घाम मेरे लाल कैं आँगन, बाल-केलि कौं गावति है॥
रुचिर सेज लै गइ मोहन कौं, भुजा उछंग सोवावति है।
सूरदास प्रभु सोए कन्हैया, हलरावति-मल्हरावति है॥

श्रीहरिको गोदमें लेकर नन्दरानी यशोदाजी स्तनपान करा रही हैं तथा बार-बार श्रीरोहिणीजीसे कह-कहकर खटुलिया (शिशुके छोटे पलंग) को आँगनमें मँगाती हैं। 'ये प्रातःकालीन सूर्यकी कोमल किरणें हैं' इस प्रकार कहकर पुत्रको बतलाती (सूर्य-दर्शन कराती) हैं। 'किरणो! मेरे घरमें, मेरे लालके आँगनमें आओ।' (बार-बार) बाललीलाका गान करती हैं। सुन्दर शय्यापर मोहनको ले जाकर अपनी भुजापर उनका सिर रखकर गोदमें शयन कराती हैं। सूरदासजी कहते हैं—मेरे प्रभु कन्हाई जब सो गये, तब उन्हें झुलाती तथा थपकी देकर प्यार करती हैं।

राग बिलावल

[३८]

नंद-घरनि आनँद भरी, सुत स्याम खिलावै।
कबहिं घुटुरुवनि चलहिंगे, कहि, बिधिहिं मनावै॥
कबहिं दँतुलि द्वै दूध की, देखौं इन नैननि।
कबहिं कमल-मुख बोलिहैं, सुनिहौं उन बैननि॥
चूमति कर-पग-अधर-भ्रू, लटकति लट चूमति।
कहा बरनि सूरज कहै, कहँ पावै सो मति॥

आनन्दमग्न श्रीनन्दरानी अपने पुत्र श्यामसुन्दरको खेला रही हैं। वे ब्रह्मासे मनाती हैं—'मेरा लाल कब घुटनों चलने लगेगा। कब अपनी इन आँखोंसे मैं इसके दूधकी दो दँतुलियाँ (छोटे दाँत) देखूँगी। कब यह कमल-मुख बोलने लगेगा और मैं उन शब्दोंको सुनूँगी।' (प्रेम-विभोर होकर वे पुत्रके) हाथ, चरण, अधर तथा भौंहोंका चुम्बन करती हैं एवं लटकती हुई अलकोंको चूम लेती हैं। सूरदास ऐसी बुद्धि कहाँसे पावे, कैसे इस शोभाका वर्णन करके बतावे।

[३९]

नान्हरिया गोपाल लाल, तू बेगि बड़ौ किन होहि।
इहिं मुख मधुर बचन हँसिकै धौं, जननि कहै कब मोहिं॥
यह लालसा अधिक मेरैं जिय जो जगदीस कराहिं।
मो देखत कान्हर इहिं आँगन, पग द्वै धरनि धराहिं॥
खेलहिं हलधर-संग रंग-रुचि, नैन निरखि सुख पाऊँ।
छिन-छिन छुधित जानि पय कारन, हँसि-हँसि निकट बुलाऊँ॥
जाकौं सिव-बिरंचि-सनकादिक मुनिजन ध्यान न पावै।
सूरदास जसुमति ता सुत-हित, मन अभिलाष बढ़ावै॥

(माता कहती है—) 'मेरे नन्हे गोपाल लाल ! तू झटपट बड़ा क्यों नहीं हो जाता। पता नहीं कब तू इस मुखसे हँसकर मधुर वाणीसे मुझे 'मैया' कहेगा, मेरे हृदयमें यही अत्यन्त उत्कण्ठा है, यदि इसे जगदीश्वर पूरा कर दें कि मेरे देखते हुए कन्हाई इस आँगनमें पृथ्वीपर अपने दोनों चरण रक्खे (पैरों चलने लगे)। बड़े भाई बलरामके साथ वह आनन्दपूर्वक उमंगमें खेले और मैं आँखोंसे यह देखकर सुखी होऊँ। क्षण-क्षणमें भूखा समझकर दूध पिलानेके लिये मैं हँस-हँसकर पास बुलाऊँ।' सूरदासजी कहते हैं कि शंकरजी, ब्रह्माजी, सनकादि ऋषि तथा मुनिगण ध्यानमें भी जिसे नहीं पाते, उसी पुत्रके प्रेमसे माता यशोदा मनमें नाना प्रकारकी अभिलाषा बढ़ाया करती हैं।

[४०]

जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरो लाल घुटुरुवनि रेंगै, कब धरनी पग द्वैक धरै॥
कब द्वै दाँत दूध के देखौं, कब तोतरैं मुख बचन झरै।
कब नंदहिं बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिं ररै॥
कब मेरौ अँचरा गहि मोहन, जोइ-सोइ कहि मोसौं झगरै।
कब धौं तनक-तनक कछु खैहै, अपने कर सौं मुखहिं भरै॥
कब हँसि बात कहैगौ मौसौं, जा छबि तैं दुख दूरि हरै।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े, आपु गई कछु काज घरै॥
इहिं अंतर अँधवाह उठ्यौ इक, गरजत गगन सहित घहरै।
सूरदास ब्रज-लोग सुनत धुनि, जो जहँ-तहँ सब अतिहिं डरै॥

श्रीयशोदाजी मनमें अभिलाषा करती हैं—'मेरा लाल कब घुटनोंके बल सरकने लगेगा। कब पृथ्वीपर वह दो पद रक्खेगा। कब मैं उसके दूधके दो दाँत देखूँगी। कब उसके मुखसे तोतली बोली निकलने लगेगी। कब व्रजराजको 'बाबा' कहकर बुलावेगा, कब मुझे बार-बार 'मैया-मैया' कहेगा। कब मोहन मेरा अञ्चल पकड़कर चाहे जो कुछ कहकर (अटपटी माँगे करता) मुझसे झगड़ा करेगा। कब कुछ थोड़ा-थोड़ा खाने लगेगा। कब अपने हाथसे मुखमें ग्रास डालेगा। कब हँसकर मुझसे बातें करेगा, जिस शोभासे दुःखका हरण कर लिया करेगा।' (इस प्रकार अभिलाषा करती माता) श्यामसुन्दरको अकेले आँगनमें छोड़कर कुछ कामसे स्वयं घरमें चली गयी। इसी बीचमें एक अंधड़ उठा, उसमें इतनी गर्जना हो रही थी कि पूरा आकाश घहरा रहा (गूँज रहा) था। सूरदासजी कहते हैं कि व्रजके लोग जो जहाँ थे, वहीं उस ध्वनिको सुनते ही अत्यन्त डर गये।

राग धनाश्री

[४१]

हरि किलकत जसुदा की कनियाँ।
निरखि-निरखि मुख कहति लाल सौं मो निधनी के धनियाँ॥
अति कोमल तन चितै स्याम कौ, बार-बार पछितात।
कैसैं बच्यौ, जाउँ बलि तेरी, तृनावर्त कैं घात॥
ना जानौं धौं कौन पुन्य तैं, को करि लेत सहाइ।
वैसौ काम पूतना कीन्हौ, इहिं ऐसौ कियौ आइ॥
माता दुखित जानि हरि बिहँसे, नान्हीं दँतुलि दिखाइ।
सूरदास प्रभु माता चित तैं दुख डार्‌यौ बिसराइ॥

श्रीहरि माता यशोदाकी गोदमें किलकारी ले रहे हैं। माता बार-बार मुख देखकर अपने लालसे कहती हैं—'लाल! तू मुझ कंगालिनीका धन है।' वे श्यामसुन्दरका अत्यन्त कोमल शरीर देखकर बार-बार पश्चात्ताप करती हैं—'लाल! मैं तुझपर बलिहारी हूँ, पता नहीं तू तृणावर्तके आघातसे कैसे बच गया। किस (पूर्वजन्मके) पुण्यसे कौन (देवता) सहायता कर देता है, यह मैं जानती नहीं; जैसा (क्रूर) कर्म पूतनाने किया था, वैसा ही इस (तृणावर्त) ने आकर किया।' माताको दुखित समझकर श्याम छोटी दँतुलियाँ दिखाकर हँस पड़े। सूरदासजी कहते हैं कि प्रभुने माताका चित्त अपनेमें लगाकर उनका दुःख विस्मृत करा दिया।

[४२]

सुत-मुख देखि जसोदा फूली।
हरषित देखि दूध की दँतियाँ, प्रेममगन तन की सुधि भूली॥
बाहिर तैं तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुंदर सुखदाई।
तनक-तनक-सी दूध-दँतुलिया, देखौ, नैन सफल करौ आई॥

आनँद सहित महर तब आए, मुख चितवंत दोउ नैन अघाई।
सूर स्याम किलकत द्विज देख्यौ, मनौ कमल पर बिज्जु जमाई॥

पुत्रका मुख देखकर यशोदाजी उत्फुल्ल हो उठीं। दूधकी दँतुलियाँ देखकर वे अत्यन्त हर्षित हुई, प्रेममें मग्न होकर अपने शरीरकी सुधि भूल गयीं। बाहरसे उन्होंने व्रजराज श्रीनन्दजीको बुलाया कि 'यह सुखदायक दृश्य तो देखो! (मोहनकी) तनिक-तनिक-सी निकली दूधकी दँतुलियों-को देखकर अपने नेत्रोंको सफल करो।' आनन्दपूर्वक श्रीव्रजराज तब वहाँ आये। मोहनका मुख देखकर उनके दोनों नेत्र तृप्त हो गये। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामके किलकारी लेते समय उनके दाँत इस प्रकार दीख पड़े, मानो कमलपुष्पके ऊपर बिजली जड़ी हो।

राग देवगंधार

[४३]

हरि किलकत जसुमति की कनियाँ।
मुख मैं तीनि लोक दिखराए, चकित भई नँद-रनियाँ॥
घर-घर हाथ दिवावति डोलति, बाँधति गरैं बघनियाँ।
सूर स्याम की अदभुत लीला नहिं जानत मुनिजनियाँ॥

हरि श्रीयशोदाजीकी गोदमें किलकारी ले रहे हैं। अपने (खुले) मुखमें उन्होंने तीनों लोक दिखला दिये, जिससे श्रीनन्दरानी विस्मित हो गयीं। (कोई जादू-टोना न हो, इस शंकासे) घर-घर जाकर श्यामके मस्तकपर आशीर्वादके हाथ रखवाती घूमती हैं और गलेमें छोटी बघनखिया आदि बाँधती हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरकी लीला ही अद्भुत है, उसे तो मुनिजन भी नहीं समझ पाते। (श्रीयशोदाजी नहीं समझतीं इसमें आश्चर्य क्या।)

राग़िनी श्रीहठी

[४४]

जननी बलि जाइ हालरु हालरौ गोपाल।
दधिहिं बिलोइ सदमाखन राख्यौ, मिश्री सानि चटावै नँदलाल॥
कंचन खंभ, मयारि, मरुवा-डाड़ी, खचि हीरा बिच लाल-प्रवाल।
रेसम बनाइ नव रतन पालनौ, लटकन बहुत पिरोजा-लाल॥
मोतिनि झालरि नाना भाँति खिलौना, रचे बिस्वकर्मा सुतहार।
देखि-देखि किलकत दँतियाँ द्वै राजत क्रीड़त बिबिध बिहार॥
कठुला कंठ बज्र केहरि-नख, मसि-बिंदुका सु मृग-मद भाल।
देखत देत असीस नारि-नर, चिरजीवौ जसुदा तेरौ लाल॥
सुर नर मुनि कौतूहल फूले, झूलत देखत नंद कुमार।
हरषत सूर सुमन बरषत नभ, धुनि छाई है जै-जैकार॥

माता बलिहारी जाती है, गोपाललाल पलने झूलो !' (इस प्रकार पलनेमें झुलाकर) दही मथकर तुरंतका निकला मक्खन लेकर उसमें मिश्री मिलाकर नन्दलालको चटाती हैं। (पलनेमें) सोनेके खम्भे लगे हैं, सोनेकी ही धरन (ऊपरका मुख्य डंडा) और सोनेके ही मरुवा-डंडे (धरन और झूलेके बीचके छोटे डंडे) लगे हैं, उनमें हीरे जड़े हैं, बीच-बीचमें लाल (माणिक्य) और मूँगे लगे हैं, पलना नवरत्नोंसे सजा है, बहुत-से पिरोजा और लाल झालरोंमें लटक रहे हैं, रेशमकी रस्सी लगी है। मोतियोंकी झालरें लटक रही हैं, अनेक प्रकारके खिलौने उसमें बने हैं, स्वयं विश्वकर्मा बढ़ईका रूप रखकर बनाये हैं। (पलनेको) देख-देखकर श्याम किलकता है। (उस समय) उसकी दोनों दँतुलियाँ बड़ी शोभा देती हैं। अनेक प्रकारसे वह क्रीड़ा कर रहा है। गलेमें कठुला, हीरे और बघनखा (बाल-आभूषण) है, ललाटपर कस्तूरीका सुन्दर तिलक और (नजर न लगनेके लिये) कज्जलका बिन्दु लगा है। सभी (व्रजके) नर-नारी देखकर आशीर्वाद देते हैं—'यशोदाजी ! तुम्हारा लाल चिरजीवी

हो !' सूरदासजी कहते हैं कि श्रीनन्दनन्दनको (पलनेमें) झूलते देखकर देवता, मनुष्य तथा मुनिगण आनन्दसे उत्फुल्ल हो रहे हैं, देवता हर्षित होकर आकाशसे पुष्पोंकी वर्षा करते हैं। उनके जय-जयकारके शब्दसे पूरा आकाश भर गया है।

राग सारंग

[४५]

हरि कौ मुख माइ, मोहि अनुदिन अति भावै।
चितवत चित नैननि की मति-गति बिसरावै॥
ललना लै-लै उछंग अधिक लोभ लागैं।
निरखति निंदति निमेष करत ओट आगैं॥
सोभित सुकपोल-अधर, अलप-अलप दसना।
किलकि-किलकि बैन कहत, मोहन, मृदु रसना॥
नासा, लोचन बिसाल, संतत सुखकारी।
सूरदास धन्य भाग, देखति ब्रजनारी॥

(गोपिका कहती है—) 'सखी ! मुझे तो श्यामका मुख दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक आकर्षक लगता है। इसे देखते ही (यह) चित्त अपनी और नेत्रोंकी विचारशक्ति और गतिको विस्मृत कर देता है। (चित्त एकाग्र और नेत्र स्थिर हो जाते हैं।) इस लालको बार-बार गोदमें लेनेपर भी (गोदमें लिये ही रहनेका) लोभ और बढ़ता जाता है।' इस प्रकार (श्यामके श्रीमुखको) देखते हुए वे अपनी पलकोंकी निन्दा करती हैं कि ये आगे आकर (बार-बार गिरकर) आड़ कर देती हैं। मोहनके सुन्दर कपोल, लाल अधर तथा छोटे-छोटे दाँत अत्यन्त शोभा दे रहे हैं। बार-बार किलक-किलककर अपनी कोमल जिह्वासे वह कुछ (अस्फुट) बोल रहा है। सुन्दर नासिका, उसके बड़े-बड़े नेत्र (दर्शन करनेवालेके लिये) सदा ही आनन्ददायक हैं। सूरदासजी कहते हैं कि ये व्रजकी गोपियोंका सौभाग्य धन्य है जो मोहनको देखती हैं।

राग जैतश्री

[४६]

लालन, वारी या मुख ऊपर।
माई मोरहि दीठि न लागै, तातैं मसि-बिंदा दियौ भ्रू पर॥
सरबस मैं पहिलैं ही वार्‌यौ, नान्हीं-नान्हीं दँतुली दू पर।
अब कहा करौं निछावरि, सूरज सोचति अपनैं लालन जू पर॥

सूरदासजी कहते हैं कि (माता यशोदा आनन्दमग्न कह रही हैं) 'मैं अपने लालजीपर न्योछावर हूँ। सखी ! कहीं मेरी ही नजर इसे न लग जाय, इससे काजलकी बिन्दी इसकी भौंहपर मैंने लगा दी है। इसकी दोनों दँतुलियोंपर तो मैंने अपना सर्वस्व पहिले ही न्योछावर कर दिया। अब सोचती हूँ कि अपने लालजीपर और क्या न्यौछावर करूँ।'

राग बिलावल

[४७]

आजु भोर तमचुर के रोल।
गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल-धुनि महराने टोल॥
फूले फिरत नंद अति सुख भयौ, हरषि मँगावत फूल-तमोल।
फूली फिरति जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल॥
तनक बदन, दोउ तनक-तनक कर, तनक चरन, पोंछति पट झोल।
कान्ह गरैं सोहति मनि-माला, अंग अभूषन अँगुरिनि गोल॥
सिर चौतनी, डिठौना दीन्हौ, आँखि आँजि पहिराइ निचोल।
स्याम करत माता सौं झगरौ, अटपटात कलबल करि बोल॥
दोउ कपोल गहि कै मुख चूमति, बरष-दिवस कहि करति कलोल।
सूर स्याम ब्रज-जन-मोहन बरष-गाँठि कौ डोरा खोल॥

आज प्रातःकाल अँधेरा रहते ही चहल-पहल मच गयी है। गोकुलमें आनन्द मनाया जा रहा है, व्रजराजके मुहल्लेमें मङ्गल-ध्वनि हो रही है।

श्रीनन्दजी फूले-फूले फिर रहे हैं, उन्हें बड़ा आनन्द हो रहा है, वे पुष्प और ताम्बूल मँगवा रहे हैं; श्रीयशोदाजी शरीर और मन दोनोंसे प्रफुल्लित हुई घूम रहीं हैं, अपने अमूल्य धन कन्हाईको उन्होंने उबटन लगाकर स्नान कराया और अब कोमल वस्त्रसे उसके छोटे-से शरीर, दोनों छोटे-छोटे हाथ तथा छोटे-छोटे चरणोंको पोंछ रही हैं। कन्हाईके गलेमें मणियोंकी माला शोभा दे रही है, अङ्गोंमें आभूषण तथा अंगुलियोंमें अँगूठियाँ हैं। सिरपर माताने चौकोर टोपी पहिनायी है, नजर न लगनेके लिये कज्जलका बिन्दु भालपर दिया है, नेत्रोंमें काजल लगाया है तथा झँगुलिया (कुर्ता) पहिनायी है। श्याम मातासे झगड़ा कर रहा है (स्नान, वस्त्रादि-धारणका विरोध करता है), लड़खड़ाता है (भूमिमें लेट जाने तथा माताके हाथसे छूटनेका प्रयत्न करता है) और कलबल (अस्फुट) स्वरमें बोलता है। माता उसके दोनों कपोल पकड़कर मुखका चुम्बन करती हैं। 'आज तेरी वर्षगाँठ है!' यह कहकर उल्लास प्रकट करती हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर व्रजजनोंके चित्तको मोहित करनेवाले हैं। आज उनकी वर्षगाँठके सूत्रकी ग्रन्थि खोली गयी है।

राग धनाश्री

[४८]

खेलत नँद-आँगन गोविंद।
निरखि-निरखि जसुमति सुख पावति, बदन मनोहर इंदु॥
कटि किंकिनी चंद्रिका मानिक, लटकन लटकत भाल।
परम सुदेस कंठ केहरि-नख, बिच-बिच बज्र प्रवाल॥
कर पहुँची, पाइनि मैं नूपुर, तन राजत पट पीत।
घुटुरुनि चलत, अजिर महँ बिहरत, मुख मंडित नवनीत॥
सूर बिचित्र चरित्र स्याम के रसना कहत न आवैं।
बाल दसा अवलोकि सकल मुनि, जोग बिरति बिसरावैं॥

गोविन्द व्रजराज श्रीनन्दजीके आँगनमें खेल रहे हैं। माता यशोदा उनके चन्द्रमाके समान सुन्दर मुखको देख-देखकर अत्यन्त आनन्द पा

रही हैं। मोहनकी कटिमें किंकिणी (करधनी) है। मस्तकपर चन्द्रिका है जिसके माणिककी लटकन ललाटपर झूल रही है। अत्यन्त सुन्दर कण्ठमें बघनखा पहिनाया है, जिसकी मालामें बीच-बीचमें हीरे और मूँगे लगे हैं। हाथोंमें पहुँची (गहना) हैं, चरणोंमें नूपुर हैं, शरीरपर पीताम्बर शोभा दे रहा है। आँगनमें घुटनोंसे चलते हुए क्रीड़ा कर रहे हैं, मुखमें माखन लगा है। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरकी विचित्र लीलाका वर्णन जिह्वासे हो नहीं पाता है। उनकी बालक्रीड़ाको देखकर सभी मुनिगण अपने योग तथा वैराग्यको भूल जाते हैं।

राग रामकली

[४९]

खीझत जात माखन खात।
अरुन लोचन, भौंह टेढ़ी, बार-बार जँभात॥
कबहुँ रुनझुन चलत घुटुरुनि, धूरि धूसर गात।
कबहुँ झुकि कै अलक खैंचत, नैन जल भरि जात॥
कबहुँ तोतरे बोल बोलत, कबहुँ बोलत तात।
सूर हरि की निरखि सोभा, निमिष तजत न मात॥

मोहन माखन खाते हुए खीझते जा रहे हैं। नेत्र लाल हो रहे हैं, भौंहें तिरछी हैं, बार-बार जम्हाई लेते हैं। कभी (नूपुरोंको) रुनझुन करते घुटनोंसे चलते हैं, शरीर धूलिसे धूसर हो रहा है, कभी झुककर अपनी अलकें खींचते हैं, जिससे नेत्रोंमें आँसू भर आते हैं, कभी तोतली वाणीसे कुछ कहने लगते हैं, कभी बाबाको बुलाते हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्रीहरिकी यह शोभा देखकर माता पलकें भी नहीं डालतीं। (अपलक देख रही हैं।)

राग ललित

[५०]

(माई) विहरत गोपाल राइ, मनिमय रचे अंगनाइ,
लरकत पररिंगनाइ, घूटुरूनि डोलै।

निरखि निरखि अपनो प्रति-बिंब, हँसत किलकत औ,
पाछैं चितै फेरि-फेरि मैया-मैया बोलै ॥
जौं अलिगन सहित बिमल जलज जलहिं धाइ रहै,
कुटिल अलक बदन की छबि, अवनी परि लोलै।
सूरदास छबि निहारि, थकित रहीं घोष नारि,
तन-मन-धन देतिं वारि, वार-वार ओलै ॥

सखी ! मणिमय सुसज्जित आँगनमें गोपाललाल क्रीड़ा कर रहे हैं। घुटनों चलते हैं, चारों ओर सरकते-घूमतेमें लड़खड़ाते हैं, बार-बार (मणिभूमिमें) अपना प्रतिबिम्ब देख-देखकर हँसते और किलकारी मारते हैं, घूम-घूमकर पीछे देख-देखकर 'मैया-मैया' बोलते हैं। जैसे मँडराते भौंरोंके साथ निर्मल कमल पानीपर बहता जाता हो, इस प्रकार घुँघराली अलकोंसे घिरे चंचल मुखकी शोभा मणिभूमिमें (प्रतिबिम्बित होकर) हो रही है। सूरदासजी कहते हैं कि इस शोभाको देखकर व्रजकी स्त्रियाँ थकित (शिथिल-देह) हो रहीं। तन, मन, धन वे निछावर किये देती हैं और बार-बार उसी (मोहन) की शरण लेती (उसीको देखने आ जाती) हैं।

राग बिलावल

[५१]

बाल बिनोद खरो जिय भावत।
मुख प्रतिबिंब पकरिबे कारन हुलसि घुटुरुवनि धावत ॥
अखिल ब्रह्मंड-खंड की महिमा, सिसुता माहिं दुरावत।
सब्द जोरि बोल्यौ चाहत हैं, प्रगट बचन नहिं आवत ॥
कमल-नैन माखन माँगत हैं करि-करि सैन बतावत।
सूरदास स्वामी सुख-सागर, जसुमति-प्रीति बढ़ावत ॥

(श्यामसुन्दरका) बालविनोद हृदयको अत्यन्त प्रिय लगता है। अपने मुखका प्रतिबिम्ब पकड़नेके लिये वे बड़े उल्लाससे घुटनोंके बल दौड़ते हैं।

इस प्रकार निखिल ब्रह्माण्डनायक होनेका माहात्म्य अपनी शिशुतामें वे छिपाये हुए हैं। शब्दोंको एकत्र करके कुछ कहना चाहते हैं; किंतु स्पष्ट बोलना आता नहीं है। वे कमललोचन मक्खन माँगना चाहते हैं, इससे बार-बार संकेत करके समझा रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी सुखके समुद्र हैं, वे माता यशोदाके वात्सल्य-प्रेमको बढ़ा रहे हैं।

राग सारंग

[५२]

मैं बलि स्याम, मनोहर नैन।
जब चितवत मो तन करि अँखियनि, मधुप देत मनु सैन॥
कुंचित अलक, तिलक गोरोचन, ससि पर हरि के ऐन।
कबहुँक खेलत जात घुटुरुवनि, उपजावत सुख चैन॥
कबहुँक रोवत-हँसत बलि गई, बोलत मधुरे बैन।
कबहुँक ठाढ़े होत टेकि कर, चलि न सकत इक गैन॥
देखत बदन करौं न्यौछावरि, तात-मात सुख-दैन।
सूर बाल-लीला के ऊपर, वारौं कोटिक मैन॥

(माता कहती है—) श्यामके मनोहारी नेत्रोंकी मैं बलिहारी जाती हूँ। जब मेरी ओर आँखें करके वह मेरे मुखकी ओर देखता है तो लगता है मानो भौंरे ही कोई संकेत कर रहे हैं। हरिके चन्द्रमुखपर घुँघराली अलकें छायी हैं और (भालपर) गोरोचनका तिलक लगा है। कभी घुटनों चलते हुए खेलता है और सुख-चैन उत्पन्न करता है, कभी रोता है, कभी हँसता है, मैं तो उसकी मधुर वाणीपर बलि जाती हूँ। कभी हाथ टेककर खड़ा हो जाता है, किंतु अभी एक पद भी नहीं चल सकता। उसका मुख देखकर मैं अपने आपको न्यौछावर करती हूँ, वह माता-पिताको सुख देनेवाला है। सूरदासजी कहते हैं—इस बाललीलाके ऊपर करोड़ों कामदेवोंको न्यौछावर करता हूँ।

राग धनाश्री

[५३]

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत ।
मनिमय कनक नंद कैं आँगन, बिंब पकरिवैं धावत ॥
कबहुँ निरखि हरि आपु छाहँ कौं, कर सौं पकरन चाहत ।
किलकि हँसत राजत द्वै दतियाँ, पुनि-पुनि तिहिं अवगाहत ॥
कनक-भूमि पर कर-पग-छाया, यह उपमा इक राजति ।
करि-करि प्रतिपद प्रति मनि बसुधा, कमल बैठकी साजति ॥
बाल-दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति ।
अँचरा तर लै ढाँकि, सूर के प्रभु कौं दूध पियावति ॥

कन्हाई किलकारी मारता घुटनों चलता आ रहा है। श्रीनन्दजीके मणिमय आँगनमें वह अपना प्रतिबिम्ब पकड़ने दौड़ रहा है। श्याम कभी अपने प्रतिबिम्बको देखकर उसे हाथसे पकड़ना चाहता है। किलकारी मारकर हँसते समय उसकी दोनों दँतुलियाँ बहुत शोभा देती हैं, वह बार-बार उसी (प्रतिबिम्ब) को पकड़ना चाहता है। स्वर्णभूमिपर हाथ और चरणोंकी छाया ऐसी पड़ती है कि यह एक उपमा (उसके लिये) शोभा देनेवाली है कि मानो पृथ्वी (मोहनके) प्रत्येक पदपर प्रत्येक मणिमें कमल प्रकट करके उसके लिये (बैठनेको) आसन सजाती है। बालविनोदके आनन्दको देखकर माता यशोदा बार-बार श्रीनन्दजीको वहाँ (वह आनन्द देखनेके लिये) बुलाती हैं। सूरदासके स्वामीको (मैया) अञ्चलके नीचे लेकर, ढककर दूध पिलाती हैं।

राग बिलावल

[५४]

नंद-धाम खेलत हरि डोलत ।
जसुमति करति रसोई भीतर, आपुन किलकत बोलत ॥

टेरि उठी जसुमति मोहन कौं, आवहु काहैं न धाइ।
बैन सुनत माता पहिचानी, चले घुटुरुवनि पाइ॥
लै उठाइ अंचल गहि पोंछै, धूरि भरी सब देह।
सूरज प्रभु जसुमति रज झारति, कहाँ भरी यह खेह?

हरि नन्दभवनमें खेलते फिर रहे हैं। यशोदाजी घरके भीतर रसोई बना रही हैं, ये किलकारी मारते कुछ बोल रहे हैं। इसी समय माता यशोदाने मोहनको पुकारा—'लाल! तू दौड़कर यहाँ क्यों नहीं आता।' शब्द सुनकर पहिचान लिया कि मैया बुला रही है, इससे घुटनोंके बल चरण घसीटते चल पड़े। मैयाने गोदमें उठा लिया, धूलि भरा हुआ पूरा शरीर अञ्चलसे पोंछने लगीं। सूरदासजी कहते हैं—मेरे स्वामीके शरीरमें लगी धूलि झाड़ती हुई यशोदाजी कहती हैं—'इतनी धूलि तुमने कहाँसे लपेट ली!'

राग सूहौ बिलावल

[५५]

धनि जसुमति बड़भागिनी, लिए कान्ह खिलावै।
तनक-तनक भुज पकरि कै, ठाढ़ौ होन सिखावै॥
लरखरात गिरि परत हैं, चलि घुटुरुनि धावैं।
पुनि क्रम-क्रम भुज टेकि कै, पग द्वैक चलावैं॥
अपने पाइनि कबहिं लौं, मोहिं देखन धावै।
सूरदास जसुमति इहै बिधि सौं जु मनावै॥

महाभाग्यवती यशोदाजी धन्य हैं, वे कन्हाईको गोदमें लिये खेला रही हैं। उनकी छोटी-छोटी भुजाएँ पकड़कर खड़ा होना सिखलाती हैं। वे लड़खड़ाते हैं और गिर पड़ते हैं, फिर घुटनोंके बल सरकते चल पड़ते हैं, फिर माता धीरे-धीरे हाथोंको पकड़े हुए सहारा देकर दो-एक पग चलाती हैं। सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजी इसी प्रकारसे (दैवसे) मनाती हैं कि 'कबतक अपने पैरों चलकर मेरा लाल मुझे देखने दौड़कर आने लगेगा।'

राग कान्हरौ

[५६]

हरि कौ बिमल जस गावति गोपंगना ।
मनिमय आँगन नंदराइ कौ, बाल गोपाल करैं तहँ रँगना ॥
गिरि-गिरि परत घुटुरुवनि रेंगत, खेलत हैं दोउ छगना-मगना ।
धूसरि धूरि दुहूँ तन मंडित, मातु जसोदा लेति उछँगना ॥
बसुधा त्रिपद करत नहिं आलस तिनहिं कठिन भयौ देहरी उलँघना।
सूरदास प्रभु ब्रज-बधु निरखति, रुचिर हार हिय सोहत बघना ॥

गोपनारियाँ हरिके निर्मल यशका गान कर रही हैं। श्रीनन्दरायका आँगन मणिजटित है, वहाँ गोपाल बालरूपमें घुटनों सरकते हैं। (उठनेके प्रयत्नमें) वे गिर-गिर पड़ते हैं, फिर घुटनों चलने लगते हैं। दोनों भाई बलराम-घनश्याम खेल रहे हैं। धूलिसे धूसर दोनोंके शरीर सुन्दर लग रहे हैं, माता यशोदा उन्हें गोदमें ले लेती हैं। (वामनावतारमें) पूरी पृथ्वीको तीन पदमें नाप लेनेमें जो नहीं थके, (गोकुलकी शिशु-क्रीड़ामें) उनके लिये चौखट पार करना कठिन हो गया है। सूरदासजी कहते हैं—मेरे स्वामीके वक्षःस्थलपर सुन्दर हार तथा बघनखा शोभित हो रहा है, व्रजकी गोपियाँ उनकी इस शोभाको देख रही हैं।

राग सूहौ बिलावल

[५७]

चलन चहत पाइनि गोपाल ।
लए लाइ अँगुरी नँदरानी, सुंदर स्याम तमाल ॥
डगमगात गिरि परत पानि पर, भुज भ्राजत नँदलाल ।
जनु सिर पर ससि जानि अधोमुख, धुकत नलिनि नमि नाल ॥
धूरि-धौत तन, अंजन नैननि, चलत लटपटी चाल ।
चरन रनित नूपुर-धुनि, मानौ बिहरत बाल मराल ॥

लट लटकनि सिर चारु चखौड़ा, सुठि सोभा सिसु भाल।
सूरदास ऐसौ सुख निरखत, जग जीजै बहु काल॥

गोपाल पैरोंसे चलना चाहते हैं। श्रीनन्दरानीने उन तमालके समान श्यामसुन्दरको अपनी अंगुलियोंका सहारा पकड़ा दिया है। नन्दनन्दन लड़खड़ाकर हाथोंके बल गिर पड़ते हैं, उस समय उनकी भुजाएँ ऐसी शोभा देती हैं मानो अपने मस्तकपर चन्द्रमाको समझकर दो कमल अपनी नाल लटकाकर नीचे मुख किये झुक गये हैं। शरीर धूलि-धूसरित है, नेत्रोंमें अञ्जन लगा है, लड़खड़ाती चालसे चलते हैं, चरणोंमें ध्वनि करते नूपुर इस प्रकार बज रहे हैं मानो हंस-शावक क्रीड़ा कर रहे हों। मस्तकपर अलकें लटक रही हैं, बड़ा सुन्दर डिठौना (काजलका टीका) मनोहर भालपर लगा है, यह शिशु-शोभा अत्यन्त मनोहर है। सूरदासजी कहते हैं कि ऐसे सुखरूपका दर्शन करते हुए तो संसारमें बहुत समयतक जीवित रहना चाहिये। (इसके आगे अन्य सभी लोकोंके सुख तुच्छ हैं।)

राग बिलावल

[५८]

सिखवति चलन जसोदा मैया।
अरबराइ कर पानि गहावत, डगमगाइ धरनी धरै पैया॥
कबहुँक सुंदर बदन बिलोकति, उर आनँद भरि लेति बलैया।
कबहुँक कुल-देवता मनावति, चिरजीवहु मेरौ कुँवर कन्हैया॥
कबहुँक बल कौं टेरि बुलावति, इहिं आँगन खेलौ दोउ भैया।
सूरदास स्वामी की लीला, अति प्रताप बिलसत नँदरैया॥

माता यशोदा (श्यामको) चलना सिखा रही हैं। जब वे लड़खड़ाने लगते हैं, तब उनके हाथोंमें अपना हाथ पकड़ा देती हैं, डगमगाते चरण वे पृथ्वीपर रखते हैं। कभी उनका सुन्दर मुख देखकर माताका हृदय आनन्दसे पूर्ण हो जाता है, वे बलैया लेने लगती हैं। कभी कुल-देवता मनाने

लगती हैं कि 'मेरा कुँवर कन्हाई चिरजीवी हो।' कभी पुकारकर बलरामको बुलाती हैं (और कहती हैं—) 'दोनों भाई इसी आँगनमें मेरे सामने खेलो।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीकी यह लीला है कि श्रीनन्दरायजीका प्रताप और वैभव अत्यन्त बढ़ गया है।

[५९]

भावत हरि कौ बाल-विनोद।
स्याम-राम-मुख निरखि-निरखि, सुख-मुदित रोहिनी, जननि जसोद॥
आँगन-पंक-राग तन सोभित, चल नूपुर-धुनि सुनि मन मोद।
परम सनेह बढ़ावत मातनि, रबकि-रबकि हरि बैठत गोद॥
आनँद-कंद, सकल सुखदायक, निसि-दिन रहत केलि-रस ओद।
सूरदास प्रभु अबुंज-लोचन, फिरि-फिरि चितवत ब्रज-जन-कोद॥

हरिका बाल-विनोद बहुत प्रिय लगता है। घनश्याम और बलराम-के मुखोंको देख-देखकर माता रोहिणी और मैया यशोदा आनन्दसे प्रमुदित होती हैं। आँगनकी कीचसे दोनों भाइयोंके शरीर सने शोभित हो रहे हैं। चलते समय नूपुरकी ध्वनि होती, जिसे सुनकर मनमें अत्यन्त आह्लाद होता है। आनन्दकन्द, समस्त सुखोंके दाता हरि रात-दिन क्रीड़ाके आनन्दरसमें भींगे रहते हैं। सूरदासके ये कमललोचन स्वामी बार-बार मुड़-मुड़कर व्रजजनोंकी ओर देखते हैं।

राग सूहौ

[६०]

सूच्छम चरन चलावत बल करि।
अटपटात, कर देति सुंदरी, उठत तबै सुजतन तन-मन धरि॥
मृदु पद धरत धरनि ठहरात न, इत-उत भुज जुग लै-लै भरि-भरि।
पुलकित सुमुखी भई स्याम-रस ज्यौं जल मैं काँची गागरि गरि॥
सूरदास सिसुता-सुख जलनिधि, कहँ लौं कहौं नाहिं कोउ समसरि।
विबुधनि मनतर मान रमत ब्रज, निरखत जसुमति सुख छिन-पल-घरि॥

(श्यामसुन्दर) छोटे-छोटे चरणोंको प्रयत्न करके चलाते हैं। (चलनेके लिये जोर लगा रहे हैं।) जब लड़खड़ाते हैं, तब माता हाथोंका सहारा देती हैं, फिर भली प्रकार प्रयत्नमें मन और पूरा शरीर लगाकर उठ खड़े होते हैं। कोमल चरण पृथ्वीपर रखते तो हैं पर वह ठहरता नहीं है, पर माता दोनों ओर हाथ फैलाकर भुजाओंके बीचमें पकड़कर बार-बार सम्हाल लेती हैं, सुमुखी माता श्यामसुन्दरकी क्रीड़ाके रसमें पुलकित हो रही हैं (और ऐसी निमग्न हो गयी हैं) जैसे पानीमें कच्चा घड़ा गल गया हो। सूरदासजी कहते हैं कि श्याम तो बाल-सुखके समुद्र हैं, कहाँतक वर्णन करूँ, कोई उनकी तुलना करने योग्य नहीं है। देवताओंको भी अपने मनसे तुच्छ समझकर ये व्रजमें क्रीड़ा कर रहे हैं, जिसे माता यशोदा आनन्दित हुई प्रत्येक पल, प्रत्येक क्षण, प्रत्येक घड़ी देख रही हैं।

राग बिलावल

[६१]

बाल-विनोद आँगन की डोलनि।
मनिमय भूमि नंद कैं आलय, बलि-बलि जाउँ तोतरे बोलनि॥
कठुला कंठ कुटिल केहरि-नख, बज्र-माल बहु लाल अमोलनि।
बदन सरोज तिलक गोरोचन, लट लटकनि मधुकर-गति डोलनि॥
कर नवनीत परस आनन सौं, कछुक खात, कछु लग्यो कपोलनि।
कहि जन सूर कहाँ लौं बरनौं, धन्य नंद जीवन जग तोलनि॥

नन्दभवनके आँगनकी मणिमय भूमिपर बाल-क्रीड़ासे श्यामके घूमने तथा तोतली वाणीपर मैं बार-बार बलिहारी जाता हूँ। गलेमें कठुला है, टेढ़े नखोंवाला बघनखा है और हीरोंकी माला है, जिसमें बहुतसे अमूल्य लाल लगे हैं, कमलके समान मुख है, गोरोचनका तिलक लगा है, अलकें लटकी हुई हैं और भौंरोंके समान हिलती हैं। हाथमें लिये मक्खनको मुखसे लगाते हैं, कुछ खाते हैं और कुछ कपोलोंमें लग गया है। यह सेवक सूरदास कहाँतक वर्णन करे, श्रीनन्दरायजीका जीवन धन्य है— संसारमें अपनी तुलना वह स्वयं ही है।

[६२]

गहे अँगुरिया ललन की, नँद चलन सिखावत।
अरबराइ गिरि परत हैं, कर टेकि उठावत॥
बार-बार बकि स्याम सौं, कछु बोल बुलावत।
दुहुँघाँ द्वै दँतुली भईं, मुख अति छबि पावत॥
कबहुँ कान्ह-कर छाँड़ि नँद, पग द्वैक रिंगावत।
कबहुँ धरनि पर बैठि कै, मन मैं कछु गावत॥
कबहुँ उलटि चलैं धाम कौं, घुटुरुनि करि धावत।
सूर स्याम-मुख लखि महर, मन हरष बढ़ावत॥

श्रीनन्दजी अपने लालकी अँगुली पकड़कर उन्हें चलना सिखला रहे हैं। (श्याम) लड़खड़ाकर गिर पड़ते हैं, तब हाथका सहारा देकर उन्हें उठाते हैं। बार-बार श्यामसे कुछ कहकर उनसे भी कुछ बुलवाते हैं। मोहनके (मुखमें) दोनों ओर ऊपर-नीचे दो-दो दँतुलियाँ (छोटे दाँत) निकल आयी हैं, इससे उनका मुख अत्यन्त शोभित हो रहा है। कभी कन्हाई श्रीनन्दजी-का हाथ छोड़कर दो पद चलता है, कभी पृथ्वीपर बैठकर मन-ही-मन कुछ गाता है। कभी मुड़कर घुटनोंके बल भागता घरके भीतरकी ओर चल पड़ता है। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरका मुख देख-देखकर व्रजराजके हृदयमें आनन्द बढ़ता जाता है।

राग धनाश्री

[६३]

कान्ह चलत पग द्वै-द्वै धरनी।
जो मन मैं अभिलाष करति ही, सो देखति नँद-घरनी॥
रुनुक-झुनुक नूपुर पग बाजत, धुनि अतिहीं मन-हरनी।
बैठि जात पुनि उठत तुरतहीं, सो छबि जाइ न बरनी॥
व्रज-जुवती सब देखि थकित भईं, सुंदरता की सरनी।
चिरजीवहु जसुदा कौ नंदन सूरदास कौं तरनी॥

कन्हाई अब पृथ्वीपर दो-दो पग चल लेता है। श्रीनन्द-रानी अपने मनमें जो अभिलाषा करती थीं, उसे अब (प्रत्यक्ष) देख रही हैं। (मोहनके) चरणोंमें रुनझुन नूपुर बजते हैं, जिनकी ध्वनि मनको अतिशय हरण करनेवाली है। वे बैठ जाते हैं और फिर तुरंत उठ खड़े होते हैं—इस शोभाका तो वर्णन ही नहीं हो सकता। सुन्दरताके इस अद्भुत ढंगको देखकर व्रजकी सब युवतियाँ थकित हो गयी हैं। सूरदासके लिये (भवसागरकी) नौकारूप श्रीयशोदानन्दन चिरजीवी हों।

राग बिलावल

[६४]

चलत स्यामघन राजत, बाजति पैंजनि पग-पग चारु मनोहर।
डगमगात डोलत आँगन मैं, निरखि बिनोद मगन सुर-मुनि-नर॥
उदित मुदित अति जननि जसोदा, पाछैं फिरति गहे अँगुरी कर।
मनौ धेनु तृन छाँड़ि बच्छ-हित, प्रेम द्रवित चित स्रवत पयोधर॥
कुंडल लोल कपोल बिराजत, लटकति ललित लटुरिया भ्रू पर।
सूर स्याम-सुंदर अवलोकत बिहरत बाल-गोपाल नंद-घर॥

घनश्याम चलते हुए अत्यन्त शोभित होते हैं, सुन्दर मनोहारी पैंजनी प्रत्येक पद रखनेके साथ बज रही है। आँगनमें कन्हाई डगमगाते हुए चलते हैं, उनकी इस क्रीड़ाको देखकर देवता, मुनि तथा सभी मनुष्य आनन्दमग्न हो रहे हैं। माता यशोदाको अत्यन्त आनन्द हो रहा है, वे हाथसे मोहनकी अँगुली पकड़े साथ-साथ घूम रही हैं, मानो बछड़ेके प्रेमसे गायने तृण चरना छोड़ दिया है। उनका हृदय प्रेमसे पिघल गया है और स्तनोंसे दूध टपक रहा है। मोहनके कपोलोंपर चञ्चल कुंडल शोभा दे रहे हैं, भौंहोंतक सुन्दर बालोंकी लटें लटक रही हैं। बालगोपाल रूपसे व्रजराज नन्दजीके भवनमें क्रीड़ा करते श्यामसुन्दरको सूरदास देख रहा है।

राग गौरी

[६५]

भीतर तैं बाहर लौं आवत।
घर-आँगन अति चलत सुगम भए, देहरि अँटकावत॥
गिरि-गिरि परत, जात नहिं उलँघी, अति स्रम होत नघावत।
अहुँठ पैग बसुधा सब कीनी, धाम अवधि बिरमावत॥
मन हीं मन बलबीर कहत हैं, ऐसे रंग बनावत।
सूरदास प्रभु अगनित महिमा, भगतनि कैं मन भावत॥

कन्हाई घरके भीतरसे अब बाहरतक आ जाते हैं। घरमें और आँगनमें चलना अब उनके लिये सुगम हो गया है; किंतु देहली रोक लेती है। उसे लाँघा नहीं जाता है, लाँघनेमें बड़ा परिश्रम होता है, बार-बार गिर पड़ते हैं। बलरामजी (यह देखकर) मन-ही-मन कहते हैं—'इन्होंने (वामनावतारमें) पूरी पृथ्वी तो साढ़े तीन पैरमें नाप ली और ऐसा रंग-ढंग बनाये हैं कि घरकी देहली इन्हें रोक रही है।' सूरदासके स्वामीकी महिमा गणनामें नहीं आती, वह भक्तोंके चित्तको रुचती (आनन्दित करती)है।

राग धनाश्री

[६६]

चलत देखि जसुमति सुख पावै।
ठुमुकि-ठुमुकि पग धरनी रेंगत, जननी देखि दिखावै॥
देहरि लौं चलि जात, बहुरि फिरि-फिरि इत हीं कौं आवै।
गिरि-गिरि परत, बनत नहिं नाँघत सुर-मुनि सोच करावै॥
कोटि ब्रह्मंड करत छिन भीतर, हरत बिलंब न लावै।
ताकौं लिये नंद की रानी, नाना खेल खिलावै॥
तब जसुमति कर टेकि स्याम कौ, क्रम-क्रम करि उतरावै।
सूरदास प्रभु देखि-देखि, सुर-नर-मुनि बुद्धि भुलावै॥

(कन्हाईको) चलते देखकर माता यशोदा आनन्दित होती हैं। वे पृथ्वीपर ठुमुक-ठुमुककर (रुक-रुककर) चरण रखकर चलते हैं और माताको देखकर उसे (अपना चलना) दिखलाते हैं (कि मैया, अब मैं चलने लगा)। देहलीतक चले जाते हैं और फिर बार-बार इधर ही (घरमें) लौट आते हैं। (देहली लाँघनेमें) गिर-गिर पड़ते हैं, लाँघते नहीं बनता, इस क्रीड़ासे वे देवताओं और मुनियोंके मनमें भी संदेह उत्पन्न कर देते हैं (कि यह कैसी लीला है)। जो करोड़ों ब्रह्माण्डोंका एक क्षणमें निर्माण कर देते हैं और फिर उनको नष्ट करनेमें भी देर नहीं लगाते, उन्हें अपने साथ लेकर श्रीनन्दरानी नाना प्रकारके खेल खेलाती हैं। (जब देहरी लाँघते समय गिर पड़ते हैं) तब श्रीयशोदाजी हाथ पकड़कर श्यामसुन्दरको धीरे-धीरे देहली पार कराती हैं। सूरदासके स्वामीको देख-देखकर देवता, मनुष्य और मुनि भी अपनी बुद्धि विस्मृत कर देते हैं (विचार-शक्ति खोकर मुग्ध बन जाते हैं)।

राग भैरव

[६७]

सो बल कहा भयौ भगवान ?
जिहिं बल मीन-रूप जल थाह्यौ, लियौ निगम, हति असुर-परान ॥
जिहिं बल कमठ-पीठि पर गिरि धरि,सजल सिंधु मथि कियौ बिमान
जिहिं बल रूप बराह दसन पर, राखी पुहुमी पुहुप समान ॥
जिहिं बल हिरनकसिप-उर फार्‍यौ, भए भगत कौं कृपानिधान।
जिहिं बल बलि बंधन करि पठयौ, बसुधा त्रैपद करी प्रमान ॥
जिहिं बल बिप्र तिलक दै थाप्यौ, रच्छा करी आप बिदमान।
जिहिं बल रावन के सिर काटे, कियौ बिभीषन नृपति निदान ॥
जिहिं बल जामवंत-मद मेट्यौ, जिहिं बल भू-बिनती सुनि कान।
सूरदास अब धाम-देहरी चढ़ि न सकत प्रभु खरे अजान ॥

भगवान् ! आपका वह बल क्या हो गया ? जिस बलसे आपने मत्स्यावतार धारण करके (प्रलयसमुद्र) के जलको थहा लिया और असुर (हयग्रीव) को मारकर वेदोंको ले आये, जिस बलसे आपने कच्छप-रूप लेकर पीठपर सुमेरु पर्वतको धारण किया और जिस बलसे क्षीरसागरका मन्थन करके स्वर्गकी (स्वर्गमें देवताओंकी) प्रतिष्ठा की, जिस बलसे वाराहरूप धारणकर पृथ्वीको आपने दाँतोंपर एक पुष्पके समान उठा लिया, जिस बलसे (नृसिंहरूप धारण करके) हिरण्यकशिपुका हृदय आपने चीर डाला और अपने भक्त (प्रह्लाद) के लिये कृपानिधान बन गये, जिस बलसे आपने पृथ्वीको तीन पदमें नाप लिया और राजा बलिको बाँधकर सुतल भेज दिया, जिस बलसे स्वयं उपस्थित होकर आपने (परशुरामरूपमें) ब्राह्मणोंकी रक्षा की और उन्हें राज्यतिलक देकर प्रतिष्ठित किया (पृथ्वीका राज्य ब्राह्मणोंको दे दिया), जिस बलसे आपने (रामावतारमें) रावणके मस्तक काटे और विभीषणको (लंकाका) निर्भय नरेश बनाया, जिस बलसे (द्वन्द्वयुद्ध करके) जाम्बवान्के बलके गर्वको आपने दूर किया और जिस बलसे पृथ्वीकी प्रार्थना सुनी (भू-भार-हरणके लिये अवतार लिया, वह बल कहाँ गया ?) सूरदासजी कहते हैं—प्रभो ! आप तो अब सचमुच अनजान (भोले शिशु) बन गये हैं और घरकी देहलीपर भी चढ़ नहीं पाते हैं ।

राग आसावरी

[६८]

देखो अद्भुत अबिगत की गति, कैसौ रूप धर्‌यौ है (हो) !
तीनि लोक जाकें उदर-भवन,सो सूप कैं कोन पर्‌यौ है (हो) !
जाकैं नाल भए ब्रह्मादिक, सकल जोग ब्रत साध्यौ (हो) !
ताकौ नाल छीनि ब्रज-जुवती बाँटि तगा सौं बाँध्यौ (हो) !
जिहिं मुख कौं समाधि सिव साधी आराधन ठहराने (हो) !
सो मुख चूमति महरि जसोदा, दूध-लार लपटाने (हो) !

जिन स्रवननि जन की बिपदा सुनि, गरुड़ासन तजि धावै (हो) !
तिन स्रवननि ह्वै निकट जसोदा, हलरावै अरु गावै (हो) !
बिस्व-भरन-पोषन, सब समरथ, माखन-काज अरे हैं (हो) !
रूप बिराट कोटि प्रति रोमनि, पलना माँझ परे हैं (हो) !
जिहिं भुज बल प्रहलाद उबार्‌यौ, हिरनकसिप उर फारे (हो) !
सो भुज पकरि कहति ब्रजनारी, ठाढ़े होहु लला रे (हो) !
जाकौ ध्यान न पायौ सुर-मुनि, संभु समाधि न टारी (हो) !
सोई सूर प्रगट या ब्रज मैं, गोकुल-गोप-बिहारी (हो) !

अविज्ञात-गति प्रभुकी यह अद्‌भुत लीला तो देखो ! (इन्होंने) कैसा रूप धारण किया है। तीनों लोक जिसके उदररूपी भवनमें रहते हैं, वह (अवतार लेकर) सूपके कोनेमें पड़ा था। जिसकी (नाभिसे निकले) कमलनालसे ब्रह्माजी तथा ब्रह्मासे सभी देवता उत्पन्न हुए, जिन्होंने सभी योग और व्रतोंकी साधना की, उसी (परम पुरुष) की नालको काट-कर व्रजयुवतियोंने बँटे हुए धागेसे बाँधा। जिस श्रीमुखका दर्शन करनेके लिये आराधनामें एकाग्र होकर शंकरजी समाधि लगाते हैं, दूधकी लारसे सने उसी मुखका व्रजरानी यशोदाजी चुम्बन करती हैं। जिन कानोंसे भक्तोंकी विपत्ति सुनकर गरुड़को भी छोड़कर प्रभु दौड़ पड़ते हैं, उन्हीं कानोंके निकट मुख ले जाकर यशोदाजी थपकी देते हुए (लोरी) गाती हैं। जो पूरे विश्वका भरण-पोषण करते हैं और जो सर्वसमर्थ हैं, वे मक्खन पानेके लिये हठ कर रहे हैं। जिनके विराट् रूपके एक-एक रोममें कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड हैं, वे पलनेमें पड़े हैं। जिस भुजाके बलसे हिरण्यकशिपुका हृदय फाड़कर प्रह्लादकी रक्षा की, (आज) उसी भुजाको पकड़कर व्रजकी नारियाँ कहती हैं—'लाल ! खड़ा तो हो जा !' जिसको देवता और मुनि ध्यानमें भी नहीं पाते, शंकरजी जिनसे समाधि (चित्तकी पूर्ण एकाग्रता) नहीं हटा पाते, सूरदासजी कहते हैं कि वही प्रभु गोकुलके गोपोंमें क्रीड़ा करनेके लिये इस व्रजभूमिमें प्रकट हुए हैं।

राग अहीरी

[६९]

साँवरे बलि-बलि बाल-गोविंद । अति सुख पूरन परमानंद ॥
तीनि पैंड जाके धरनि न आवै । ताहि जसोदा चलन सिखावै ॥
जाकी चितवनि काल डराई । ताहि महरि कर-लकुटि दिखाई ॥
जाकौ नाम कोटि भ्रम टारै । तापर राई-लोन उतारै ॥
सेवक सूर कहा कहि गावै । कृपा भई जो भक्तिहिं पावै ॥

श्यामसुन्दर ! बालगोविन्द ! तुमपर बार-बार बलिहारी । तुम अत्यन्त सुखदायी तथा पूर्ण परमानन्दरूप हो । (देखो तो) पूरी पृथ्वी (वामनावतारमें) जिसके तीन पद भी नहीं हुई, उसीको मैया यशोदा चलना सिखला रही हैं, जिसके देखनेसे काल भी भयभीत हो जाता है, व्रजरानीने हाथमें छड़ी लेकर उसे दिखलाया (डाँटा) । जिसका नाम ही करोड़ों भ्रमोंको दूर कर देता है, (नजर न लगे, इसलिये) मैया उसपर राई-नमक उतारती हैं । यह सेवक सूरदास आपके गुणोंका कैसे वर्णन करे, आपकी भक्ति मुझे यदि मिल जाय तो यह आपकी (महती) कृपा हुई समझूँगा ।

राग आसावरी

[७०]

आनँद-प्रेम उमंगि जसोदा, खरी गुपाल खिलावै ।
कबहुँक हिलकै-किलकै जननी मन-सुख-सिंधु बढ़ावै ॥
दै करताल बजावति, गावति, राग अनूप मल्हावै ।
कबहुँक पल्लव पानि गहावै, आँगन माँझ रिंगावै ॥
सिव, सनकादि, सुकादि, ब्रह्मादिक खोजत अंत न पावैं ।
गोद लिए ताकों हलरावै तोतरे बैन बुलावै ॥

मोहे सुर, नर, किन्नर, मुनिजन, रबि रथ नाहिं चलावै ।
मोहि रहीं ब्रज की जुवती सब, सूरदास जस गावै ॥

आनन्द और प्रेमसे उमंगमें भरी यशोदाजी खड़ी होकर (गोदमें लेकर) गोपालको खेला रही हैं । कभी वे उछलते हैं, कभी किलकारी मारते हैं, जिससे मैयाके चित्तमें सुखसागरको अभिवर्धित करते हैं । माता ताली बजाती है और अनुपम रागसे लोरी गाकर दुलार करती है । कभी अपने पल्लवके समान कोमल हाथ पकड़ाकर आँगनमें चलाती है । शिव, सनकादि ऋषि, शुकदेवादि परमहंस तथा ब्रह्मादि देवता ढूँढ़कर भी जिनका (जिनकी महिमाका) पार नहीं पाते, मैया उन्हींको गोदमें लेकर हिलाती (झुलाती) है और तोतली वाणी बुलवाती है । देवता, मनुष्य, किन्नर तथा मुनिगण—सब (इस लीलाको देखकर) मुग्ध हो रहे हैं, सूर्य (लीला-दर्शनसे मुग्ध होकर) अपने रथको आगे नहीं चलाते हैं, व्रजकी सभी युवतियाँ (इस लीलापर) मुग्ध हो रही हैं । सूरदास (इन्हीं श्यामका) सुयश गा रहा है ।

राग कान्हरौ

[७१]

हरि हरि हँसत मेरौ माधैया ।
देहरि चढ़त परत गिरि-गिरि, कर-पल्लव गहति जु मैया ॥
भक्ति-हेत जसुदा के आगैं, धरनी चरन धरैया ।
जिनि चरननि छलियौ बलि राजा, नख गंगा जु बहैया ॥
जिहिं सरूप मोहे ब्रह्मादिक, रबि-ससि कोटि उगैया ।
सूरदास तिन प्रभु चरननि की, बलि-बलि मैं बलि जैया ॥

हरि-हरि ! (कितने आनन्दकी बात है) मेरा माधव हँस रहा है । देहलीपर चढ़ते समय वह बार-बार गिर पड़ता है, मैया उसके करपल्लवको पकड़कर सहारा देती है । भक्तिके कारण (प्रेम-परवश) माता यशोदाके

आगे वह पृथ्वीपर चरण रख रहा है (अवतरित हुआ है)। जिन चरणोंसे (जगत्को तीन पदमें नापकर) बलि राजाको उसने छला और अपने चरणनखसे गङ्गाजीको (उत्पन्न करके) प्रवाहित किया, जिसके स्वरूपसे ब्रह्मादि देवता मोहित (आश्चर्यचकित) हो रहे, जिस (चरणके नखसे) करोड़ों सूर्य-चन्द्र उगते (प्रकाशित होते) हैं, सूरदासजी कहते हैं—अपने स्वामीके उन्हीं चरणोंपर बार-बार मैं बलिहारी जाता हूँ ।

[७२]

झुनक स्याम की पैजनियाँ ।
जसुमति-सुत कौं चलन सिखावति, अँगुरी गहि-गहि दोउ जनियाँ ॥
स्याम बरन पर पीत झँगुलिया, सीस कुलहिया चौतनियाँ ।
जाकौं ब्रह्मा पार न पावत, ताहि खिलावति ग्वालिनियाँ ॥
दूरि न जाहु निकट ही खेलौ, मैं बलिहारी रेंगनियाँ ।
सूरदास जसुमति बलिहारी, सुतहिं खिलावति लै कनियाँ ॥

श्यामसुन्दरकी पैंजनी रुनझुन-रुनझुन कर रही है । (माता रोहिणी और) मैया यशोदा—दोनों जनी अँगुली पकड़कर अपने पुत्रको चलना सिखला रही हैं । (कन्हाईके) श्याम रंगके शरीरपर पीला कुर्ता है और मस्तकपर चौकोर टोपी है । जिसका पार (सृष्टिकर्ता) ब्रह्माजी भी नहीं पाते, (आज) उसी (मोहन) को गोपियाँ खेला रही हैं । (मैया कहती है—) 'लाल ! मैं तुम्हारे रिंगण (घुटनों सरकने) पर बलिहारी हूँ, दूर मत जाओ ! (मेरे) पास ही खेलो !' सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजी अपने पुत्रपर न्यौछावर हो रही हैं, वे उन्हें गोदमें लेकर खेला रही हैं ।

[७३]

चलत लाल पैजनि के चाइ ।
पुनि-पुनि होत नयौ-नयौ आनँद, पुनि-पुनि निरखत पाइ ॥

छोटौ बदन छोटियै झिंगुली, कटि किंकिनी-बनाइ।
राजत जंत्र-हार, केहरि-नख, पहुँची रतन-जराइ॥
भाल तिलक पख स्याम चखौड़ा जननी लेति बलाइ।
तनक लाल नवनीत लिए कर, सूरज बलि-बलि जाइ॥

लाल (श्यामसुन्दर) पैंजनीके चावसे (नूपुर-ध्वनिसे आनन्दित होकर) चलते हैं। बार-बार उन्हें नया-नया आनन्द (उल्लास) होता है, बार-बार वे अपने चरणोंको देखते हैं। छोटा-सा मुख है, छोटा-सा कुर्ता पहिने हैं और कटिमें करधनी सजी है। (गलेमें) यन्त्रयुक्त हार तथा बघनखा शोभित है। (भुजाओंमें) रत्नजटित पहुँची (अंगद) हैं, ललाट-पर तिलक लगा है तथा काला डिठौना है, माता उनकी बलैयाँ ले रही हैं, लाल (श्याम) अपने हाथपर थोड़ा-सा माखन लिये हैं, (उनकी इस छटापर) सूरदास बार-बार बलिहारी जाता है।

राग आसावरी

[७४]

मैं देख्यौ जसुदा कौ नंदन, खेलत आँगन बारौ री।
ततछन प्रान पलटि गयौ मेरौ, तन-मन ह्वै गयौ कारौ री॥
देखत आनि सँच्यौ उर अंतर, दै पलकनि कौ तारौ री।
मोहिं भ्रम भयौ सखी उर अपनैं, चहुँ दिसि भयौ उज्यारौ री॥
जौ गुंजा सम तुलत सुमेरहिं, ताहू तैं अति भारौ री।
जैसैं बूँद परत बारिधि मैं, त्यौं गुन ग्यान हमारौ री॥
हौं उन माहँ कि वै मोहिं महियाँ, परत न देह सँभारौ री।
तरु मैं बीज कि बीज माहिं तरु, दुहुँ मैं एक न न्यारौ री॥
जल-थल-नभ-कानन, घर-भीतर, जहँ लौं दृष्टि पसारौ री।
तित ही तित मेरे नैननि आगैं निरतत नंद-दुलारौ री॥
तजी लाज कुलकानि लोक की, पति गुरुजन प्यौसारौ री।
जिनकी सकुच देहरी दुर्लभ, तिन मैं मूँड़ उघारौ री!॥

टोना-टामनि जंत्र मंत्र करि, ध्यायौ देव-दुआरौ री!
सासु-ननद घर-घर लिए डोलति, याकौ रोग बिचारौ री!॥
कहौं कहा कछु कहत न आवै, औ रस लागत खारौ री।
इनहिं स्वाद जो लुब्ध सूर सोइ जानत चाखनहारौ री॥

(एक गोपिका कहती है—) 'मैंने आँगनमें खेलते बालक यशोदा-नन्दनको (एक दिन) देखा, तत्काल ही मेरे प्राण (मेरा जीवन) बदल गया, मेरा शरीर और मन भी काला (श्याममय) हो गया। मैंने उसे देखते ही लाकर हृदयमें संचित कर दिया (बैठा दिया) और पलकोंका ताला लगा दिया। लेकिन सखी! मुझे मनमें बड़ा संदेह हुआ कि (मैंने बैठाया तो श्यामको, किंतु) हृदयमें चारों ओर प्रकाश हो गया। जैसे गुंजा (घुँघची)से सुमेरुकी तुलना हो (मेरी अपेक्षा श्याम तो) उससे भी बहुत भारी (महान्) थे। जैसे (जलकी) बूँद समुद्रमें पड़ जाय, वैसे ही मेरे गुण और ज्ञान उसमें लीन हो गये। पता नहीं, मैं उनमें हूँ या वे मुझमें हैं, मुझे तो अब अपने शरीरकी सुधि भी नहीं रहती। वृक्षमें बीज है या बीजमें वृक्ष, (इस उलझनसे लाभ क्या? सच तो यह है कि) दोनोंमेंसे कोई पृथक् नहीं है! (इसी प्रकार मैं श्यामसे एक हो गयी। अब तो यह दशा है कि) जल, स्थल तथा आकाशमें, वनमें या घरके भीतर जहाँ भी दृष्टि जाती है, वहीं-वहीं मेरे नेत्रोंके सम्मुख श्रीनन्दनन्दन नृत्य करते (दीखते) हैं। लोककी लज्जा, कुलीन होनेका संकोच मैंने त्याग दिया। पति, गुरुजन तथा मायके (पिताके घरके लोग) जिनके संकोचसे देहली देखना (द्वारतक आना) मेरे लिये दुर्लभ था, उनके बीच ही नंगे सिर घूमती हूँ (संकोचहीन हो गयी हूँ)। मेरी सासु और ननद मुझे घर-घर लिये घूमती हैं (सबसे कहती हैं—) 'इसके रोगका विचार करो।' (इसे क्या हो गया, यह बताओ तो) टोना-टोटका करती हैं, यन्त्र बाँधती हैं, मन्त्र जपती हैं और देवताओंका ध्यान करके मनौतियाँ करती हैं। मैं क्या कहूँ, कुछ कहते

बन नहीं पड़ता। (संसारके) दूसरे सब रस (सुख) मुझे खारे (दुःखद) लगते हैं।' सूरदासजी कहते हैं—इन (मोहन) के रूप-रसके स्वादका जो लोभी है, उसका आनन्द तो वही—उसको चखनेवाला (उसका रसास्वादन करनेवाला) ही जानता है। (उस रसका वर्णन सम्भव नहीं है)।

[७५]

जब तैं आँगन खेलत देख्यौ, मैं जसुदा कौ पूत री।
तब तैं गृह सौं नातौ टूट्यौ, जैसैं काँचौ सूत री॥
अति बिसाल वारिज-दल-लोचन, राजति काजर-रेख री।
इच्छा सौं मकरंद लेत मनु अलि गोलक के बेष री॥
स्रवन सुनत उतकंठ रहत हैं, जब बोलत तुतरात री।
उमँगै प्रेम नैन-मग ह्वै कै, कापै रोक्यौ जात री॥
दमकति दोउ दूध की दँतियाँ, जगमग जगमग होति री।
मानौ सुंदरता-मंदिर मैं रूप-रतन की ज्योति री॥
सूरदास देखैं सुंदर मुख, आनँद उर न समाइ री।
मानौ कुमुद कामना-पूरन, पूरन इंदुहिं पाइ री॥

(दूसरी गोपिका कहती है—) 'सखी! जबसे मैंने श्रीयशोदानन्दनको आँगनमें खेलते देखा, तबसे घरका सम्बन्ध तो ऐसे टूट गया जैसे कच्चा सूत टूट जाय। उनके अत्यन्त बड़े-बड़े कमलदलके समान लोचनोंमें काजलकी रेखा इस प्रकार शोभित थी मानो नेत्र-गोलकका वेष बनाकर भ्रमर बड़ी चाहसे मकरन्द ले रहे हों। जब वे तुतलाते हुए बोलते हैं, तब उस वाणीको सुननेके लिये कान उत्कण्ठित ही रहते हैं और नेत्रोंके मार्गसे प्रेम उमड़ पड़ता है (प्रेमाश्रु बहने लगते हैं)। भला किससे वे अश्रु रोके जा सकते हैं। दूधकी दोनों दँतुलियाँ (छोटे दाँत) प्रकाशित होते (चमकते) हैं, उनकी ज्योति इस प्रकार जगमग-जगमग करती है मानो सौन्दर्यके मन्दिरमें रूपके रत्नकी ज्योति हो। सूरदासजी कहते हैं कि उस सुन्दर मुखको

देखकर हृदयमें आनन्द समाता नहीं, मानो पूर्ण चन्द्रमाको पाकर कुमुदिनीकी कामना पूर्ण हो गयी हो (वह पूर्ण प्रफुल्लित हो उठी हो) !

राग धनाश्री

[७६]

जसोदा, तेरौ चिरजीवहु गोपाल।
वेगि बढ़ै बल सहित बिरध लट, महरि मनोहर बाल॥
उपजि पर्‌यौ सिसु कर्म-पुन्य-फल, समुद-सीप ज्यौं लाल।
सब गोकुल कौ प्रान-जीवन-धन, बैरिनि कौ उर-साल॥
सूर कितौ सुख पावत लोचन, निरखत घुटुरुनि चाल।
झारत रज लागे मेरी अँखियनि रोग-दोष-जंजाल॥

यशोदाजी ! तुम्हारा गोपाल चिरजीवी हो। व्रजरानी ! तुम्हारा यह मनोहर बालक बलरामके साथ शीघ्र बड़ा हो और दीर्घ बुढ़ापेतक रहे। पुण्य कर्मोंके फलसे यह शिशु इस प्रकार उत्पन्न हुआ है मानो समुद्रकी सीपमें (मोतीके बदले अकस्मात्) लाल उत्पन्न हो जाय। समस्त गोकुल-का यह प्राण है, जीवन-धन है और शत्रुओंके हृदयका कण्टक (उन्हें पीड़ित करनेवाला) है। सूरदासजी कहते हैं—इसका घुटनों चलना देखकर नेत्र कितना असीम आनन्द प्राप्त करते हैं। (गोपिका यह आशीर्वाद देकर मोहनके शरीरमें लगी) धूलि झाड़ती है (और कहती है) 'इस लालके सब रोग, दोष एवं संकट मेरी इन आँखोंको लग जायँ।'

[७७]

मैं मोही तेरैं लाल री।
निपट निकट ह्वै कै तुम निरखौ, सुंदर नैन बिसाल री॥
चंचल दृग अंचल-पट-दुति-छबि, झलकत चहुँ दिसि झालरी।
मनु सेवाल कमल पर अरुझे, भँवत भ्रमर भ्रम-चाल री॥

मुक्ता-बिद्रुम-नील-पीत-मनि, लटकत लटकन भाल री।
मानौ सुक्र-भौम-सनि-गुरु मिलि, ससि कैं बीच रसाल री॥
उपमा बरनि न जाइ सखी री, सुंदर मदन-गोपाल री।
सूर स्याम के ऊपर वारै तन-मन-धन ब्रजबाल री॥

(गोपिका माता यशोदाजीसे कहती है—) 'व्रजरानी ! मैं तो तुम्हारे लालपर मोहित हो गयी हूँ। तुम तनिक अत्यन्त समीप आकर (इसके) सुन्दर बड़े-बड़े नेत्रोंको देखो तो। इसके चञ्चल नेत्र हैं, (मुखपर तुम्हारे) अञ्चलके वस्त्रकी झलक शोभा दे रही है और (मुखके) चारों ओर अलकें लटक रही हैं, मानो सेवारमें उलझे कमलपर दो भ्रमर इधर-उधर घूम रहे हों। मोती, मूँगा, नीलम और पिरोजाकी मणियोंसे जटित लटकन ललाट-पर लटक रही है, मानो शुक्र, मङ्गल, शनि और बृहस्पति चन्द्रमाके ऊपर एकत्र होकर शोभा दे रहे हों। सखी ! सुन्दर मदनगोपालकी उपमाका वर्णन नहीं किया जाता।' सूरदासजी कहते हैं कि व्रजकी स्त्रियाँ श्यामसुन्दरके ऊपर अपना तन, मन, धन न्योछावर किये देती हैं।

राग बिलावल

[७८]

कल बल कै हरि आरि परे।
नव रँग बिमल नवीन जलधि पर, मानहुँ द्वै ससि आनि अरे॥
जे गिरि कमठ सुरासुर सर्पहिं धरत न मन मैं नैंकु डरे।
ते भुज भूषन-भार परत कर गोपिनि के आधार धरे॥
सूर स्याम दधि-भाजन-भीतर निरखत मुख मुख तैं न टरे।
बिबि चंद्रमा मनौ मथि काढ़े, बिहँसनि मनहुँ प्रकास करे॥

कलबल करते (तोतली बोली बोलते हुए) श्याम मचल रहे हैं। (दही मथनेका मटका पकड़े वे ऐसे लगते हैं) मानो नवीन रंगवाले निर्मल नये समुद्र (क्षीरसागर) पर दो चन्द्रमा आकर रुके हों। जिस भुजासे (समुद्र-

मन्थनके समय) मन्दराचलको, कच्छपको, देवताओं तथा दैत्योंको एवं वासुकि नागको धारण करते (सबको सहायता देते) मनमें तनिक भी डरे (हिचके) नहीं, वही भुजाएँ आज आभूषणोंके भारसे गिरी पड़ती हैं (सम्हाली नहीं जातीं)। उन्हें गोपियोंके हाथके आधारपर (गोपीकी भुजापर) रक्खे हुए हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर दहीके मटकेके भीतर अपने मुखका प्रतिबिम्ब देखते हुए, माताके मुखके पाससे अपना मुख हटाते नहीं हैं। ऐसा लगता है मानो (क्षीरसमुद्रका) मन्थन करके दो चन्द्रमा निकाले गये हैं, बार-बार हँसना ही मानो चन्द्रमाका प्रकाश हो रहा है।

[७९]

जब दधि-मथनी टेकि अरै।
आरि करत मटुकी गहि मोहन, बासुकि संभु डरै॥
मंदर डरत, सिंधु पुनि काँपत, फिरि जनि मथन करै।
प्रलय होइ जनि गहौ मथानी, प्रभु मरजाद टरै॥
सुर अरु असुर ठाढ़े सब चितवत, नैननि नीर ढरै।
सूरदास मन मुग्ध जसोदा, मुख दधि-बिंदु परै॥

जब श्यामसुन्दर दही मथनेकी मथानी पकड़कर अड़ गये, उस समय वे तो मटका पकड़कर मचल रहे थे; किंतु वासुकि नाग तथा शंकरजी डरने लगे, मन्दराचल भयभीत हो गया, समुद्र काँपने लगा कि कहीं फिर ये समुद्र-मन्थन न करने लगें। (वे मन-ही-मन प्रार्थना करने लगे—) 'प्रभो ! मथानी मत पकड़ो, कहीं प्रलय न हो जाय, अन्यथा सृष्टिकी मर्यादा नष्ट हो जायगी।' सभी देवता और दैत्य खड़े-खड़े देख रहे हैं, उनके नेत्रोंसे आँसू ढुलक रहा है (कि फिर समुद्र मथना पड़ेगा)। सूरदासजी कहते हैं—(यह सब तो देवलोकमें हो रहा है, पर गोकुलमें दही-मन्थनके कारण) श्यामके मुखपर दहीके छींटे पड़ते हैं, (यह छटा देखकर) मैया यशोदाका मन मुग्ध हो रहा है।

राग बिलावल

[८०]

जब दधि-रिपु हरि हाथ लियौ।
खगपति-अरि डर, असुरनि-संका, बासर-पति आनंद कियौ॥
बिदुखि सिंधु सकुचत, सिव सोचत, गरलादिक किमि जात पियौ?
अति अनुराग संग कमला-तन, प्रफुलित अँग न समात हियौ॥
एकनि दुख, एकनि सुख उपजत, ऐसौ कौन बिनोद कियौ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे गहत ही एक-एक तैं होत बियौ॥

जब श्रीकृष्णचन्द्रने मथानी हाथमें ली, तब वासुकि नाग डरे (कहीं मुझे समुद्र-मन्थनमें फिर रस्सी न बनना पड़े)। दैत्योंके मनमें शङ्का हुई (हमें फिर कहीं समुद्र न मथना पड़े)। सूर्यको आनन्द हुआ (अब प्रलय होगी, अतः मेरा नित्यका भ्रमण बंद होगा)। कष्टके कारण समुद्र संकुचित हो उठा (मैं फिर मथा जाऊँगा)। शंकरजी सोचने लगे कि (एक बार तो किसी प्रकार विष पी लिया, अब इस बारके समुद्र-मन्थनसे निकले) विष आदि (दूषित तत्त्वों) को कैसे पिया जायगा। अत्यन्त प्रेमके कारण (प्रभुसे पुनः मेरा विवाह होगा, यह सोचकर) लक्ष्मीजीका शरीर पुलकित हो रहा है, उनका हृदय आनन्दके मारे शरीरमें समाता नहीं (प्रेमाश्रु बनकर नेत्रोंसे निकलने लगा है)। सूरदासजी कहते हैं—प्रभो ! आपने ऐसा यह क्या विनोद किया है, जिससे कुछ लोगोंको दुःख और कुछको सुख हो रहा है। आपके मथानी पकड़ते ही एक-एक करके यह कुछ दूसरा ही (समुद्र-मन्थनका दृश्य) हो गया है।

राग धनाश्री

[८१]

जब मोहन कर गही मथानी।
परसत कर दधि-माट, नेति, चित उदधि, सैल, बासुकि भय मानी॥

कबहुँक तीनि पैग भुव मापत, कबहुँक देहरि उलँघि न जानी !
कबहुँक सुर-मुनि ध्यान न पावत, कबहुँ खिलावति नंद की रानी !
कबहुँक अमर-खीर नहिं भावत, कबहुँक दधि-माखन रुचि मानी ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, परति न महिमा सेष बखानी ॥

मोहनने जब हाथसे मथानी पकड़ी, तब उनके दहीके मटके और नेती (दही मथनेकी रस्सी) में हाथ लगाते ही क्षीरसागर, मन्दराचल तथा वासुकिनाग अपने मनमें डरने लगे (कहीं फिर समुद्र-मन्थन न हो)। कभी तो ये (विराट् रूपसे) तीन पैंडमें पूरी पृथ्वी माप लेते हैं और कभी देहली पार करना भी इन्हें नहीं आता, कभी तो देवता और मुनिगण इन्हें ध्यानमें भी नहीं पाते और कभी श्रीनन्दरानी यशोदाजी (गोदमें) खेलाती हैं, कभी देवताओंद्वारा अर्पित (यज्ञीय) खीर भी इन्हें रुचिकर नहीं होती और कभी दही और मक्खनको बहुत रुचिकर मानते हैं। सूरदासके स्वामीकी यह लीला है, उनकी महिमाका वर्णन शेषजी भी नहीं कर पाते हैं।

राग बिलावल

[८२]

नंद जू के बारे कान्ह, छाँड़ि दै मथनियाँ ।
बार-बार कहति मातु जसुमति नँदरनियाँ ॥
नैंकु रहौ माखन देउँ मेरे प्रान-धनियाँ ।
आरि जनि करौ, बलि-बलि जाउँ हौं निधनियाँ ॥
जाकौ ध्यान धरैं सबै, सुर-नर-मुनि जनियाँ ।
ताकौ नँदरानी मुख चूमै लिए कनियाँ ॥
सेष सहस आनन गुन गावत नहिं बनियाँ ।
सूर स्याम देखि सबै भूलीं गोप-धनियाँ ॥

श्रीनन्दरानी माता यशोदाजी बार-बार कहती हैं—'व्रजराजके लाड़िले कन्हैया ! मथानी छोड़ तो दे । मेरे प्राणधन (जीवन-सर्वस्व) लाल !

तनिक रुक जा! (मैं तुझे अभी) मक्खन देती हूँ! मैं कंगालिन तुझपर बार-बार न्यौछावर हूँ, हठ मत कर।' जिसका देवता, मनुष्य तथा मुनिगण ध्यान किया करते हैं, श्रीनन्दरानी उसीको गोदमें लिये उसका मुख चूम रही हैं। शेषजी सहस्र मुखसे भी जिसका गुणगान नहीं कर पाते, सूरदासजी कहते हैं कि उसी श्यामसुन्दरको देखकर गोप-नारियाँ अपने आपको भूल गयी हैं।

[८३]

जसुमति दधि मथन करति, बैठी बर धाम अजिर,
ठाढ़े हरि हँसत नान्हि दँतियनि छबि छाजै।
चितवत चित लै चुराइ, सोभा बरनी न जाइ,
मनु मुनि-मन-हरन-काज मोहिनी दल साजै॥
जननि कहति नाचौ तुम, दैहौं नवनीत मोहन,
रुनुक-झुनुक चलत पाइ, नूपुर-धुनि बाजै।
गावत गुन सूरदास, बढ़्यौ जस भुव-अकास,
नाचत त्रैलोकनाथ माखन के काजै॥

परमश्रेष्ठ नन्दभवनके आँगनमें दही मथती हुई श्रीयशोदाजी बैठी हैं। (उनके पास) खड़े श्याम हँस रहे हैं, उनके छोटे-छोटे दाँतोंकी छटा शोभित हो रही है। देखते ही वह चित्तको चुरा लेती है, उसकी शोभाका वर्णन नहीं किया जा सकता, ऐसा लगता है मानो मुनियोंका मन हरण करनेके लिये मोहिनियोंका दल सज्जित हुआ है। मैया कहती है—'मोहन! तुम नाचो तो तुम्हें मक्खन दूँगी' (इससे नाचने लगते हैं)। चरणोंके चलनेसे रुनझुन-रुनझुन नूपुर बज रहे हैं। सूरदास (अपने प्रभुका) गुणगान करते हैं—प्रभो! आपका यह (भक्त-वात्सल्य) सुयश पृथ्वी और स्वर्गादिमें विख्यात हो गया है कि त्रिलोकीके स्वामी (भक्तवत्सलतावश) मक्खनके लिये नाच रहे हैं।

राग आसावरी

[८४]

(एरी) आनँद सौं दधि मथति जसोदा, घमकि मथनियाँ घूमै ।
निरतत लाल ललित मोहन, पग परत अटपटे भू मैं ॥
चारु चखौड़ा पर कुंचित कच, छवि मुक्ता ताहू मैं ।
मनु मकरंद-बिंदु लै मधुकर, सुत प्यावन हित झूमै ॥
बोलत स्याम तोतरी बतियाँ, हँसि-हँसि दतियाँ दूमै ।
सूरदास वारी छवि ऊपर, जननि कमल-मुख चूमै ॥

(गोपिका कहती है—) 'सखी ! मैया यशोदा आनन्दसे दही मथ रही हैं, उनकी मथानी घरघराती हुई घूम रही है । परम सुन्दर मोहनलाल नाच रहे हैं, उनके चरण अटपटे भावसे पृथ्वीपर पड़ रहे हैं । उनके ललाटपर (काजलका) सुन्दर डिठौना (बिन्दु) लगा है, उसपर घुँघराली अलकें झूम रही हैं और उनमें मोती गूँथे हैं; इन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो भ्रमर मकरन्द (पुष्प-मधु) लेकर उसे अपने पुत्रको पिलानेके लिये झूम रहेहैं । श्यामसुन्दर हँस-हँसकर तोतली बातें कहते हैं, उनकी दँतुलियाँ चमक रही हैं ।' सूरदासजी कहते हैं कि उनकी शोभापर न्यौछावर हुई माता उनके कमलमुखका चुम्बन करती हैं ।

राग बिलावल

[८५]

त्यौं-त्यौं मोहन नाचै ज्यौं-ज्यौं रई-घमरकौ होइ (री) ।
तैसियै किंकिनि-धुनि पग-नूपुर, सहज मिले सुर दोइ (री) ॥
कंचन कौ कठुला मनि-मोतिनि, बिच बघनहँ रह्यौ पोइ (री) ।
देखत बनै, कहत नहिं आवै, उपमा कौं नहिं कोइ (री) ॥
निरखि-निरखि सुख नंद-सुवन कौ, सुर-नर आनँद होइ (री) ।
सूर भवन कौ तिमिर नसायौ, बलि गइ जननि जसोइ (री) ॥

जैसे-जैसे मथानीकी घरघराहट होती है, वैसे-वैसे ही मोहन नाच रहे हैं। वैसे ही (कटिकी) किङ्किणी और चरणोंके नूपुर दोनोंके बजनेका स्वर स्वाभाविक रूपसे मिल गया है। (गलेमें) सोनेका कठुला है, मणि और मोतियोंकी मालाके बीचमें बघनखा पिरोया है। यह छटा तो देखते ही बनती है, इसका वर्णन नहीं हो सकता; जिसके साथ इसकी उपमा दी जा सके, ऐसी कोई वस्तु नहीं है। श्रीनन्दनन्दनका श्रीमुख देख-देखकर देवता तथा मनुष्य सभी आनन्दित हो रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं—(अपनी अङ्गकान्तिसे श्यामसुन्दर) भवनके अन्धकारको नष्ट कर चुके हैं (उन्होंने तीनों लोकोंके तमस्को नष्ट कर दिया है)। मैया यशोदा उनपर बलिहारी जाती हैं।

[८६]

प्रात समय दधि मथति जसोदा,
अति सुख कमल-नयन-गुन गावति।
अतिहिं मधुर गति, कंठ सुघर अति,
नंद-सुवन चित हितहि करावति॥
नील बसन तनु, सजल जलद मनु,
दामिनि बिवि भुज-दंड चलावति।
चंद्र-बदन लट लटकि छबीली,
मनहुँ अमृत रस ब्यालि चुरावति॥
गोरस मथत नाद इक उपजत,
किंकिनि-धुनि सुनि स्त्रवन रमावति।
सूर स्याम अँचरा धरि ठाढ़े,
काम कसौटी कसि दिखरावति॥

प्रातःकाल यशोदाजी दही मथते समय अत्यन्त आनन्दसे अपने कमललोचन कुमारके गुण गा रही हैं। बड़े सुन्दर कण्ठसे अत्यन्त मधुर लयमें श्रीनन्दनन्दनके प्रति प्रेमपूर्ण चित्त लगाये हुए गा रही हैं। उनके

शरीरपर नीली साड़ी ऐसी लगती है मानो पानीभरे मेघ हों। बिजलीके समान दोनों भुजाओंको वे हिला रही हैं। उनके चन्द्रमुखपर सुन्दर अलकें ऐसी लटकी हैं, मानो सर्पिणियाँ अमृतरसकी चोरी कर रही हों। दही मथते समय (मथानीका) एक शब्द हो रहा है और उससे मिला करधनीका शब्द सुनती हुई वे अपने कानोंको आनन्द दे रही हैं (उस शब्दमें स्वर मिलाकर गा रही हैं)। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर उनका अञ्चल पकड़कर खड़े हैं, मानो कामदेवको कसौटीपर कसकर दिखला रहे हैं। (कामदेव क्या इतना सुन्दर है ? यह अपनी शोभासे सूचित करते हुए कामके सौन्दर्यकी तुच्छता स्पष्ट कर रहे हैं।)

राग कान्हरौ

[८७]

गोद खिलावति कान्ह सुनी, बड़भागिनि हो नँदरानी।
आनँद की निधि मुख जु लाल कौ, छवि नहिं जाति बखानी॥
गुन अपार बिस्तार परत नहिं कहि निगमागम-बानी।
सूरदास प्रभु कौं लिए जसुमति, चितै-चितै मुसुकानी॥

सुना है कि महाभाग्यवती श्रीनन्दरानी कन्हैयाको गोदमें लेकर खेलाती थीं। लालका मुख तो आनन्दकी निधि (कोष) है, उसकी शोभाका वर्णन नहीं किया जा सकता। उनके गुण अपार हैं, वेद और शास्त्रोंके द्वारा भी उनके विस्तारका वर्णन नहीं हो सकता है ! सूरदासजी कहते हैं कि मेरे ऐसे स्वामीको गोदमें लेकर यशोदाजी उन्हें देख-देखकर मुसकराती (हर्षित होती) थीं।

राग देवगंधार

[८८]

कहन लागे मोहन मैया-मैया।
नंद महर सौं बाबा-बाबा, अरु हलधर सौं भैया॥

ऊँचे चढ़ि-चढ़ि कहति जसोदा, लै-लै नाम कन्हैया।
दूरि खेलन जनि जाहु लला रे, मारैगी काहु की गैया॥
गोपी-ग्वाल करत कौतूहल, घर-घर बजति बधैया।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, चरननि की बलि जैया॥

मोहन अब 'मैया' 'मैया' कहने लगे हैं। वे व्रजराज श्रीनन्दजीको 'बाबा' 'बाबा' कहते हैं और बलरामजीको 'भैया' कहते हैं। यशोदाजी ऊँची अटारीपर चढ़कर श्यामका नाम ले-लेकर (पुकारकर) कहती हैं 'कन्हैया ! मेरे लाल ! दूर खेलने मत जाओ ! किसीकी गाय मार देगी।' गोपियाँ और गोप आनन्द-कौतुक मना रहे हैं, घर-घर बधाई बज रही है। सूरदासजी कहते हैं—'प्रभो ! आपका दर्शन पानेके लिये मैं आपके चरणोंपर ही न्यौछावर हूँ।'

राग बिलावल

[८९]

माखन खात हँसत किलकत हरि, पकरि स्वच्छ घट देख्यौ।
निज प्रतिबिंब निरखि रिस मानत, जानत आन परेख्यौ॥
मन मैं माष करत, कछु बोलत, नंद बबा पै आयौ।
वा घट मैं काहू कै लरिका, मेरौ माखन खायौ॥
महर कंठ लावत, मुख पोंछत, चूमत तिहिं ठाँ आयौ।
हिरदै दिए लख्यौ वा सुत कौं, तातैं अधिक रिसायौ॥
कह्यौ जाइ जसुमति सौंततछन, मैं जननी ! सुत तेरौ।
आजु नंद सुत और कियौ, कछु कियौ न आदर मेरौ॥
जसुमति बाल-बिनोद जानि जिय, उहीं ठौर लै आई।
दोउ कर पकरि डुलावन लागी, घट मैं नहिं छबि पाई॥
कुँवर हँस्यौ आनंद-प्रेम बस, सुख पायौ नँदरानी।
सूरज प्रभु की अद्भुत लीला, जिन जानी तिन जानी॥

हरि मक्खन खाते हुए हँसते जाते थे, किलकारी मारते थे, (इसी समय जलसे भरा) निर्मल घड़ा पकड़कर उन्होंने देखा। उसमें अपने प्रतिबिम्बको देखकर यह समझकर कि यह कोई दूसरा छिपा (मास्वन चुराने या भागनेकी) बाट देखता है, क्रोधित हो गये। मनमें अमर्ष करते हुए, कुछ बोलते हुए नन्दबाबाके पास आये (और बोले-) 'बाबा ! उस घड़ेमें किसीका लड़का (छिपा है)। उसने मेरा मक्खन खा लिया है।' व्रजराज उन्हें गोदमें लेकर गलेसे लगाते, उनके मुखको पोंछते, उसका चुम्बन करते उस स्थानपर आये। (घड़ेमें अपने बाबाको) उस लड़केको हृदयसे लगाये (गोदमें लिये) श्यामने देखा, इससे और अधिक क्रुद्ध हुए। तत्काल श्रीयशोदाजीके पास जाकर बोले-'मैया ! मैं तेरा पुत्र हूँ। नन्दबाबाने तो आज कोई दूसरा पुत्र बना लिया, मेरा कुछ भी आदर नहीं किया।' श्रीयशोदाजीने मनमें समझ लिया कि यह बालकका विनोद है, अतः (श्यामको) उसी स्थानपर ले आयीं और घड़ेको दोनों हाथोंसे पकड़कर हिलाने लगीं; इससे घड़ेमें मोहनका अपना प्रतिबिम्ब नहीं मिला। इससे गोपाललाल आनन्द और प्रेमवश हँस पड़े, श्रीनन्दरानी भी इससे आनन्दित हुईं। सूरदासके स्वामीकी ये अद्भुत लीलाएँ जो जानते हैं, वे ही जानते हैं (अर्थात् कोई-कोई परम भक्त ही इसे जान पाते हैं)।

राग आसावरी

[९०]

बेद-कमल-मुख परसति जननी, अंक लिए सुत रति करि स्याम।
परम सुभग जु अरुन कोमल-रुचि, आनंदित मनु पूरन-काम॥
आलंबित जु पृष्ठ बल सुंदर, परसपरहि चितवत हरि-राम।
झाँकि-उझकि बिहँसत दोऊ सुत, प्रेम-मगन भइ इकटक जाम॥
देखि सरूप न रही कछू सुधि, तोरे तबहिं कंठ तें दाम।
सूरदास प्रभु-सिसु-लीला-रस, आवहु देखि नंद सुख-धाम॥

माता यशोदा अपने पुत्र श्यामसुन्दरको प्रेमपूर्वक गोदमें लिये हैं और उनके वेदमय (जिससे वेदोंकी उत्पत्ति हुई उस) कमलमुखको (दोनों हाथोंसे) छू रही हैं। वह श्रीमुख अत्यन्त सुन्दर है, अरुणाभ है और अत्यन्त कोमल है; स्नेहसे (उसे छूकर माता) आनन्दित हो रही हैं, मानो उनकी समस्त कामनाएँ पूर्ण हो गयीं। उनकी पीठके सहारे सुन्दर बलरामजी उझके हैं, बलराम और श्यामसुन्दर परस्पर एक दूसरेको देख रहे हैं। दोनों पुत्र एक दूसरेको झुककर बार-बार देख रहे हैं। (यह शोभा देखकर) मैया आनन्दमग्न होकर एक प्रहरसे निर्निमेष हो रही है। (पुत्रोंके) स्वरूपको देखकर उसे अपनी कुछ सुधि नहीं रह गयी, उसी समय (दोनोंने मिलकर) माताके गलेकी माला तोड़ दी। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीकी शिशु-लीलाका आनन्द (जिन्हें देखना हो, वे) श्रीनन्दजीके आनन्दमय धाममें देख आवें।

राग गौरी

[९१]

सोभा मेरे स्यामहि पै सोहै।
बलि-बलि जाउँ छबीले मुख की, या उपमा कौं को है॥
या छबि की पटतर दीबे कौं सुकबि कहा टकटोहै?
देखत अंग-अंग प्रति बानक, कोटि मदन-मन छोहै॥
ससि-गन गारि रच्यौ बिधि आनन, बाँके नैननि जोहै।
सूर स्याम-सुंदरता निरखत, मुनि-जन कौ मन मोहै॥

सुन्दरता तो मेरे श्यामपर ही शोभित होती (फबती) है। उनके सुन्दर मुखपर बार-बार बलिहारी जाऊँ; जिसके साथ उसकी (उस मुखकी) उपमा दी जा सके, ऐसा है ही कौन। इस सौन्दर्यकी तुलनामें रखनेके लिये कवि क्यों व्यर्थ इधर-उधर टटोलता है। मोहनके अङ्ग-प्रत्यङ्गकी छटा देखकर करोड़ों कामदेवोंका मन मोहित हो जाता है। (लगता है कि) ब्रह्माने अनेकों चन्द्रों-

को निचोड़कर मोहनका मुख बनाया है, अपने तिरछे नेत्रोंसे यह (श्याम) देख रहा है। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरकी सुन्दरताका दर्शन करते ही मुनिजनोंका मन भी मोहित हो जाता है।

राग सारंग

[९२]

बाल गुपाल! खेलौ, मेरे तात।
बलि-बलि जाउँ मुखारबिंद की, अमिय-बचन बोलौ तुतरात ॥
दुहुँ कर माट गह्यौ नँदनंदन, छिटकि बूँद-दधि परत अघात।
मानौ गज-मुक्ता मरकत पर, सोभित सुभग साँवरे गात ॥
जननी पै माँगत जग-जीवन, दै माखन-रोटी उठि प्रात।
लोटत सूर स्याम पुहुमी पर, चारि पदारथ जाकैं हाथ ॥

(माता कहती हैं–) 'मेरे लाल ! बालगोपाल ! तुम खेलो। मैं तुम्हारे कमलमुखपर बार-बार बलिहारी जाऊँ, तोतली वाणीसे अमृतके समान मधुर बातें कहो।' (किंतु) श्रीनन्दनन्दनने दोनों हाथोंसे (दही मथनेका) मटका पकड़ रखा है, (मटकेसे दही मथनेके कारण) दहीकी बूँदें छिटक-छिटककर पर्याप्त मात्रामें उनके शरीरपर गिर रही हैं; उनके सुन्दर श्यामल अङ्गोंपर वे ऐसी शोभा देती हैं मानो नीलमके ऊपर गजमुक्ता शोभित हों। जगत्‌के जीवनस्वरूप प्रभु प्रातः उठकर मातासे निहोरा करते हैं कि 'मुझे माखन-रोटी दे।' सूरदासजी कहते हैं कि (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष) चारों पदार्थ जिनके हाथमें हैं, वे ही श्यामसुन्दर (माखन-रोटीके लिये मचलते) पृथ्वीपर लोट रहे हैं।

राग बिलावल

[९३]

पलना झूलौ मेरे लाल पियारे।
सुसकनि की वारी हौं बलि-बलि, हठ न करहु तुम नंद-दुलारे ॥

काजर हाथ भरौ जनि मोहन ह्वैहैं नैना अति रतनारे।
सिर कुलही, पग पहिरि पैजनी, तहाँ जाहु जहँ नंद बबा रे॥
देखत यह बिनोद धरनीधर, मात पिता बलभद्र ददा रे।
सुर-नर-मुनि कौतूहल भूले, देखत सूर सबै जु कहा रे॥

(माता कहती हैं–) 'मेरे प्यारे लाल! पालनेमें झूलो। तुम्हारे इस सिसकने (रोने) पर मैं बलिहारी जाती हूँ। बार-बार मैं तुम्हारी बलैयाँ लूँ, नन्दनन्दन तुम हठ मत करो। मोहन! (नेत्रोंको मलकर) हाथोंको काजलसे मत भरो। (मलनेसे) नेत्र अत्यन्त लाल हो जायँगे। मस्तकपर टोपी और चरणोंमें नूपुर पहिनकर वहाँ जाओ, जहाँ नन्दबाबा बैठे हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि जगत्के धारणकर्ता प्रभुका यह विनोद माता यशोदा, बाबा नन्द और बड़े भाई बलरामजी देख रहे हैं। देवता, गन्धर्व तथा मुनिगण इस विनोदको देखकर भ्रमित हो गये। सभी देखते हैं कि प्रभु यह क्या लीला कर रहे हैं।

[९४]

क्रीड़त प्रात समय दोउ बीर।
माखन माँगत, बात न मानत, झँखत जसोदा-जननी तीर॥
जननी मधि, सनमुख संकर्षन खैंचत कान्ह खस्यो सिर-चीर।
मनहुँ सरस्वति संग उभय दुज, कल मराल अरु नील कँठीर॥
सुंदर स्याम गही कबरी कर, मुक्ता-माल गही बलबीर।
सूरज भष लैवे अप-अपनौ, मानहुँ लेत निबेरे सीर॥

सबेरेके समय दोनों भाई खेल रहे हैं। वे माखन माँग रहे हैं और मैया यशोदासे झगड़ रहे हैं, उसकी कोई दूसरी बात मान नहीं रहे हैं। मैया बीचमें है, बलराम उसके आगे हैं और पीछेसे कन्हाईके खींचनेसे माताके मस्तकका वस्त्र खिसक गया है। ऐसा लगता है मानो सरस्वतीके संग बाल-हंस और मयूर-शिशु ये दोनों पक्षी क्रीड़ा करते हों। श्यामसुन्दरने माताकी

चोटी हाथोंमें पकड़ रखी है और बलरामजी मोतीकी माला पकड़कर खींच रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि मानो अपना-अपना आहार (सर्प और मोती) लेनेके लिये दोनों पक्षी (मयूर और हंस) अपने हिस्सेका बटवारा किये लेते हों।

[९५]

कनक-कटोरा प्रातहीं, दधि घृत सु मिठाई।
खेलत खात गिरावहीं, झगरत दोउ भाई॥
अरस-परस चुटिया गहैं, बरजति है माई।
महा ढीठ मानैं नहीं, कछु लहुर-बड़ाई॥
हँसि कै बोली रोहिनी, जसुमति मुसुकाई।
जगन्नाथ धरनीधरहिं, सूरज बलि जाई॥

सवेरे ही सोनेके कटोरेमें दही, मक्खन और उत्तम मिठाइयाँ लिये दोनों भाई (श्याम-बलराम) खेल रहे हैं, खाते जाते हैं, कुछ गिराते जाते हैं और परस्पर झगड़ते भी हैं। झपटकर एक दूसरेकी चोटी पकड़ लेते हैं, मैया उन्हें मना करती है। माता रोहिणीने हँसकर कहा—'दोनों अत्यन्त ढीठ हैं, कुछ भी छोटे-बड़ेका सम्बन्ध नहीं मानते।' मैया यशोदा (यह सुनकर) मुसकरा रही हैं। सूरदास तो इन जगन्नाथ श्यामसुन्दर और धरणीधर बलरामजीपर बलिहारी जाता है।

[९६]

गोपालराइ दधि माँगत अरु रोटी।
माखन सहित देहि मेरी मैया, सुपक सुकोमल रोटी॥
कत हौ आरि करत मेरे मोहन, तुम आँगन मैं लोटी ?
जो चाहौ सो लेहु तुरतहीं, छाँड़ौ यह मति खोटी॥
करि मनुहारि कलेऊ दीन्हौ, मुख चुपर्‌यौ अरु चोटी।
सूरदास कौ ठाकुर ठाढ़ौ, हाथ लकुटिया छोटी॥

गोपालराय दही और रोटी माँग रहे हैं। (वे कहते हैं—) 'मैया! अच्छी पकी हुई और खूब कोमल रोटी मुझे मक्खनके साथ दे।' (माता कहती हैं—) मेरे मोहन! तुम आँगनमें लोटकर मचलते क्यों हो, यह बुरा स्वभाव छोड़ दो। जो इच्छा हो, वह तुरंत लो।' निहोरा करके (माताने) कलेऊ दिया और फिर मुख तथा अलकोंमें तेल लगाया। सूरदासजी कहते हैं कि अब (कलेऊ करके) हाथमें छोटी-सी छड़ी लेकर ये मेरे स्वामी खड़े हैं।

[९७]

हरि-कर राजत माखन-रोटी।
मनु बारिज ससि बैर जानि जिय, गह्यौ सुधा ससुधौटी॥
मेली सजि मुख-अंबुज भीतर, उपजी उपमा मोटी।
मनु बराह भूधर सह पुहुमी धरी दसन की कोटी॥
नगन गात मुसुकात तात ढिग, नृत्य करत गहि चोटी।
सूरज प्रभु की लहै जु जूठनि, लारनि ललित लपोटी॥

श्यामसुन्दरके करपर मक्खन और रोटी इस प्रकार शोभा दे रही है, मानो कमलने चन्द्रमासे अपनी शत्रुता मनमें सोचकर (चन्द्रमासे छीनकर) अमृत-पात्रके साथ अमृत ले रखा है। (दाँतोंसे काटनेके लिये) रोटीको सम्हालकर श्यामने मुखकमलमें डाला, इससे मुखकी बड़ी शोभा हो गयी— (माखन-रोटी लिये वह मुख ऐसा लग रहा है) मानो वाराहभगवान्ने पर्वतोंके साथ पृथ्वीको दाँतोंकी नोकपर उठा रखा है। दिगम्बर-शरीर मोहन बाबाके पास हँसते हुए अपनी चोटी पकड़े नृत्य कर रहे हैं। सूरदास अपने प्रभुकी सुन्दर (अमृतमय) लारसे लिपटी जूँठन (इस जूठी रोटीका टुकड़ा) कहीं पा जाता (तो अपना अहोभाग्य मानता!)

[९८]

दोउ भैया मैया पै माँगत, दै री मैया, माखन रोटी।
सुनत भावती बात सुतनि की, झूठहिं धाम के काम अगोटी॥
बल जू गह्यौ नासिका-मोती, कान्ह कुँवर गहि दृढ़ करि चोटी।
मानौ हंस-मोर भष लीन्हे, कवि उपमा बरनै कछु छोटी॥
यह छबि देखि नंद-मन आनँद, अति सुख हँसत जात हैं लोटी।
सूरदास मन मुदित जसोदा, भाग बड़े, कर्मनि की मोटी॥

दोनों भाई मैयासे माँग रहे हैं—'अरी मैया! माखन-रोटी दे।' माता पुत्रोंकी प्यारी बातें सुन रही है और (उनके मचलनेका आनन्द लेनेके लिये) झूठ-मूठ घरके काममें उलझी है। (इससे रूठकर) बलरामजीने नाकका मोती पकड़ा और कुँवर कन्हाईने दोनों हाथोंमें दृढ़तासे (माताकी) चोटी (वेणी) पकड़ी, मानो हंस और मयूर अपना-अपना आहार (मोती और सर्प) लिये हों। किंतु कविके द्वारा वर्णित यह उपमा भी कुछ छोटी ही है (उस शोभाके अनुरूप नहीं)। यह शोभा देखकर श्रीनन्दजीका चित्त आनन्दमग्न हो रहा है, अत्यन्त प्रसन्नतासे हँसते हुए वे लोट-पोट हो रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजी भी हृदयमें प्रमुदित हो रही हैं, वे बड़भागिनी हैं, उनके पुण्य महान् हैं (जो यह आनन्द उन्हें मिल रहा है)।

राग आसावरी

[९९]

तनक दै री माइ, माखन तनक दै री माइ।
तनक कर पर तनक रोटी, माँगत चरन चलाइ॥
कनक-भू पर रतन रेखा, नेति पकर्‌यौ धाइ।
कँप्यौ गिरि अरु सेष संक्यौ, उदधि चल्यौ अकुलाइ॥

तनक मुख की तनक बतियाँ, बोलत हैं तुतराइ।
जसोमति के प्रान-जीवन, उर लियौ लपटाइ॥
मेरे मन कौ तनक मोहन, लागु मोहि बलाइ।
स्याम सुंदर नँद-कुँवर पर, सूर बलि-बलि जाइ॥

(श्यामसुन्दर) अपने चरणोंको चलाते —नाचते हुए छोटे-से हाथपर छोटी-सी रोटी माँगते हैं–(और कहते हैं) 'मैया ! थोड़ा-सा—थोड़ा-सा माखन दे !' स्वर्णभूमिपर रत्न (नीलम) की रेखा जैसे खिंच गयी हो, इस प्रकार वे दौड़े और मथानीकी रस्सी पकड़ ली। इससे (कहीं फिर समुद्र-मन्थन न करें, यह सोचकर) मन्दराचल काँपने लगा, शेषनाग शङ्कित हो उठे और समुद्र व्याकुल हो गया। छोटे-से मुखसे थोड़े-थोड़े शब्द तुतलाते हुए बोलते हैं। माता यशोदाके ये प्राण हैं, जीवन हैं; मैयाने इन्हें हृदयसे लिपटा लिया। (माताने बलैया लेते हुए कहा—) 'मेरे चित्तको मोहित करनेवाले मेरे नन्हे लाल ! तुम्हारी सब आपत्ति-विपत्ति मुझे लग जाय।' सूरदास तो इस नन्दनन्दन श्यामसुन्दरपर बार-बार न्यौछावर है।

राग बिलावल

[१००]

नैकु रहौ, माखन द्यौं तुम कौं।
ठाढ़ी मथति जननि दधि आतुर, लौनी नंद-सुवन कौं॥
मैं बलि जाउँ स्याम-घन-सुंदर, भूख लगी तुम्हैं भारी।
बात कहूँ की बूझति स्यामहि, फेर करत महतारी॥
कहत बात हरि कछू न समुझत, झूठहिं भरत हुँकारी।
सूरदास प्रभु के गुन तुरतहिं, बिसरि गई नँद-नारी॥

श्रीनन्दनन्दनको मक्खन देनेके लिये माता खड़ी होकर बड़ी शीघ्रतासे दही मथ रही हैं। (वे कहती हैं—) 'लाल ! तनिक रुको। मैं तुम्हें अभी मक्खन देती हूँ। नवजलधर-सुन्दर श्याम ! मैं तुमपर बलिहारी

जाऊँ, तुम्हें बहुत अधिक भूख लगी है?' इस प्रकार इधर-उधरकी बात श्याम-सुन्दरसे पूछ-पूछकर माता उन्हें बहला रही हैं। माता क्या बात कहती है, यह तो मोहन कुछ समझते नहीं, झूठ-मूठ 'हाँ-हाँ' करते जा रहे हैं। (उनकी इस लीलासे) श्रीनन्दरानी सूरदासके स्वामीके गुण (उनकी अपार महिमा) तत्काल भूल गयीं (और वात्सल्य-स्नेहमें मग्न हो गयीं)।

[१०१]

बातनिहीं सुत लाइ लियौ।
तब लौं मथि दधि जननि जसोदा, माखन करि हरि हाथ दियौ॥
लै-लै अधर परस करि जेंवत, देखत फूल्यौ मात-हियौ।
आपुहिं खात प्रसंसत आपुहिं, माखन-रोटी बहुत प्रियौ॥
जो प्रभु सिव-सनकादिक दुर्लभ, सुत हित जसुमति-नंद कियौ।
यह सुख निरखत सूरज प्रभु कौ, धन्य-धन्य पल सुफल जियौ॥

माता यशोदाने अपने पुत्रको बातोंमें लगा लिया और तबतक दही मथकर मक्खन श्यामके हाथपर रख दिया। मोहन (थोड़ा-थोड़ा माखन) ले-लेकर होठसे छुलाकर खा रहे हैं, यह देखकर माताका हृदय प्रफुल्लित हो गया है। स्वयं ही खाते हैं और स्वयं ही प्रशंसा करते हैं, मक्खन-रोटी इन्हें बहुत प्रिय है। जो प्रभु शिव और सनकादि ऋषियोंको भी दुर्लभ हैं, उन्हें पुत्र बनाकर यशोदाजी और नन्दबाबा उनसे (वात्सल्य-) प्रेम कर रहे हैं। अपने स्वामीका यह आनन्द देखकर सूरदास इस क्षणको परम धन्य मानता है, जीवनका यही सुफल है (कि श्यामकी बाल-लीलाके दर्शन हों)।

राग धनाश्री

[१०२]

दधि-सुत जामे नंद-दुवार।
निरखि नैन अरुझ्यौ मनमोहन, रटत देहु कर बारंबार॥

दीरघ मोल कह्यौ ब्यौपारी, रहे ठगे सब कौतुक हार।
कर ऊपर लै राखि रहे हरि, देत न मुक्ता परम सुढार॥
गोकुलनाथ बए जसुमति के आँगन भीतर, भवन मँझार।
साखा-पत्र भए जल मेलत, फूलत-फरत न लागी बार॥
जानत नहीं मरम सुर-नर-मुनि, ब्रह्मादिक नहिं परत विचार।
सूरदास प्रभु की यह लीला, ब्रज-बनिता पहिरे गुहि हार॥

श्रीनन्दजीके द्वारपर आज मोती उग आये हैं। (व्यापारी मोतियोंका हार ले आया था) उसे नेत्रोंके सम्मुख देखते ही श्याम मचल पड़ा; उसने यह बार-बार रट लगा दी कि इसे मेरे हाथमें दो। (किंतु) व्यापारीने बहुत अधिक मूल्य बतलाया, सब लोग उस आश्चर्यमय हारको देखकर मुग्ध रह गये। श्यामने हारको लेकर हाथपर रख लिया, वे उन अत्यन्त (आबदार एवं) उत्तम बनावटके मोतियोंको दे नहीं रहे थे। (हार देना तो दूर रहा,) उन गोकुलके स्वामीने (हार तोड़कर उसके मोतियोंको) यशोदाजीके आँगनमें तथा घरके भीतर बो दिया। (श्यामके) जल डालते ही (मोतियोंमेंसे) डालियाँ और पत्ते निकल आये, उन्हें फूलते और फलते भी कुछ देर नहीं लगी। सूरदासके स्वामीकी इस लीलाका भेद देवता, मनुष्य, मुनिगण तथा ब्रह्मादि भी नहीं जान सके; उनकी समझमें ही कोई कारण (मोतियोंके उगनेका) नहीं आया। किंतु ब्रजकी गोपियोंने तो उन (मोतियों) को गूँथकर हार पहिना।

[१०३]

कजरी कौ पय पियहु लाल, जासौं तेरी बेनि बढ़ै।
जैसैं देखि और ब्रज-बालक, त्यौं बल-बैस चढ़ै॥
यह सुनि कै हरि पीवन लागे, ज्यौं-त्यौं लयौ लढ़ै।
अँचवत पय तातौ जब लाग्यौ, रोवत जीभि डढ़ै॥
पुनि पीवतहीं कच टकटोरत, झूठहिं जननि रढ़ै।
सूर निरखि मुख हँसति जसोदा, सो सुख उर न कढ़ै॥

(माता यशोदा कहती हैं—) 'लाल ! कृष्णा गायका दूध पी लो, जिससे तुम्हारी चोटी बढ़ जाय। देखो ! जैसे व्रजके और बालक हैं, उसी प्रकार तुम्हारा भी बल और आयु बढ़ जायगी।' (इस प्रकार समझाकर माताने) जिस-किसी प्रकार लाड़ लड़ा लिया (मना लिया)। श्याम भी माताकी यह बात सुनकर (दूध) पीने लगे; किंतु पीते ही जब दूध गरम लगा, तब जिह्वाके जल जानेसे रोने लगे। फिर (दूध) पीते ही बालोंको टटोलने लगे (कि ये बढ़ भी रहे हैं या) मैया झूठ ही आग्रह कर रही है। सूरदासजी कहते हैं—यशोदाजी अपने पुत्रके (भोले भावयुक्त) मुखको देखकर हँस रही हैं। यह आनन्द मेरे हृदयसे बाहर नहीं होता।

राग रामकली

[१०४]

मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी ?
किती बार मोहि दूध पियत भइ, यह अजहूँ है छोटी ॥
तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं, ह्वैहै लाँबी-मोटी।
काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहै नागिनि-सी भुइँ लोटी ॥
काँचौ दूध पियावति पचि-पचि, देति न माखन-रोटी।
सूरज चिरजीवौ दोउ भैया, हरि-हलधर की जोटी ॥

(श्यामसुन्दर कहते हैं—) 'मैया ! मेरी चोटी कब बढ़ेगी ? मुझे दूध पीते कितनी देर हो गयी, पर यह तो अब भी छोटी ही है। तू जो यह कहती है कि दाऊ भैयाकी चोटीके समान यह भी लंबी और मोटी हो जायगी और कंघी करते, गूँथते तथा स्नान कराते समय सर्पिणीके समान भूमितक लोटने (लटकने) लगेगी (वह तेरी बात ठीक नहीं जान पड़ती)। तू मुझे बार-बार परिश्रम करके कच्चा (धारोष्ण) दूध पिलाती है, मक्खन-रोटी नहीं देती।' (यह कहकर मोहन मचल रहे हैं।) सूरदासजी कहते हैं कि बलराम-घनश्यामकी जोड़ी अनुपम है, ये दोनों भाई चिरजीवी हों।

राग सारंग

[१०५]

मैया, मोहि बड़ौ करि लै री।
दूध-दही-घृत-माखन-मेवा, जो माँगौं सो दै री॥
कछू हौंस राखै जनि मेरी, जोइ-जोइ मोहि रुचै री।
होउँ बेगि मैं सबल सबनि मैं, सदा रहौं निरभै री॥
रंगभूमि मैं कंस पछारौं, घीसि बहाऊँ बैरी।
सूरदास स्वामी की लीला, मथुरा राखौं जै री॥

(श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं—) 'मैया! मुझे (झटपट) बड़ा बना ले। दूध, दही, घी, मक्खन, मेवा आदि मैं जो माँगूँ, वही मुझे दिया कर। मुझे जो-जो रुचिकर हो, वही दे; मेरी कोई इच्छा अधूरी मत रख, जिससे कि मैं शीघ्र ही सबसे बलवान् हो जाऊँ और सदा निर्भय रहा करूँ। अखाड़ेमें मैं कंसको पछाड़ दूँगा, उस शत्रुको घसीटकर नष्ट कर दूँगा और मथुराको विजय करके रहूँगा।' सूरदासजी कहते हैं कि यह तो मेरे स्वामीकी (आगे होनेवाली) लीला ही है।

राग रामकली

[१०६]

हरि अपनैं आँगन कछु गावत।
तनक-तनक चरननि सौं नाचत, मनहीं मनहि रिझावत॥
बाहँ उठाइ काजरी-धौरी गैयनि टेरि बुलावत।
कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैं आवत॥
माखन तनक आपनैं कर लै, तनक बदन मैं नावत।
कबहुँ चितै प्रतिबिंब खंभ मैं, लौनी लिए खवावत॥
दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरष अनंद बढ़ावत।
सूर स्याम के बाल-चरित, नित-नितहीं देखत भावत॥

श्यामसुन्दर अपने आँगनमें कुछ गा रहे हैं । वे अपने नन्हे-नन्हे चरणोंसे नाचते जाते हैं और अपने-आप अपने ही चित्तको आनन्दित कर रहे हैं । कभी दोनों हाथ उठाकर 'कजरी' 'धौरी' आदि नामोंसे गायोंको पुकारकर बुलाते हैं, कभी नन्द बाबाको पुकारते हैं और कभी घरके भीतर चले आते हैं । अपने हाथपर थोड़ा-सा मक्खन लेकर छोटे-से मुखमें डालते हैं, कभी मणिमय खंभेमें अपना प्रतिबिम्ब देखकर (उसे अन्य बालक समझकर) मक्खन लेकर उसे खिलाते हैं । श्रीयशोदाजी छिपकर यह लीला देख रही हैं । वे हर्षित हो रही हैं, (अपनी लीलासे प्रभु) उनका आनन्द बढ़ा रहे हैं । सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरके बालचरित्र नित्य-नित्य देखनेमें रुचिकर लगते हैं। (उनमें नित्य नवीन आनन्द मिलता है ।)

राग बिलावल

[१०७]

आजु सखी, हौं प्रात समय दधि मथन उठी अकुलाइ ।
भरि भाजन मनि-खंभ निकट धरि, नेति लई कर जाइ ॥
सुनत सब्द तिहिं छिन समीप मम हरि हँसि आए धाइ ।
मोह्यौ बाल-बिनोद-मोद अति, नैननि नृत्य दिखाइ ॥
चितवनि चलनि हर्‍यौ चित चंचल, चितै रही चित लाइ ।
पुलकत मन प्रतिबिंब देखि कै, सबही अंग सुहाइ ॥
माखन-पिंड बिभागि दुहूँ कर, मेलत मुख मुसुकाइ ।
सूरदास-प्रभु-सिसुता को सुख, सकै न हृदय समाइ ॥

(श्रीयशोदाजी किसी गोपीसे कहती हैं—) 'सखी ! आज सबेरे मैं दही मथनेके लिये आतुरतापूर्वक उठी और दहीसे मटकेको भरकर मणिमय खंभेके पास रखकर हाथमें मैंने मथानीकी रस्सी पकड़ी । दही मथनेका शब्द सुनकर उसी समय श्याम हँसता हुआ मेरे पास दौड़ आया ।

अपने नेत्रोंका चञ्चल नृत्य दिखलाकर (चपल नेत्रोंसे देखकर) तथा बाल-विनोदके अत्यन्त आनन्दसे उसने मुझे मोहित कर लिया। उस चञ्चलने अपने देखने तथा चलने (ललित गति) से मेरे चित्तको हरण कर लिया, चित्त लगाकर (एकाग्र होकर) मैं उसे देखती रही। (मणि-स्तम्भमें) अपना प्रतिबिम्ब देखकर वह मन-ही-मन पुलकित हो रहा था, उसके सभी अङ्ग बड़े सुहावने लगते थे। मक्खनके गोलेको दो भाग करके दोनों हाथोंपर रखकर एक साथ दोनों हाथोंसे मुँहमें डालते हुए मुसकराता जाता था। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीकी शिशु-लीलाका सुख हृदयमें भी समाता नहीं (इसीसे मैया उसका वर्णन सखीसे कर रही हैं)।

[१०८]

बलि-बलि जाउँ मधुर सुर गावहु।
अब की बार मेरे कुँवर कन्हैया, नंदहि नाचि दिखावहु॥
तारी देहु आपने कर की, परम प्रीति उपजावहु।
आन जंतु धुनि सुनि कत डरपत, मो भुज कंठ लगावहु॥
जनि संका जिय करौ लाल मेरे, काहे कौं भरमावहु।
बाहँ उचाइ कालिह की नाईं, धौरी धेनु बुलावहु॥
नाचहु नैकु, जाउँ बलि तेरी, मेरी साध पुरावहु।
रतन-जटित किंकिनि पग-नूपुर, अपनैं रंग बजावहु॥
कनक-खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक, लवनी ताहि खवावहु।
सूर स्याम मेरे उर तैं कहुँ टारे नैकु न भावहु॥

(माता कहती हैं—) 'मेरे कुँवर कन्हाई ! मैं बार-बार बलिहारी जाती हूँ। मीठे स्वरसे कुछ गाओ तो! अबकी बार नाचकर अपने बाबाको (अपना नृत्य) दिखा दो। अपने हाथसे ही ताली बजाओ, इस प्रकार मेरे हृदयमें परम प्रेम उत्पन्न करो। तुम किसी दूसरे जीवका शब्द

सुनकर डर क्यों रहे हो, अपनी भुजाएँ मेरे गलेमें डाल दो। (मेरी गोदमें आ जाओ।) मेरे लाल ! अपने मनमें कोई शङ्का मत करो ! क्यों संदेहमें पड़ते हो (भयका कोई कारण नहीं है)। कलकी भाँति भुजाओंको उठाकर अपनी 'धौरी' गैयाको बुलाओ। मैं तुम्हारी बलिहारी जाऊँ, तनिक नाचो और अपनी मैयाकी इच्छा पूरी कर दो। रत्नजटित करधनी और चरणोंके नूपुरको अपनी मौजसे (नाचते हुए) बजाओ। (देखो,) स्वर्णके खंभेमें एक शिशुका प्रतिबिम्ब है, उसे मक्खन खिला दो।' सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दर ! मेरे हृदयसे आप तनिक भी कहीं टल जायँ, यह मुझे जरा भी अच्छा न लगे।

राग धनाश्री

[१०९]

पाहुनी, करि दै तनक मह्यौ।
हौं लागी गृह-काज-रसोई, जसुमति बिनय कह्यौ॥
आरि करत मनमोहन मेरो, अंचल आनि गह्यौ।
ब्याकुल मथति मथनियाँ रीती, दधि भुव ढरकि रह्यौ॥
माखन जात जानि नँदरानी, सखी सम्हारि कह्यौ।
सूर स्याम-मुख निरखि मगन भइ, दुहुनि सँकोच सह्यौ॥

श्रीयशोदाजीने विनम्र होकर कहा—'पाहुनी ! तनिक दधि-मन्थन कर दो ! मैं घरके काम-काज तथा रसोई बनानेमें लगी हूँ और यह मोहन मुझसे मचल रहा है, इसने आकर मेरा अञ्चल पकड़ लिया है।' (किंतु श्यामकी शोभापर मुग्ध वह पाहुनी) आकुलतापूर्वक खाली मटकेमें ही मन्थन कर रही है, दही तो (मटका लुढ़कनेसे) पृथ्वीपर बहा जाता है। श्रीनन्दरानीने मक्खन पृथ्वीपर जाता समझकर (देखकर) सखीसे उसे सम्हालनेके लिये कहा। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरका मुख देखकर वह (पाहुनी) मग्न हो गयी, उसने चुपचाप दोनों (यशोदाजीका और दही गिरनेका) संकोच सहन कर लिया।

राग बिलावल

[११०]

मोहन, आउ तुम्हैं अन्हवाऊँ।
जमुना तैं जल भरि लै आऊँ, ततिहर तुरत चढ़ाऊँ॥
केसरि कौ उबटनौ बनाऊँ, रचि-रचि मैल छुड़ाऊँ।
सूर कहै कर नैकु जसोदा, कैसैहुँ पकरि न पाऊँ॥

(माता कहती हैं—) 'मोहन ! आओ, तुम्हें स्नान कराऊँ। श्रीयमुनाजीसे जल भरकर ले आऊँ और उसे गरम करनेके लिये पात्रमें डालकर तुरंत चूल्हेपर चढ़ा दूँ; (जबतक जल गरम हो, तबतक मैं) केसरका उबटन बनाकर (उससे) मल-मलकर (तुम्हारे शरीरका) मैल छुड़ा दूँ।' सूरदासजी कहते हैं श्रीयशोदाजी (खीझकर) कहती हैं कि 'इस चञ्चलको किसी भी प्रकार अपने हाथसे मैं पकड़ नहीं पाती।'

राग आसावरी

[१११]

जसुमति जबहिं कह्यौ अन्हवावन, रोइ गए हरि लोटत री।
तेल-उबटनौ लै आगैं धरि, लालहि चोटत-पोटत री॥
मैं बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन, कत रोवत बिनु काजैं री।
पाछैं धरि राख्यौ छपाइ कै, उबटन-तेल-समाजैं री॥
महरि बहुत बिनती करि राखति, मानत नहीं कन्हैया री।
सूर स्याम अतिहीं बिरुझाने, सुर-मुनि अंत न पैया री॥

श्रीयशोदाजीने जब स्नान करानेको कहा तो श्यामसुन्दर रोने लगे और पृथ्वीपर लोटने लगे। (माताने) तेल और उबटन लेकर आगे रख लिया और अपने लालको पुचकारने-दुलारने लगीं। (वे बोलीं—) 'मोहन, मैं तुमपर बलि जाऊँ, तुम स्नान मत करो; किंतु बिना काम (व्यर्थ) रो क्यों रहे हो।' (माताने) उबटन, तेल आदि सामग्री अपने पीछे छिपाकर रख

ली। श्रीव्रजरानी अनेक प्रकारसे कहकर समझाती हैं, किंतु कन्हाई मानते ही नहीं। सूरदासजी कहते हैं कि जिनका पार देवता और मुनिगण भी नहीं पाते, वे ही श्यामसुन्दर बहुत मचल पड़े हैं।

राग कान्हरौ

[११२]

ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनैं, हरिहि लिए चंदा दिखरावत।
रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी, देखौ धौं भरि नैन जुड़ावत॥
चितै रहे तब आपुन ससि-तन, अपने कर लै-लै जु बतावत।
मीठौ लगत किधौं यह खाटौ, देखत अति सुंदर मन भावत॥
मनहीं-मन हरि बुद्धि करत हैं, माता सौं कहि ताहि मँगावत।
लागी भूख, चंद मैं खैहौं, देहि-देहि रिस करि बिरुझावत॥
जसुमति कहति कहा मैं कीनौ, रोवत मोहन अति दुख पावत।
सूर स्याम कौं जसुमति बोधति, गगन चिरैयाँ उड़त दिखावत॥

श्रीयशोदाजी अपने आँगनमें खड़ी हुई श्यामको गोदमें लेकर चन्द्रमा दिखला रही हैं—'लाल! तुम रोते क्यों हो, मैं तुमपर बलिहारी जाती हूँ, देखो तो–भर आँख (भली प्रकार) देखनेसे यह (चन्द्रमा) नेत्रोंको शीतल करता है।' तब श्याम स्वयं चन्द्रमाकी ओर देखने लगे और अपने हाथ उठा-उठाकर दिखलाने (उसीकी ओर संकेत करने) लगे। श्रीहरि मन-ही-मन यह सोचने लगे कि 'देखनेमें तो यह बड़ा सुन्दर है और मनको अच्छा भी लगता है; किंतु पता नहीं (स्वादमें) मीठा लगता है या खट्टा।' मातासे उसे मँगा देनेको कहने लगे—'मुझे भूख लगी है, मैं चन्द्रमाको खाऊँगा, तू ला दे! ला दे इसे!' इस प्रकार क्रोध करके झगड़ने (मचलने) लगे। यशोदाजी कहने लगीं—'मैंने यह क्या किया (जो इसे चन्द्र दिखाया)। अब तो मेरा यह मोहन रो रहा है और बहुत ही दुखी हो रहा है।' सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजी श्यामसुन्दरको समझा रही हैं, तथा आकाशमें उड़ती चिड़ियाएँ उन्हें (बहलानेके लिये) दिखला रही हैं।

[११३]

किहिं बिधि करि कान्हहि समुझैहौं ?
मैं ही भूलि चंद दिखरायौ, ताहि कहत मैं खैहौं !
अनहोनी कहुँ भई कन्हैया, देखी-सुनी न बात।
यह तौ आहि खिलौना सब कौ, खान कहत तिहि तात !
यहै देत लवनी नित मोकौं, छिन-छिन साँझ-सवारे।
बार-बार तुम माखन माँगत, देउँ कहाँ तैं प्यारे ?
देखत रहौ खिलौना चंदा, आरि न करौ कन्हाई।
सूर स्याम लिए हँसति जसोदा, नंदहि कहति बुझाई ॥

(माता पश्चात्ताप करती कहती हैं—) 'कौन-सा उपाय करके अब मैं कन्हाईको समझा सकूँगी। भूल मुझसे ही हुई जो मैंने (इसे) चन्द्रमा दिखलाया; अब यह कहता है कि उसे मैं खाऊँगा।' (फिर श्यामसे कहती हैं—) 'कन्हाई ! जो बात न हो सकती हो, वह कहीं हुई है; ऐसी बात तो न कभी देखी और न सुनी ही (कि किसीने चन्द्रमाको खाया हो)। यह तो सबका खिलौना है, लाल ! तुम उसे खानेको कहते हो ? (यह तो ठीक नहीं है।) यही प्रत्येक दिन प्रातः-सायं क्षण-क्षणपर मुझे मक्खन देता है, और तुम मुझसे बार-बार मक्खन माँगते हो। (जब इसीको खा डालोगे,) तब प्यारे लाल ! तुम्हें मैं मक्खन कहाँसे दूँगी ? कन्हाई ! हठ मत करो, इस चन्द्रमारूपी खिलौनेको बस, देखते रहो (यह देखा ही जाता है, खाया नहीं जाता)।' सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजी श्यामसुन्दरको गोदमें लिये हँस रही हैं और श्रीनन्दजीसे समझाकर (मोहनकी हठ) बता रही हैं।

राग धनाश्री

[११४]

(आछे मेरे) लाल हो, ऐसी आरि न कीजै।
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, जोइ भावै सोइ लीजै ॥

सद माखन घृत दह्यौ सजायौ, अरु मीठौ पय पीजै।
पा लागौं हठ अधिक करौ जनि, अति रिस तैं तन छीजै॥
आन बतावति, आन दिखावति, बालक तौ न पतीजै।
खसि-खसि परत कान्ह कनियाँ तैं, सुसुकि-सुसुकि मन खीजै॥
जल-पुट आनि धर्‍यौ आँगन मैं, मोहन नैकु तौ लीजै।
सूर स्याम हठि चंदहि माँगै, सु तौ कहाँ तैं दीजै॥

'(मेरे अच्छे) लाल ! ऐसी हठ नहीं करनी चाहिये। मधु, मेवा, पकवान तथा मिठाइयोंमें तुम्हें जो अच्छा लगे, वह ले लो। तुरंतका निकाला मक्खन है, सजाव (भली प्रकार जमा) दही है, घी है (इन्हें लो) और मीठा दूध पीओ। मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, अब अधिक हठ मत करो; क्रोध करनेसे शरीर दुर्बल होता है।' (यह कहकर माता) कुछ दूसरी बातें सुनाती है, कुछ अन्य वस्तुएँ दिखाती है, फिर भी उनका बालक उनकी बातका विश्वास नहीं करता (वह मान बैठा है कि मैया चन्द्रमा दे सकती है, पर देती नहीं है)। कन्हैया गोदसे (मचलकर) बार-बार खिसका पड़ता है, सिसकारी मार-मारकर मन-ही-मन खीझ रहा है। तब माताने जलसे भरा बर्तन लाकर आँगनमें रखा और बोलीं—'मोहन लो ! इसे तनिक अब (तुम स्वयं) पकड़ो तो।' सूरदासजी कहते हैं कि श्याम तो हठपूर्वक चन्द्रमाको माँग रहा है; भला, उसे कोई कहाँसे दे सकता है।

राग कान्हरौ

[११५]

बार-बार जसुमति सुत बोधति, आउ चंद तोहि लाल बुलावै।
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, आपुन खैहै, तोहि खवावै॥
हाथहि पर तोहि लीन्हे खेलै, नैकु नहीं धरनी बैठावै।
जल-बासन कर लै जु उठावति, याही मैं तू तन धरि आवै॥
जल-पुट आनि धरनि पर राख्यौ, गहि आन्यौ वह चंद दिखावै।
सूरदास प्रभु हँसि मुसुक्याने, बार-बार दोऊ कर नावै॥

श्रीयशोदाजी अपने पुत्रको चुप करनेके लिये बार-बार कहती हैं—'चन्द्र आओ! तुम्हें मेरा लाल बुला रहा है। यह मधु, मेवा, पकवान और मिठाइयाँ स्वयं खायगा तथा तुम्हें भी खिलायेगा। तुम्हें हाथपर ही रखकर (तुम्हारे साथ) खेलेगा, थोड़ी देरके लिये भी पृथ्वीपर नहीं बैठायेगा।' फिर हाथमें पानीसे भरा बर्तन उठाकर कहती हैं—'चन्द्रमा! तुम शरीर धारण करके इसी बर्तनमें आ जाओ।' फिर जलका बर्तन लाकर पृथ्वीपर रख दिया और दिखाने लगीं—'लाल! वह चन्द्रमा मैं पकड़ लायी।' सूरदासजी कहते हैं कि (जलमें चन्द्रबिम्ब देखकर) मेरे प्रभु हँस पड़े और मुसकराते हुए दोनों हाथ (पानीमें) डालने लगे।

राग रामकली

[११६]

(मेरौ माई) ऐसौ हठी बाल गोबिंदा।
अपने कर गहि गगन बतावत, खेलन कौं माँगै चंदा॥
बासन मैं जल धर्‌यौ जसोदा, हरि कौं आनि दिखावै।
रुदन करत, ढूँढ़त नहिं पावत, चंद धरनि क्यौं आवै!
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, माँगि लेहु मेरे छौना।
चकई-डोरि पाट के लटकन, लेहु मेरे लाल खिलौना॥
संत-उबारन, असुर-सँहारन, दूरि करन दुख-दंदा।
सूरदास बलि गई जसोदा, उपज्यौ कंस-निकंदा॥

(यशोदाजी कहती हैं—) 'सखी! मेरा यह बालगोविन्द ऐसा हठी है (कि कुछ न पूछो)। अपने हाथसे मेरा हाथ पकड़कर आकाशकी ओर दिखाता है और खेलनेके लिये चन्द्रमा माँगता है।' यशोदाजीने बर्तनमें जल भरकर रख दिया है और हरिको लाकर उसमें (चन्द्रमा) दिखलाती हैं। लेकिन श्याम ढूँढ़ते हैं तो चन्द्रमा मिलता नहीं, इससे रो रहे हैं। भला, चन्द्रमा पृथ्वीपर कैसे आ सकता है। (माता कहती हैं—) 'मेरे लाल!

तुम मधु, मेवा, पकवान, मिठाई आदि (जो जीमें आये) माँग लो; मेरे दुलारे लाल ! चकडोर, रेशमके झुमके तथा अन्य खिलौने ले लो ।' सूरदासजी कहते हैं कि संतोंका उद्धार करनेवाले, असुरोंका संहार करनेवाले, सबके समस्त दुःख-द्वन्द्वको दूर करनेवाले (मचलते) श्यामपर, जो कंसका विनाश करने अवतरित हुए हैं, (मनाती हुई) मैया यशोदा बार-बार न्यौछावर हो रही हैं ।

राग केदारौ

[११७]

मैया, मैं तौ चंद-खिलौना लैहौं ।
जैहौं लोटि धरनि पर अबहीं, तेरी गोद न ऐहौं ॥
सुरभी कौ पय पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं ।
ह्वैहौं पूत नंद बाबा कौ, तेरौ सुत न कहैहौं ॥
आगैं आउ, बात सुनि मेरी, बलदेवहि न जनैहौं ।
हँसि समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहिया दैहौं ॥
तेरी सौं, मेरी सुनि मैया, अबहिं बियाहन जैहौं ।
सूरदास ह्वै कुटिल बराती, गीत सुमंगल गैहौं ॥

(श्यामसुन्दर कह रहे हैं—) 'मैया ! मैं तो यह चन्द्रमा-खिलौना लूँगा । (यदि तू इसे नहीं देगी तो) अभी पृथ्वीपर लोट जाऊँगा, तेरी गोदमें नहीं आऊँगा । न तो गैयाका दूध पीऊँगा, न सिरमें चुटिया गुँथवाऊँगा । मैं अपने नन्दबाबाका पुत्र बनूँगा, तेरा बेटा नहीं कहलाऊँगा ।' तब मैया यशोदा हँसती हुई समझाती हैं और कहती हैं—'आगे आओ ! मेरी बात सुनो, यह बात तुम्हारे दाऊ भैयाको मैं नहीं बताऊँगी । तुम्हें मैं नयी पत्नी दूँगी ।' (यह सुनकर श्याम कहने लगे—) 'तू मेरी मैया है, तेरी शपथ—सुन ! मैं इसी समय ब्याह करने जाऊँगा ।' सूरदासजी कहते हैं—प्रभो ! मैं आपका कुटिल बाराती (बारातमें व्यंग करनेवाला) बनूँगा और (आपके विवाहमें) मङ्गलके सुन्दर गीत गाऊँगा ।

राग रामकली

[११८]

मैया री मैं चंद लहौंगौ ।
कहा करौं जलपुट भीतर कौ, बाहर ब्यौंकि गहौंगौ ॥
यह तौ झलमलात झकझोरत, कैसैं कै जु लहौंगौ ?
वह तौ निपट निकटहीं देखत, बरज्यौ हौं न रहौंगौ ॥
तुम्हरौ प्रेम प्रगट मैं जान्यौ, बौराएँ न बहौंगौ ।
सूर स्याम कहै कर गहि ल्याऊँ, ससि-तन-दाप दहौंगौ ॥

(श्यामने कहा—) 'मैया ! मैं चन्द्रमाको पा लूँगा । इस पानीके भीतरके चन्द्रमाका मैं क्या करूँगा, मैं तो बाहरवालेको उछलकर पकड़ूँगा । यह तो पकड़नेका प्रयत्न करनेपर झलमल-झलमल करता (हिलता) है, भला, इसे मैं कैसे पकड़ सकूँगा । वह (आकाशका चन्द्रमा) तो अत्यन्त पास दिखायी पड़ता है, तुम्हारे रोकनेसे अब रुकूँगा नहीं । तुम्हारे प्रेमको तो मैंने प्रत्यक्ष समझ लिया (कि मुझे यह चन्द्रमा भी नहीं देती हो) अब तुम्हारे बहकानेसे बहकूँगा नहीं ।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर (हठपूर्वक) कह रहे हैं—'मैं चन्द्रमाको अपने हाथों पकड़ लाऊँगा और उसका जो (दूर रहनेका) बड़ा घमंड है, उसे नष्ट कर दूँगा ।'

राग धनाश्री

[११९]

लै लै मोहन, चंदा लै ।
कमल-नैन ! बलि जाउँ सुचित ह्वै, नीचैं नैकु चितै ॥
जा कारन तैं सुनि सुत सुंदर, कीन्ही इती अरै ।
सोइ सुधाकर देखि कन्हैया, भाजन माहिं परै ॥
नभ तैं निकट आनि राख्यौ है, जल-पुट जतन जुगै ।
लै अपने कर काढ़ि चंद कौं, जो भावै सो कै ॥

गगन-मँडल तैं गहि आन्यौ है, पंछी एक पठै।
सूरदास प्रभु इती बात कौं कत मेरौ लाल हठै॥

(माता कहती हैं—) 'लो ! मोहन, चन्द्रमाको लो ! कमल-लोचन ! मैं तुमपर बलिहारी जाती हूँ, तनिक नीचे देखो तो । मेरे सुन्दर लाल ! सुनो—जिसके लिये तुमने इतनी हठ की, वही चन्द्रमा बर्तनमें पड़ा है; कन्हाई ! इसे देखो । इसे उपाय करके आकाशसे लाकर तुम्हारे पास पानीके बर्तनमें सँभालकर रख दिया है; अब तुम अपने हाथसे चन्द्रमाको निकाल लो और जो इच्छा हो, इसका करो । एक पक्षीको भेजकर इसे आकाशसे पकड़ मँगाया है ।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीसे मैया कह रही हैं—'मेरे लाल ! इतनी-सी बातके लिये क्यों हठ कर रहे हो ?'

राग बिहागरौ

[१२०]

तुव मुख देखि डरत ससि भारी।
कर करि कै हरि हेर्‌यौ चाहत, भाजि पताल गयौ अपहारी॥
वह ससि तौ कैसैहुँ नहिं आवत, यह ऐसी कछु बुद्धि बिचारी।
बदन देखि बिधु-बुधि सकात मन, नैन कंज कुंडल उजियारी॥
सुनौ स्याम, तुम कौं ससि डरपत, यहै कहत मैं सरन तुम्हारी।
सूर स्याम बिरुझाने सोए, लिए लगाइ छतिया महतारी॥

(माता कहती हैं—) 'लाल ! तुम्हारा मुख देखकर चन्द्रमा अत्यन्त डर रहा है। श्याम ! तुम (पानीमें) हाथ डालकर उसे ढूँढ़ना चाहते हो, इससे वह चोरकी भाँति भागकर पाताल चला गया। वह (आकाशका) चन्द्रमा तो किसी भी प्रकार आता नहीं और यह जो जलमें था, उसने बुद्धिसे कुछ ऐसी बात सोच ली कि तुम्हारे मुखको देखकर इस चन्द्रमाकी बुद्धि शङ्कित हो गयी। उसने अपने मनमें तुम्हारे

नेत्रोंको कमल तथा कुण्डलोंको (सूर्यका) प्रकाश समझा; इसलिये श्याम-सुन्दर, सुनो! चन्द्रमा तुमसे डर रहा है और यही कहता है कि मैं तुम्हारी शरणमें हूँ। (मुझे छोड़ दो।)' सूरदासजी कहते हैं कि (इतना समझाने-से भी प्रभु माने नहीं) श्यामसुन्दर मचलते हुए ही सो गये। माताने उन्हें हृदयसे लगा लिया।

राग केदारौ

[१२१]

जसुमति लै पलिका पौढ़ावति।
मेरौ आजु अतिहिं बिरुझानौ, यह कहि-कहि मधुरैं सुर गावति॥
पौढ़ि गई हरुएँ करि आपुन, अंग मोरि तब हरि जँभुआने।
कर सौं ठोंकि सुतहि दुलरावति, चटपटाइ बैठे अतुराने॥
पौढ़ौ लाल, कथा इक कहिहौं, अति मीठी, स्रवननि कौं प्यारी।
यह सुनि सूर स्याम मन हरषे, पौढ़ि गए हँसि देत हुँकारी॥

श्रीयशोदाजी श्यामसुन्दरको गोदमें लेकर छोटे पलँगपर सुलाती हैं। 'मेरा लाल आज बहुत अधिक खीझ गया! यह कहकर मधुर स्वरसे गान करती हैं। वे स्वयं भी धीरेसे लेट गयीं; तब श्यामसुन्दरने शरीरको मोड़कर (अँगड़ाई लेकर) जम्हाई ली। माता हाथसे थपकी देकर पुत्रको चुचकारने लगी, इतनेमें मोहन बड़ी आतुरतासे हड़बड़ाकर उठ बैठे। (तब माताने कहा—) 'लाल! लेट जाओ! मैं अत्यन्त मधुर और कानोंको प्रिय लगनेवाली एक कहानी सुनाऊँगी।' सूरदासजी कहते हैं कि यह सुनकर श्यामसुन्दर मनमें हर्षित हो उठे, लेट गये और हँसते हुए हुँकारी देने लगे।

[१२२]

सुनि सुत, एक कथा कहौं प्यारी।
कमल-नैन मन आनँद उपज्यौ, चतुर-सिरोमनि देत हुँकारी॥

दसरथ नृपति हुतौ रघुबंसी, ताकैं प्रगट भए सुत चारी।
तिन मैं मुख्य राम जो कहियत, जनक-सुता ताकी बर नारी॥
तात-बचन लगि राज तज्यौ तिन, अनुज-घरनि सँग गए बनचारी
धावत कनक-मृगा के पाछैं, राजिव-लोचन परम उदारी॥
रावन हरन सिया कौ कीन्हौ, सुनि नँद-नंदन नींद निवारी।
चाप-चाप करि उठे सूर-प्रभु, लछिमन देहु, जननि भ्रम भारी॥

(माताने कहा—) 'लाल सुनो! एक प्रिय कथा कहती हूँ।' यह सुनकर कमललोचन श्यामके मनमें प्रसन्नता हुई, वे चतुर-शिरोमणि हुँकारी देने लगे। (माताने कहा—) 'महाराज दशरथ नामके एक रघुवंशी राजा थे, उनके चार पुत्र हुए। उन (पुत्रों)में जो सबसे बड़े थे, उनको राम कहा जाता है; उनकी श्रेष्ठ पत्नी थीं राजा जनककी पुत्री सीता। पिताकी आज्ञाका पालन करनेके लिये उन्होंने राज्य त्याग दिया और छोटे भाई तथा स्त्रीके साथ वनवासी होकर चले गये। (वहाँ वनमें एक दिन जब) कमललोचन परम उदार श्रीराम सोनेके मृगके पीछे (उसका आखेट करने) दौड़ रहे थे, तब रावणने श्रीजानकीका हरण कर लिया।' सूरदासजी कहते हैं कि इतना सुनते ही नन्दनन्दनने निद्राको त्याग दी और वे प्रभु बोल उठे—'लक्ष्मण! धनुष दो, धनुष!' इससे माताको बड़ी शङ्का हुई (कि मेरे पुत्रको यह क्या हो गया)।

राग ललित

[१२३]

नाहिनै जगाइ सकति, सुनि सुबात सजनी!
अपनैं जान अजहुँ कान्ह मानत हैं रजनी॥
जब-जब हौं निकट जाति, रहति लागि लोभा।
तन की गति बिसरि जाति, निरखत मुख-सोभा॥
बचननि कौं बहुत करति, सोचति जिय ठाढ़ी।
नैननि न बिचारि परत देखत रुचि बाढ़ी॥

इहिं बिधि बदनारबिंद, जसुमति जिय भावै ।
सूरदास सुख की रासि, कापै कहि आवै ॥

(माता यशोदा किसी गोपीसे कहती हैं—)'सखी ! मेरी यह सुन्दर बात सुनो ! मैं मोहनको जगा नहीं पाती हूँ और मेरा यह कन्हाई अपनी समझसे अभी रात्रि ही मान रहा है । जब-जब मैं उसके पास जाती हूँ तब-तब मैं लोभ (स्नेह)के वश ठिठककर रह जाती हूँ, उसके मुखकी छटा देखते ही शरीरकी दशा भी भूल जाती है । खड़ी-खड़ी मनमें विचार करती हूँ, बोलनेका बहुत प्रयत्न करती हूँ; किंतु नेत्रोंको तो समझदारी आती नहीं (सोते हुए श्यामकी छवि) देखते हुए उनकी रुचि बढ़ती ही जाती है ।' सूरदासजी कहते हैं कि मैया यशोदाको अपने लालका कमलमुख इस प्रकार प्रिय लगता है, वह है ही आनन्दराशि, उसका वर्णन भला, किससे हो सकता है ।

राग बिलावल

[१२४]

जागिए, ब्रजराज-कुँवर, कमल-कुसुम फूले ।
कुमुद-बृंद सकुचित भए, भृंग लता भूले ॥
तमचुर खग रोर सुनहु, बोलत बनराई ।
राँभति गो खरिकनि मैं, बछरा हित धाई ॥
बिधु मलीन रबि-प्रकास गावत नर-नारी ।
सूर स्याम प्रात उठौ, अंबुज-कर-धारी ॥

ब्रजराजकुमार, जागो ! देखो, कमल-पुष्प विकसित हो गये, कुमुदिनियोंका समूह संकुचित हो गया, भौंरे लताओंको भूल गये (उन्हें छोड़कर कमलोंपर मँडराने लगे) । मुर्गे और दूसरे पक्षियोंका शब्द सुनो, जो वनराजिमें बोल रहे हैं; गोष्ठोंमें गौएँ रँभाने लगी हैं और बछड़ोंके लिये दौड़ रही हैं । चन्द्रमा मलिन हो गया, सूर्यका प्रकाश फैल गया, स्त्री-

पुरुष (प्रातःकालीन स्तुति) गान कर रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि कमल-समान हाथोंवाले श्यामसुन्दर ! प्रातःकाल हो गया, अब उठो।

राग रामकली

[१२५]

प्रात समय उठि, सोवत सुत कौ बदन उघार्यौ नंद।
रहि न सके अतिसय अकुलाने, बिरह निसा कैं द्वंद॥
स्वच्छ सेज मैं तैं मुख निकसत, गयौ तिमिर मिटि मंद।
मनु पय-निधि सुर मथत फेन फटि, दयौ दिखाई चंद॥
धाए चतुर चकोर सूर सुनि, सब सखि-सखा सुछंद।
रही न सुधि सरीर अरु मन की, पीवत किरनि अमंद॥

व्रजराज श्रीनन्दजीने सबेरे उठकर अपने सोते हुए पुत्रका मुख (उत्तरीय हटाकर) खोला, क्योंकि वे अपनेको रोक न सके; रात्रिमें जो वियोग हुआ था, उसके दुःखसे वे अत्यन्त छटपटा रहे थे। स्वच्छ शय्यामेंसे मोहनका मुख खुलते ही (प्रातःकालीन) मन्द अन्धकार भी दूर हो गया। ऐसा लगा मानो देवताओंद्वारा क्षीरसमुद्रका मन्थन करते समय फेन फट जानेसे चन्द्रमा दिखलायी पड़ गया। सूरदासजी कहते हैं कि (मोहन उठ गये, यह) सुनकर चतुर चकोरोंके समान सब गोपियाँ और ग्वालबाल शीघ्रतासे दौड़े, उस मुखचन्द्रकी उज्ज्वल किरणों-का पान करते हुए उन्हें अपने तन-मनकी भी सुधि नहीं रही।

राग ललित

[१२६]

जागिए गोपाल लाल, आनँद-निधि नंद-बाल,
जसुमति कहै बार-बार, भोर भयौ प्यारे।
नैन कमल-दल बिसाल, प्रीति-बापिका-मराल,
मदन ललित बदन उपर कोटि वारि डारे॥

उगत अरुन बिगत सर्बरी, ससांक किरन-हीन,
दीपक सु मलीन, छीन-दुति समूह तारे।
मनौ ज्ञान घन प्रकास, बीते सब भव-बिलास,
आस-त्रास-तिमिर तोष-तरनि-तेज जारे॥
बोलत खग-निकर मुखर, मधुर होइ प्रतीति सुनौ,
परम प्रान-जीवन-धन मेरे तुम बारे।
मनौ बेद बंदीजन सूत-बृंद मागध-गन,
बिरद बदत जै जै जै जैति कैटभारे॥
बिकसत कमलावली, चले प्रपुंज-चंचरीक,
गुंजत कल कोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे।
मानौ बैराग पाइ, सकल सोक-गृह बिहाइ,
प्रेम-मत्त फिरत भृत्य, गुनत गुन तिहारे॥
सुनत बचन प्रिय रसाल, जागे अतिसय दयाल,
भागे जंजाल-जाल, दुख-कदंब टारे।
त्यागे भ्रम-फंद-द्वंद निरखि कै मुखारबिंद,
सूरदास अति अनंद, मेटे मद भारे॥

श्रीयशोदाजी बार-बार कहती हैं—'गोपाललाल, जागो! आनन्दकी निधि प्यारे नन्दनन्दन, सबेरा हो गया! तुम्हारे नेत्र कमल-दलके समान विशाल हैं, प्रेमरूपी बावलीके ये हंस हैं, तुम्हारे सुन्दर मुखपर तो करोड़ों कामदेव न्यौछावर कर दिये। देखो, अरुणोदय हो रहा है, रात्रि बीत गयी, चन्द्रमाकी किरणें क्षीण हो गयीं, दीपक अत्यन्त मलीन (तेजहीन) हो गये, सभी तारोंका तेज घट गया; मानो ज्ञानका दृढ़ प्रकाश होनेसे संसारके सब भोग-विलास छूट गये, आशा और भयरूपी अन्धकारको संतोषरूपी सूर्यकी किरणोंने भस्म कर दिया हो। पक्षियोंका समूह खुलकर मधुर स्वरमें बोल रहा है, इसे विश्वास करके सुनो। मेरे लाल! तुम तो

मेरे परम प्राण और जीवनधन हो। (देखो पक्षियोंका स्वर ऐसा लगता है) मानो वन्दीजन वेद पाठ करते हों, सूत-वृन्द और मागधोंका समूह, हे कैटभारि ! तुम्हारा सुयश गान करता है और बार-बार जय-जयकार कर रहा है। कमलोंका समूह खिलने लगा है, भ्रमरोंका झुंड सुन्दर कोमल स्वरमें गुंजार करता कमलोंको छोड़कर अलग चल पड़ा है। मानो वैराग्य पाकर समस्त शोक और घरको छोड़कर तुम्हारे सेवक तुम्हारा गुणगान करते प्रेममत्त घूम रहे हों।' (माताके) प्यारे रसमय वचन सुनकर अत्यन्त दयालु प्रभु जग गये। (उनके नेत्र खोलते ही जगत्‌के) सब जंजालोंका फंदा दूर हो गया, दुःखोंका समूह नष्ट हो गया। सूरदासने उनके मुखार-विन्दका दर्शन करके अज्ञानके सब फंदे, सब द्वन्द्व त्याग दिये। अब मेरा भारी मद (अहंकार) प्रभुने मिटा दिया, मुझे अत्यन्त आनन्द हो रहा है।

[१२७]

प्रात भयौ, जागौ गोपाल।
नवल सुंदरीं आईं, बोलत तुमहि सबै ब्रजबाल॥
प्रगट्यौ भानु, मंद भयौ उड़पति, फूले तरुन तमाल।
दरसन कौं ठाढ़ी ब्रजबनिता, गूँथि कुसुम बनमाल॥
मुखहि धोइ सुंदर बलिहारी, करहु कलेऊ लाल।
सूरदास प्रभु आनँद के निधि, अंबुज-नैन बिसाल॥

(मैया कहती हैं—) 'हे गोपाल ! सबेरा हो गया, अब जागो। व्रजकी सभी नवयुवती सुन्दरी गोपियाँ तुम्हें पुकारती हुई आ गयी हैं। सूर्योदय हो गया, चन्द्रमाका प्रकाश क्षीण हो गया, तमालके तरुण वृक्ष फूल उठे, व्रजकी गोपियाँ फूलोंकी वनमाला गूँथकर तुम्हारे दर्शनके लिये खड़ी हैं। मेरे लाल ! अपने सुन्दर मुखको धोकर कलेऊ करो, मैं तुमपर बलिहारी हूँ।' सूरदासजी कहते

हैं कि मेरे स्वामी कमलके समान विशाल लोचनवाले तथा आनन्दकी निधि हैं। (उनकी निद्रामें भी अद्भुत शोभा और आनन्द है।)

[१२८]

जागौ, जागौ हो गोपाल।
नाहिन इतौ सोइयत सुनि सुत, प्रात परम सुचि काल॥
फिरि-फिरि जात निरखि मुख छिन-छिन, सब गोपनि के बाल।
बिन बिकसे कल कमल-कोष तैं मनु मधुपनि की माल॥
जो तुम मोहि न पत्याहु सूर-प्रभु, सुंदर स्याम तमाल।
तौ तुमहीं देखौ आपुन तजि निद्रा नैन बिसाल॥

सूरदासजी कहते हैं कि (मैया मोहनको जगा रही हैं—) 'जागो! जागो गोपाललाल ! प्यारे पुत्र ! सुनो, सबेरेका समय बड़ा पवित्र होता है, इतने समयतक सोया नहीं जाता। क्षण-क्षणमें (बार-बार) तुम्हारे मुखको देखकर सभी ग्वाल-बाल लौट-लौट जाते हैं (तुम्हारे सब सखा जाग गये हैं)। ऐसा लगता है जैसे बिना खिले सुन्दर कमल-कोषसे भौंरोंकी पङ्क्ति लौट-लौट जाती हो। तमालके समान श्याम वर्णवाले मेरे सुन्दर लाल ! यदि तुम मेरा विश्वास न करते हो तो नींद छोड़कर अपने बड़े-बड़े नेत्रोंसे स्वयं तुम्हीं (इस अद्भुत बातको) देख लो।'

राग भैरव

[१२९]

उठौ नँदलाल भयौ भिनुसार, जगावति नंद की रानी।
झारी कैं जल बदन पखारौ, सुख करि सारँगपानी॥
माखन-रोटी अरु मधु-मेवा जो भावै लेउ आनी।
सूर स्याम मुख निरखि जसोदा, मनहीं-मन जु सिहानी॥

श्रीनन्दरानी जगाती हुई कह रही हैं कि 'नन्दनन्दन ! उठो, प्रातःकाल हो गया। हे शार्ङ्गपाणि मोहन ! झारीके जलसे आनन्दपूर्वक मुख धो लो। मक्खन-

रोटी, मधु, मेवा आदि जो (भी) अच्छा लगे वह आकर लो।' सूरदासजी कहते हैं कि (इस प्रकार जगाते समय) श्यामसुन्दरका मुख देखकर यशोदाजी मन-ही-मन फूल रही हैं।

राग बिलावल

[१३०]

तुम जागौ मेरे लाड़िले, गोकुल-सुखदाई।
कहति जननि आनंद सौं, उठौ कुँवर कन्हाई॥
तुम कौं माखन-दूध-दधि, मिस्री हौं ल्याई।
उठि कै भोजन कीजिऐ, पकवान-मिठाई॥
सखा द्वार परभात सौं, सब टेर लगाई।
बन कौं चलिऐ साँवरे, दयौ तरनि दिखाई॥
सुनत बचन अति मोद सौं, जागे जदुराई।
भोजन करि बन कौं चले, सूरज बलि जाई॥

माता आनन्दपूर्वक कह रही हैं—मेरे लाड़िले, गोकुलको सुख देनेवाले लाल, तुम जागो! कुँवर कन्हाई! उठो, तुम्हारे लिये मैं मक्खन, दूध, दही और मिश्री ले आयी हूँ। उठ कर पकवान और मिठाइयोंका भोजन करो। सबेरेसे ही सब सखा द्वारपर खड़े पुकार रहे हैं कि 'श्यामसुन्दर! देखो, सूर्य दिखायी देने लगा, अब वनको चलो।' (माताकी) यह बात सुनकर श्री-यदुनाथ अत्यन्त आनन्दसे जागे और भोजन करके वनको चल पड़े। सूरदास इनपर बलिहारी जाता है।

[१३१]

भोर भयौ जागौ नँद-नंद।
तात निसि बिगति भई, चकई आनंदमई,
तरनि की किरन तैं चंद भयौ मंद॥

तमचूर खग रोर, अलि करैं बहु सोर,
बेगि मोचन करहु सुरभि-गल-फंद।
उठहु भोजन करहु, खोरी उतारि धरहु,
जननि प्रति देहु सिसु रूप निज कंद॥
तीय दधि-मथन करैं, मधुर धुनि श्रवन परैं,
कृष्न जस बिमल गुनि करति आनंद।
सूर-प्रभु हरि-नाम उधारत जग-जननि,
गुननि कौं देखि कै छकित भयौ छंद॥

(माता कहती हैं—) 'सबेरा हो गया, नन्दनन्दन! जागो। लाल! रात बीत गयी। (सबेरा होनेसे) चक्रवाकी (पक्षी) को आनन्द हो रहा है, सूर्यकी किरणोंसे चन्द्रमा तेजोहीन हो गया। मुर्गे तथा अन्य पक्षी कोलाहल कर रहे हैं, भौंरे खूब गुंजार करने लगे हैं; अब तुम झटपट गायोंके गलेकी रस्सियाँ खोल दो। उठो, भोजन करो, (मुख धोकर कलकी लगी) चन्दनकी खौर उतार दो, मैयाको अपने आनन्दकन्द शिशु-मुखको दिखलाओ। गोपियाँ दधि-मन्थन करने लगी हैं, उसकी मधुर ध्वनि सुनायी पड़ रही है, कृष्णचन्द्र! वे तुम्हारे निर्मल यशका स्मरण करके (उसे गाती हुई) आनन्द मना रही हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीका नाम ही संसारके लोगोंका उद्धार कर देता है, उनके गुणोंको देखकर तो वेद भी चकरा जाते हैं (वे भी उनके गुणोंका वर्णन नहीं कर पाते)।

[१३२]

कौन परी मेरे लालहि बानि।
प्रात समय जागन की बिरियाँ सोवत है पीतांबर तानि॥
संग सखा ब्रज-बाल खरे सब, मधुबन धेनु चरावन जान।
मातु जसोदा कब की ठाढ़ी, दधि-ओदन भोजन लिये पान॥

तुम मोहन ! जीवन-धन मेरे, मुरली नैकु सुनावहु कान।
यह सुनि स्रवन उठे नँदनंदन, बंसी निज माँग्यौ मृदु बानि ॥
जननी कहति लेहु मनमोहन, दधि ओदन घृत आन्यौ सानि ।
सूर सु बलि-बलि जाउँ बेनु की, जिहिं लगि लाल जगे हित मानि ॥

(माता कहती हैं–) 'मेरे लालको यह कौन-सी बान (आदत) पड़ गयी कि प्रातःकाल जब कि जग जानेका समय है, यह पीताम्बर तानकर (पटुका ओढ़कर)सोता है ।' साथके सब सखा व्रजके बालक मधुवनमें गायें चराने जानेके लिये खड़े हैं । माता यशोदा बहुत देरसे भोजन (कलेऊ) के लिये दही-भात तथा जल लिये खड़ी हैं । (माताने कहा–) 'मोहन ! तुम तो मेरे जीवनधन हो, तनिक मुरली बजाकर तो सुनाओ; मैं अपने कानों सुनूँ ।' कानोंसे यह सुनते ही श्रीनन्दनन्दन उठ गये और उन्होंने मधुर वाणीसे अपनी वंशी माँगने लगे । तब माता कहने लगीं—'मोहन ! मैं दही-भात और घी सानकर (मिलाकर) ले आयी हूँ, इसे ले लो (खा लो) ।' सूरदासजी कहते हैं कि इस वंशीपर बार-बार बलिहारी जाऊँ, जिससे प्रेम मानकर उसके लिये कुँवर कान्ह जग गये ।

[१३३]

जागिये गुपाल लाल ! ग्वाल द्वार ठाढ़े ।
रैनि-अंधकार गयौ, चंद्रमा मलीन भयौ,
तारागन देखियत नहिं तरनि-किरनि बाढ़े ॥
मुकुलित भए कमल-जाल, गुंज करत भृंग-माल,
प्रफुलित बन पुहुप डाल, कुमुदिनि कुँभिलानी ।
गंध्रबगन गान करत, स्नान दान नेम धरत,
हरत सकल पाप, बदत बिप्र बेद-बानी ॥
बोलत नँद बार-बार देखैं मुख तुव कुमार,
गाइनि भइ बड़ी बार, बृंदाबन जैबैं ।
जननि कहति उठौ स्याम, जानत जिय रजनि-ताम,
सूरदास प्रभु कृपाल, तुम कौं कछु खैबैं ॥

गोपाललाल ! जागो; द्वारपर सब गोप (तुम्हारी प्रतीक्षामें) खड़े हैं। रात्रिका अन्धकार दूर हो गया, चन्द्रमा मलिन पड़ गया, अब तारे नहीं दीख पड़ते, सूर्यकी किरणें फैल रही हैं, कमलोंके समूह खिल गये, भ्रमरोंका झुंड गुंजार कर रहा है, वनमें पुष्प (वृक्षोंकी) डालियोंपर खिल उठे, कुमुदिनी संकुचित हो गयी, गन्धर्वगण गान कर रहे हैं। इस समय स्नान-दान तथा नियमोंका पालन करके अपने सारे पाप दूर करते हुए विप्रगण वेदपाठ कर रहे हैं। श्रीनन्दजी बार-बार पुकारते हैं—'कुमार ! उठो, तुम्हारा मुख तो देखें; गायोंको वृन्दावन (चरने) जानेमें बहुत देर हो गयी।' माता कहती हैं—'श्यामसुन्दर, उठो ! अभी तुम मनमें रात्रिका अन्धकार ही समझ रहे हो ?' सूरदासजी कहते हैं—मेरे कृपालु स्वामी ! आपको कुछ भोजन भी तो करना है (अतः अब उठ जाइये)।

राग सोरठ

[१३४]

सो सुख नंद भाग्य तैं पायौ।
जो सुख ब्रह्मादिक कौं नाहीं, सोई जसुमति गोद खिलायौ॥
सोइ सुख सुरभि-बच्छ बृंदावन, सोइ सुख ग्वालनि टेरि बुलायौ।
सोइ सुख जमुना-कूल-कदँब चढ़ि, कोप कियौ काली गहि ल्यायौ॥
सुख-ही-सुख डोलत कुंजनि मैं, सब सुख निधि बन तैं ब्रज आयौ।
सूरदास-प्रभु सुख-सागर अति, सोइ सुख सेस सहस मुख गायौ॥

सौभाग्यसे श्रीनन्दजीने उस आनन्दघनको प्राप्त कर लिया है, जो आनन्दस्वरूप ब्रह्मादिकोंको भी प्राप्त नहीं होता; किंतु (यहाँ गोकुलमें तो) उसीको मैया यशोदा गोदमें लेकर खेलाती हैं। (इतना ही नहीं,) वही सुखस्वरूप गायों और बछड़ोंके साथ वृन्दावनमें जाता है, वही सुखनिधि गोपकुमारोंको पुकारकर बुलाता है, वही आनन्दघन यमुना-किनारे

कदम्बपर चढ़ा और क्रोध करके (ह्रदमें कूदकर) कालियनागको पकड़ लाया ! वह तो आनन्द-ही-आनन्द उड़ेलता कुञ्जोंमें घूमता है, समस्त सुखों-की राशि वह (सायंकाल) वनसे व्रजमें आया । सूरदासका वह स्वामी तो सुखोंका महान् समुद्र है, शेषजी अपने सहस्र मुखोंसे उस सुखस्वरूपका ही गुणगान करते हैं ।

राग रामकली

[१३५]

खेलत स्याम ग्वालनि संग ।
सुबल हलधर अरु श्रीदामा, करत नाना रंग ॥
हाथ तारी देत भाजत, सबै करि करि होड़ ।
बरजै हलधर, स्याम ! तुम जनि, चोट लागै गोड़ ॥
तब कह्यौ मैं दौरि जानत, बहुत बल मो गात ।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात ॥
उठे बोलि तबै श्रीदामा, जाहु तारी मारि ।
आगैं हरि पाछैं श्रीदामा, धर्‌यौ स्याम हँकारि ॥
जानि कै मैं रह्यो ठाढ़ौ, छुवत कहा जु मोहि ।
सूर हरि खीझत सखा सौं, मनहिं कीन्हौ कोह ॥

श्यामसुन्दर गोपकुमारोंके साथ खेल रहे हैं। सुबल, बलरामजी और श्रीदामा आदि नाना प्रकारकी क्रीड़ा कर रहे हैं । सब परस्पर होड़ कर-के एक दूसरेके हाथपर ताली मारकर भागते हैं । लेकिन श्रीबलराम मना करते हैं कि 'श्यामसुन्दर ! तुम मत दौड़ो । तुम्हारे पैरोंमें चोट न लगे ।' तब मोहनने कहा—'मैं दौड़ना जानता हूँ । मेरे शरीरमें बहुत बल है। मेरी जोड़ी श्रीदामा है, वह मेरे हाथपर ताली मारकर भागना ही चाहता है।' तब श्रीदामा बोल उठे—'(अच्छा,) तुम मेरे हाथपर ताली मारकर भागो ।' (इस प्रकार श्रीदामाके हाथपर ताली मारकर) श्यामसुन्दर

आगे-आगे दौड़े (और उन्हें पकड़ने) पीछे-पीछे श्रीदामा दौड़े। उन्होंने ललकारकर श्यामको पकड़ लिया। (तब श्यामसुन्दर बोले–) 'मैं तो जान-बूझकर खड़ा हो गया हूँ, (ऐसी दशामें) मुझे क्यों छूते हो।' सूरदासजी कहते हैं कि अपने मनमें रोष करके श्यामसुन्दर अब सखासे झगड़ रहे हैं।

राग गौरी

[१३६]

सखा कहत हैं स्याम खिसाने।
आपुहिं-आपु बलकि भए ठाढ़े, अब तुम कहा रिसाने ?
बीचहिं बोलि उठे हलधर तब, याके माइ न बाप।
हारि-जीत कछु नैकु न समुझत, लरिकनि लावत पाप॥
आपुन हारि सखनि सौं झगरत, यह कहि दियौ पठाइ।
सूर स्याम उठि चले रोइ कै, जननी पूछति धाइ॥

सखा कहने लगे—'श्याम तो झगड़ालू हैं। अपने-आप ही तो जोशमें आकर दौड़ने खड़े हो गये; फिर अब तुम क्रोध क्यों कर रहे हो ?' (इस बातके) बीचमें ही बलरामजी बोल पड़े—'इसके न तो मैया है और न पिता ही। यह हार-जीतको तनिक भी समझता नहीं, (व्यर्थ) बालकोंको दोष देता है। स्वयं हारकर सखाओंसे झगड़ा करता है।' यह कहकर ('घर जाओ !' यों कहकर) (उन्होंने कन्हैयाको) घर भेज दिया। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर रोते हुए उठकर चल पड़े, इससे माता दौड़कर (रोनेका कारण) पूछने लगीं।

[१३७]

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायौ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ, तू जसुमति कब जायौ ?

कहा करौं इहि रिस के मारैं खेलन हौं नहिं जात।
पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात॥
गोरे नंद, जसोदा गोरी, तू कत स्यामल गात।
चुटकी दै-दै ग्वाल नचावत, हँसत सबै मुसुकात॥
तू मोही कौं मारन सीखी, दाउहि कबहुँ न खीझै।
मोहन-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै॥
सुनहु कान्ह, बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत।
सूर स्याम मोहि गोधन की सौं, हौं माता तू पूत॥

(श्यामसुन्दर कहते हैं—) 'मैया! दाऊ दादाने मुझे बहुत चिढ़ाया है। मुझसे कहते हैं—'तू मोल लिया हुआ है, यशोदा मैयाने भला, तुझे कब उत्पन्न किया।' क्या करूँ, इसी क्रोधके मारे मैं खेलने नहीं जाता। वे बार-बार कहते हैं—'तेरी माता कौन है? तेरे पिता कौन हैं? नन्दबाबा तो गोरे हैं, यशोदा मैया भी गोरी हैं, तू साँवले अङ्गवाला कैसे है?' चुटकी देकर (फुसलाकर) ग्वाल-बाल मुझे नचाते हैं, फिर सब मुझे हँसते और मुसकराते हैं। तूने तो मुझे ही मारना सीखा है, दाऊ दादाको कभी डाँटती भी नहीं।' सूरदासजी कहते हैं—मोहनके मुखसे ये क्रोधभरी बातें बार-बार सुनकर यशोदाजी (मन-ही-मन) प्रसन्न हो रही हैं। (वे कहती हैं—) 'कन्हाई, सुनो! बलराम तो चुगलखोर है, वह जन्मसे ही धूर्त है; श्यामसुन्दर! मुझे गोधन (गायों) की शपथ, मैं तुम्हारी माता हूँ और तुम मेरे पुत्र हो।'

राग नट

[१३८]

मोहन, मानि मनायौ मेरौ।
हौं बलिहारी नंद-नँदन की, नैकु इतै हँसि हेरौ॥
कारौ कहि-कहि तोहि खिझावत, बरजत खरौ अनेरौ।
इंद्रनील मनि तैं तन सुंदर, कहा कहै बल चेरौ॥

न्यारौ जूथ हाँकि लै अपनौ, न्यारी गाइ निबेरौ।
मेरौ सुत सरदार सबनि कौ, बहुते कान्ह बड़ेरौ॥
बन मैं जाइ करौ कौतूहल, यह अपनौ है खेरौ।
सूरदास द्वारैं गावत है, बिमल-बिमल जस तेरौ॥

(माता कहती हैं—) 'मोहन ! मेरा मान मनाया (बहुत दुलारा) लाल है। मैं इस नन्द-नन्दनकी बलिहारी जाती हूँ, लाल! तनिक हँसकर इधर तो देखो। काला कह-कहकर दाऊ तुम्हें चिढ़ाता है ? तुम्हें खेलनेसे रोकता है ? वह तो सचमुच बड़ा ऊधमी है, तुम्हारा शरीर तो इन्द्र-नीलमणिसे भी सुन्दर है; भला, तुम्हारा सेवक दाऊ तुम्हें क्या कहेगा। अपनी गायोंको छाँटकर अलग कर लो, वह अपनी गायोंके झुंड अलग हाँक ले। मेरा पुत्र तो सबका सरदार है, मेरा कन्हाई बहुत बड़ा है; तुम वनमें जाकर क्रीड़ा करो, यह तो अपना गाँव है (यहाँ तुम्हें कोई कुछ नहीं कह सकता)। सूरदासजी कहते हैं—प्रभो ! मैं भी द्वारपर खड़ा आपका अत्यन्त निर्मल यश गा रहा हूँ।

राग गौरी

[१३९]

खेलन अब मेरी जाइ बलैया।
जबहिं मोहि देखत लरिकन सँग, तबहिं खिझत बल भैया॥
मोसौं कहत तात बसुदेव कौ, देवकि तेरी मैया।
मोल लियौ कछु दै करि तिन कौं, करि-करि जतन बढ़ैया॥
अब बाबा कहि कहत नंद सौं, जसुमति सौं कहै मैया!
ऐसैं कहि सब मोहि खिझावत, तब उठि चल्यौ खिसैया॥
पाछैं नंद सुनत हे ठाढ़े, हँसत हँसत उर लैया।
सूर नंद बलरामहि धिरयौ, तब मन हरष कन्हैया॥

(श्यामसुन्दर कहते हैं—) 'अब मेरी बला खेलने जाय (मैं तो खेलने जाऊँगा नहीं)। जब भी भैया बलराम मुझे लड़कोंके साथ खेलते

देखते हैं, तभी झगड़ने लगते हैं। मुझसे कहते हैं—'तू वसुदेवजीका पुत्र है, तेरी माता देवकी हैं; उन्हें कुछ देकर (व्रजराजने) तुझे मोल ले लिया और अनेक उपाय करके बड़ा किया। अब तू श्रीनन्दजीको बाबा कहकर पुकारता है और यशोदाजीको मैया कहता है।' इस प्रकारकी बातें कहकर सब मुझे चिढ़ाते हैं, इससे रुष्ट होकर मैं वहाँसे उठकर चला आया।' पीछे खड़े नन्दजी यह सब सुन रहे थे, उन्होंने हँसते-हँसते मोहनको हृदयसे लगा लिया। सूरदासजी कहते हैं कि श्रीनन्दजीने बलराम-जीको डाँटा, तब कन्हाई मनमें प्रसन्न हुए।

राग रामकली

[१४०]

खेलन चलौ बाल गोविंद !
सखा प्रिय द्वारैं बुलावत, घोष-बालक-बृंद ॥
तृषित हैं सब दरस कारन, चतुर ! चातक दास।
बरषि छबि नव बारिधर तन, हरहु लोचन-प्यास ॥
बिनय-बचननि सुनि कृपानिधि, चले मनहर चाल।
ललित लघु-लघु चरन-कर, उर-बाहु-नैन बिसाल ॥
अजिर पद-प्रतिबिंब राजत, चलत उपमा-पुंज।
प्रति चरन मनु हेम बसुधा, देति आसन कंज ॥
सूर-प्रभु की निरखि सोभा रहे सुर अवलोकि।
सरद-चंद चकोर मानौ, रहे थकित बिलोकि ॥

व्रजके बालकोंका समुदाय द्वारपर आ गया, वे सब प्रिय सखा बुलाने लगे—'बालगोविन्द ! खेलने चलो। हे चतुर-शिरोमणि ! हम सब तुम्हारे सेवक तुम्हारे दर्शनके लिये चातकोंके समान प्यासे हैं, अपने नवजलधर-शरीरकी शोभा-की वर्षा करके (वह शोभा दिखलाकर) हमारे नेत्रोंकी प्यास हर लो।' कृपानिधान श्याम यह विनीत वाणी सुनकर मनोहर चालसे

चल पड़े। उनके छोटे-छोटे चरण एवं हाथ बड़े सुन्दर हैं; वक्षःस्थल, भुजाएँ तथा नेत्र बड़े-बड़े हैं। चलते समय उनके चरणोंका प्रतिबिम्ब आँगनमें इस प्रकार शोभा देता है कि उपमाओंका समुदाय ही जान पड़ता है। ऐसा लगता है मानो (आँगनकी) यह स्वर्णमयी भूमि प्रत्येक चरणपर (चरणोंके लिये) कमलका आसन दे रही है। सूरदासके स्वामीकी शोभा देखकर देवता देखते ही रह गये, मानो शरद्-पूर्णिमाके चन्द्रमाको देखते हुए चकोर थकित हो रहे हों।

राग धनाश्री

[१४१]

खेलन कौं हरि दूरि गयौ री।
संग-संग धावत डोलत हैं, कह धौं बहुत अबेर भयौ री॥
पलक ओट भावत नहिं मोकौं, कहा कहौं तोहि बात!
नंदहि तात-तात कहि बोलत, मोहि कहत है मात॥
इतनी कहत स्याम-घन आए, ग्वाल सखा सब चीन्हे।
दौरि जाइ उर लाइ सूर-प्रभु, हरषि जसोदा लीन्हे॥

(माता कहती हैं—) 'सखी! श्याम खेलनेके लिये दूर चले गये। सखाओंके साथ पता नहीं कहाँ-कहाँ दौड़ते घूमते हैं, बहुत देर हो गयी (घरसे गये)। सखी! तुमसे क्या बात कहूँ, नेत्रोंसे उनका ओझल होना ही मुझे अच्छा नहीं लगता। व्रजराजको वे 'बाबा, बाबा' कहते हैं और मुझे 'मैया' कहते हैं। सूरदासजी कहते हैं कि इतनेमें ही अपने परिचित ग्वाल-बाल सखाओंके साथ श्यामसुन्दर आ गये, माता यशोदाने हर्षसे दौड़कर पास जाकर उन्हें हृदयसे लगा लिया।

राग बिहागरौ

[१४२]

खेलन दूरि जात कत कान्हा?
आजु सुन्यौ मैं हाऊ आयौ, तुम नहिं जानत नान्हा॥

इक लरिका अबहीं भजि आयौ, रोवत देख्यौ ताहि।
कान तोरि वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि॥
चलौ न, बेगि सवारैं जैयै, भाजि आपनैं धाम।
सूर स्याम यह बात सुनतहीं बोलि लिए बलराम॥

(कोई सखा कहता है—)'कन्हाई! दूर खेलने क्यों जा रहे हो? आज मैंने सुना कि हाऊ (हौआ) आया है; तुम नन्हे हो, इससे उसे नहीं जानते। एक लड़का अभी भागा आया है, मैंने उसे रोते देखा है। वह हाऊ जिन्हें लड़का समझता है, उन सबोंके कान उखाड़ लेता है। मेरे साथ चलो न, सबेरे (जल्दी) ही अपने घर भागकर चले चलें।' सूरदासजी कहते हैं कि यह बात सुनते ही श्यामसुन्दरने बलरामजीको बुला लिया।

राग जैतश्री

[१४३]

दूरि खेलन जनि जाहु लला मेरे, बन मैं आए हाऊ!
तब हँसि बोले कान्हर, मैया, कौन पठाए हाऊ?
अब डरपत सुनि-सुनि ये बातैं, कहत हँसत बलदाऊ।
सप्त रसातल सेषासन रहे, तब की सुरति भुलाऊ॥
चारि बेद ले गयौ संखासुर, जल मैं रह्यौ लुकाऊ।
मीन-रूप धरि कै जब मार्‌यौ, तबहिं रहे कहँ हाऊ?
मथि समुद्र सुर-असुरनि कैं हित, मंदर जलधि धसाऊ।
कमठ-रूप धरि धर्‌यौ पीठि पर, तहाँ न देखे हाऊ!
जब हिरनाच्छ जुद्ध अभिलाष्यौ, मन मैं अति गरबाऊ।
धरि बाराह-रूप सो मार्‌यौ, लै छिति दंत अगाऊ॥
बिकट-रूप अवतार धर्‌यौ जब, सो प्रहलाद बचाऊ।
हिरनकसिप बपु नखनि बिदार्‌यौ, तहाँ न देखे हाऊ!
बामन-रूप धर्‌यौ बलि छलि कै, तीनि परग बसुधाऊ।
स्रम जल ब्रह्म-कमंडल राख्यौ, दरसि चरन परसाऊ॥

मार्‍यौ मुनि बिनहीं अपराधहि, कामधेनु लै आऊ।
इकइस बार निछत्र करी छिति, तहाँ न देखे हाऊ!
राम-रूप रावन जब मार्‍यौ, दस-सिर बीस-भुजाऊ।
लंक जराइ छार जब कीनी, तहाँ न देखे हाऊ॥
भक्त हेत अवतार धरे, सब असुरनि मारि बहाऊ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाऊ॥

(माताने कहा—) 'मेरे लाल! दूर खेलने मत जाओ, वनमें हौए आये हैं।' तब कन्हाई हँसकर बोले—'मैया! किसने हौओंको भेजा है?' श्रीबलरामजी (छोटे भाईकी) ये बातें सुनकर हँसते हैं और (मन-ही-मन) कहते हैं—'अब आप डरने लगे हैं, किंतु पृथ्वीके नीचेके सातवें लोक पातालमें शेषकी शय्यापर विराजते हैं, उस समयकी सुधि भूल गये। (प्रलयके समय) जब शङ्खासुर (ब्रह्माजीसे) चारों वेद ले गया और प्रलयके जलमें छिप गया, उस समय जब आपने मत्स्यावतार लेकर उसे मारा, तब हौए कहाँ थे? देवता और दैत्योंके लिये आपने समुद्र-मन्थन किया और समुद्रमें डूबते मन्दराचलको कच्छपरूप धारण करके पीठपर लिये रहे, वहाँ भी हौए नहीं दिखलायी पड़े थे। जब दैत्य हिरण्याक्ष अपने मनमें अत्यन्त गर्वित होकर युद्धकी अभिलाषा करने लगा, तब आपने उसे वाराहरूप धारण करके मारा और पृथ्वीको दाँतोंके अगले भागपर उठा लिया। जब आपने भक्त प्रह्लादकी रक्षाके लिये भयंकर नृसिंहरूपमें अवतार लिया और हिरण्यकशिपुका शरीर नखोंसे फाड़ डाला, वहाँ भी तो हौए नहीं दीखे थे। वामनावतार धारण करके आपने बलिसे छल किया और पूरी पृथ्वी तीन ही पदमें नाप ली; उस समय ब्रह्माजीने आपके चरणोंका दर्शन करके उन चरणोंको धोकर चरणोंके पसीनेसे मिला चरणोदक अपने कमण्डलुमें रख लिया। जब (सहस्रार्जुनने) बिना अपराध ही मुनि जमदग्निको मार दिया, क्योंकि उसके द्वारा हरण की गयी कामधेनु आप लौटा लाये थे; तब आपने (उस परशुरामावतारमें) इक्कीस

बार पृथ्वीको क्षत्रियहीन कर दिया, वहाँ भी हौए तो नहीं दीखे थे। जब आपने रामावतार लेकर दस मस्तक और बीस भुजावाले रावणको मारा और जब लंकाको जलाकर भस्म कर दिया, तब भी वहाँ हौए नहीं दीख पड़े थे। भक्तोंकी रक्षाके लिये और असुरोंको मारकर नष्ट कर देनेके लिये आपने यह अवतार लिया है (अब यहाँ यह भयका नाटक क्यों करते हैं ?)' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीकी यह लीला है, जिसका वेद भी नित्यप्रति 'नेति नेति' कहकर (पार नहीं, पार नहीं—इस प्रकार) वर्णन करते हैं।

राग रामकली

[१४४]

जसुमति कान्हहि यहै सिखावति ।
सुनहु स्याम, अब बड़े भए तुम, कहि स्तन-पान छुड़ावति ॥
ब्रज-लरिका तोहि पीवत देखत, हँसत, लाज नहिं आवति ।
जैहैं बिगरि दाँत ये आछे, तातैं कहि समुझावति ॥
अजहूँ छाँड़ि, कह्यौ करि मेरौ, ऐसी बात न भावति ।
सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने, अंचल मुखहि लुकावत ॥

श्रीयशोदाजी कन्हाईको यही सिखला रही हैं कि—'कन्हाई, सुनो ! अब तुम बड़े हो गये।' यों कहकर उनका स्तन पीना छुड़ाती हैं। (वे कहती हैं—) व्रजके बालक तुम्हें स्तन पीते देखकर हँसते हैं, तुम्हें लज्जा नहीं आती ? तुम्हारे ये अच्छे सुन्दर दाँत बिगड़ जायँगे, इससे तुम्हें बताकर समझा रही हूँ। अब भी तुम (यह स्वभाव) छोड़ दो, मेरा कहना मानो; ऐसी बात (हठ) अच्छी नहीं लगती। सूरदासजी कहते हैं कि यह सुनकर श्यामसुन्दर माताके अंचलमें (दूध पीनेके लिये) मुख छिपाते हुए मुसकरा पड़े।

राग सारंग

[१४५]

नंद बुलावत हैं गोपाल।
आवहु बेगि बलैया लेउँ हौं, सुंदर नैन बिसाल॥
परस्यौ थार धरयौ मग जोवत, बोलति बचन रसाल।
भात सिरात तात दुख पावत, बेगि चलौ मेरे लाल॥
हौं वारी नान्हे पाइनि की, दौरि दिखावहु चाल।
छाँड़ि देहु तुम लाल अटपटी, यह गति मंद मराल॥
सो राजा जो अगमन पहुँचै, सूर सु भवन उताल।
जो जैहैं बलदेव पहिलै हीं, तौ हँसिहैं सब ग्वाल॥

माता बड़ी रसमयी प्रेमभरी (वाणीसे पुकारती हैं) 'सुन्दर बड़े-बड़े लोचनोंवाले गोपाल ! शीघ्र आओ, मैं तुम्हारी बलैया लूँ। तुम्हें नन्दबाबा बुला रहे हैं, थाल परोसा हुआ रखा है ! (बाबा भोजनके लिये) तुम्हारा रास्ता देख रहे हैं; भात ठंढा हुआ जाता है, (इससे बाबा) खिन्न हो रहे हैं। मेरे लाल ! झटपट चलो। मैं तुम्हारे इन नन्हे चरणोंपर बलिहारी, जाती हूँ, दौड़कर अपनी चाल तो दिखलाओ। लाल ! यह हंसके समान अटपटी मन्दगति (इस समय) छोड़ दो।' सूरदासजी कहते हैं—(मैयाने कहा—) 'जो शीघ्रतापूर्वक पहले घर पहुँच जाय, वही राजा होगा। यदि बलराम पहले पहुँच जायँगे तो सब गोपबालक तुम्हारी हँसी करेंगे।'

[१४६]

जेंवत कान्ह नंद इकठौरे।
कछुक खात लपटात दोउ कर, बालकेलि अति भोरे॥
बरा-कौर मेलत मुख भीतर, मिरिच दसन टकटौरे।
तीछन लगी नैन भरि आए, रोवत बाहर दौरे॥
फूँकति बदन रोहिनी ठाढ़ी, लिए लगाइ अँकोरे।
सूर स्याम कौं मधुर कौर दै कीन्हे तात निहोरे॥

श्रीनन्दजी और कन्हाई एक स्थानमें (एक थालमें) भोजन कर रहे हैं। बालोचितक्रीड़ाके आवेशमें अत्यन्त भोले बने हुए श्रीकृष्ण कुछ खाते हैं और कुछ दोनों हाथोंमें लिपटा लेते हैं। कभी मुखमें बड़े-का ग्रास डालते हैं।(इस प्रकार भोजन करते हुए) दाँतोंसे मिर्चका स्पर्श हो जानेपर वह तीक्ष्ण लगी। नेत्रोंमें जल भर आया, रोते हुए बाहर दौड़ चले। माता रोहिणीने उठाकर उन्हें गोदमें ले लिया और खड़ी-खड़ी उनके मुखको फूँकने लगीं। सूरदासजी कहते हैं कि बाबाने श्यामसुन्दरको मीठा ग्रास देकर उनको प्रसन्न किया।

राग कान्हरौ

[१४७]

साँझ भई घर आवहु प्यारे।
दौरत कहा चोट लगिहै कहुँ, पुनि खेलिहौ सकारे ॥
आपुहिं जाइ बाँह गहि ल्याई, खेह रही लपटाइ।
धूरि झारि तातौ जल ल्याई, तेल परसि अन्हवाइ ॥
सरस बसन तन पोंछि स्याम कौ, भीतर गई लिवाइ।
सूर स्याम कछु करौ बियारी, पुनि राखौं पौढ़ाइ ॥

(माता कहती हैं—) 'प्यारे लाल! संध्या हो गयी, अब घर चले आओ। दौड़ते क्यों हो, कहीं चोट लग जायगी, सबेरे फिर खेलना।' (यह कहकर) स्वयं जाकर भुजा पकड़कर माता मोहनको ले आयी। उनके शरीरमें धूलि लिपट रही थी, शरीरकी धूलि झाड़कर तेल लगाया और गरम जल ले आकर स्नान कराया। कोमल वस्त्रसे श्यामका शरीर पोंछकर तब उन्हें घरके भीतर ले गयी। सूरदासजी कहते हैं—(मैयाने कहा—) 'लाल! कुछ ब्यालू (सायंकालीन भोजन) कर लो, फिर सुला दूँ।'

राग बिहागरौ

[१४८]

बल-मोहन दोउ करत बियारी।
प्रेम सहित दोउ सुतनि जिंवावति, रोहिनि अरु जसुमति महतारी ॥

दोउ भैया मिलि खात एक सँग, रतन-जटित कंचन की थारी।
आलस सौं कर कौर उठावत, नैननि नींद झमकि रही भारी॥
दोउ माता निरखत आलस मुख-छबि पर तन-मन डारतिं वारी।
बार-बार जमुहात सूर-प्रभु, इहि उपमा कबि कहै कहा री!

बलराम और श्यामसुन्दर दोनों भाई ब्यालू कर रहे हैं। माता रोहिणी और मैया यशोदा प्रेमपूर्वक दोनों पुत्रोंको भोजन करा रही हैं। रत्नजटित सोनेके थालमें दोनों भाई एक साथ बैठकर भोजन कर रहे हैं। दोनों आलस्यपूर्वक हाथोंसे ग्रास उठाते हैं, नेत्रोंमें अत्यन्त गाढ़ी निद्रा छा गयी है। दोनों माताएँ पुत्रोंके अलसाये मुखकी शोभा देख रही हैं और उसपर अपना तन-मन न्यौछावर किये देती हैं। सूरदासके स्वामी बार-बार जम्हाई ले रहे हैं; भला, कोई कवि इस छटाकी उपमा किसके साथ देगा।

राग केदारौ

[१४९]

कीजै पान लला रे यह लै आई दूध जसोदा मैया।
कनक-कटोरा भरि लीजै, यह पय पीजै, अति सुखद कन्हैया॥
आछैं औट्यौ मेलि मिठाई, रुचि करि अँचवत क्यौं न नन्हैया।
बहु जतननि ब्रजराज लड़ैते, तुम कारन राख्यौ बल भैया॥
फूँकि-फूँकि जननी पय प्यावति, सुख पावति जो उर न समैया।
सूरज स्याम-राम पय पीवत, दोऊ जननी लेतिं बलैया॥

मैया यशोदा दूध ले आयीं (और बोलीं—) 'लाल! यह सोनेका दूध-भरा कटोरा लेकर दूध पियो! कन्हाई! यह अत्यन्त सुखदायी दूध पी लो! इसमें मीठा डालकर इसे भली प्रकार मैंने औटाया (गरम करके गाढ़ा किया) है, मेरे नन्हे लाल! रुचिपूर्वक इसे क्यों नहीं पीते हो? व्रजराजके लाड़िले लाल! तुम्हारे साथ दूध पीनेके लिये बड़े यत्नसे तुम्हारे दाऊ भैयाको मैंने रोक रक्खा है।' माता फूँक-फूँककर (शीतल करके) दूध

पिला रही हैं, और ऐसा करनेमें इतना आनन्द पा रही हैं, जो हृदयमें समाता नहीं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर और बलरामजी दूध पी रहे हैं। दोनों माताएँ बलैया लेती हैं (जिसमें उन्हें नजर न लग जाय)।

[१५०]

बल-मोहन दोऊ अलसाने।
कछु-कछु खाइ दूध अँचयौ, तब जम्हात जननी जाने॥
उठहु लाल! कहि मुख पखरायौ, तुम कौं लै पौढ़ाऊँ।
तुम सोवौ मैं तुम्हें सुवाऊँ, कछु मधुरैं सुर गाऊँ॥
तुरत जाइ पौढ़े दोउ भैया, सोवत आई निंद।
सूरदास जसुमति सुख पावति पौढ़े बालगोविंद॥

बलराम और श्यामसुन्दर दोनों भाई अलसा गये (आलस्यपूर्ण हो गये) हैं। थोड़ा-थोड़ा भोजन करके उन्होंने दूध पी लिया, तब माताने देखा कि उन्हें जम्हाई आ रही है। (अतः इन्हें अब सुला देना चाहिये)। 'लाल उठो!' यह कहकर उनका मुख धुलाया; फिर कहा—'आओ, तुम्हें (पलंगपर) लिटा दूँ; तुम सोओ, मैं कुछ मधुर स्वरसे गाकर तुम्हें सुलाऊँ।' दोनों भाई तुरंत ही जाकर लेट गये, लेटते ही उन्हें निद्रा आ गयी। सूरदासजी कहते हैं कि बाल गोविन्दको सोते देख माता यशोदा आनन्दित हो रही हैं।

राग सूहौ

[१५१]

माखन बाल गोपालहि भावै।
भूखे छिन न रहत मन मोहन, ताहि बदौं जो गहरु लगावै॥
आनि मथानी दह्यौ बिलोवौं, जौ लगि लालन उठन न पावै।
जागत ही उठि रारि करत है, नहिं मानै जौ इंद्र मनावै॥
हौं यह जानति बानि स्याम की, अँखियाँ मीचे बदन चलावै।
नंद-सुवन की लगौं बलैया, यह जूठनि कछु सूरज पावै॥

(माता कहती हैं—) 'मेरे बालगोपालको मक्खन रुचिकर है। मनमोहन एक क्षण भी भूखे नहीं रह सकता; इसमें जो देर लगा सके, उससे मैं होड़ बद सकती हूँ। मथानी लाकर मैं तबतक दही मथ लूँ जबतक कि मेरा लाल जाग न जाय; (क्योंकि) उठते ही वह (मक्खनके लिये) मचल जाता है और फिर इन्द्र भी आकर मनावें तो मान नहीं सकता। मैं श्यामका यह स्वभाव जानती हूँ कि वह (आधी नींदमें भी उठकर मक्खन लेकर) नेत्र बंद किये हुए मुँह चलाता रहता है।' सूरदासजी कहते हैं कि मैं श्रीनन्दनन्दनके ऊपर बलिहारी जाता हूँ, उनका यह उच्छिष्ट कुछ मुझे भी मिल जाय।

राग बिलावल

[१५२]

भोर भयौ मेरे लाड़िले, जागौ कुँवर कन्हाई।
सखा द्वार ठाढ़े सबै, खेलौ जदुराई॥
मोकौं मुख दिखराइ कै, त्रय-ताप नसावहु।
तुव मुख-चंद चकोर-दृग मधु-पान करावहु॥
तब हरि मुख-पट दूरि कै, भक्तनि सुखकारी।
हँसत उठे प्रभु सेज तैं, सूरज बलिहारी॥

(मैयाने कहा—) 'मेरे दुलारे लाल! सबेरा हो गया, कुँवरकन्हाई जागो। हे यदुनाथ! तुम्हारे सब सखा द्वारपर खड़े हैं, (उनके साथ) खेलो। मुझे अपना मुख दिखलाकर तीनों ताप दूर करो। मेरे नेत्र तुम्हारे मुखरूपी चन्द्रमाके चकोर हैं, इन्हें (अपनी) रूपमाधुरीका पान कराओ।' तब भक्तोंके हितकारी प्रभु श्यामसुन्दर अपने मुखपरसे वस्त्र हटाकर हँसते हुए पलंगपरसे उठे। सूरदास अपने इन स्वामीपर बलिहारी है।

[१५३]

भोर भयौ जागो नँदनंदन।
संग सखा ठाढ़े जग-बंदन॥

सुरभी पय हित बच्छ पियावैं।
पंछी तरु तजि दहुँ दिसि धावैं॥
अरुन गगन तमचुरनि पुकार्‌यौ।
सिथिल धनुष रति-पति गहि डार्‌यौ॥
निसि निघटी रबि-रथ रुचि साजी।
चंद मलिन चकई रति-राजी॥
कुमुदिनि सकुची बारिज फूले।
गुंजत फिरत अली-गन झूले॥
दरसन देहु मुदित नर-नारी।
सूरज-प्रभु दिन देव मुरारी॥

नन्दनन्दन! सबेरा हो गया, अब जागो। हे विश्वके वन्दनीय! तुम्हारे सब सखा द्वारपर खड़े हैं। गायें प्रेमसे बछड़ोंको दूध पिला रही हैं, पक्षी पेड़ोंको छोड़कर दसों दिशाओंमें उड़ने लगे हैं। आकाशमें अरुणोदय देखकर मुर्गे बोल रहे हैं। कामदेवने हाथमें लिया धनुष डोरी उतारकर रख दिया है। रात्रि व्यतीत हो गयी, भली प्रकार सजा सूर्यका रथ प्रकट हो गया। चन्द्रमा मलिन पड़ गया और चक्रवाकी अपने जोड़ेसे मिलकर प्रसन्न हो गयी। कुमुदिनियाँ कुम्हिला गयीं। कमल फूल उठे, उनपर मँडराते भौंरे गुंजार कर रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे सदाके आराध्यदेव श्रीमुरारि! अब दर्शन दो, जिससे (व्रजके) स्त्री-पुरुष आनन्दित हों।

राग सारंग

[१५४]

न्हात नंद सुधि करी स्याम की, ल्यावहु बोलि कान्ह-बलराम।
खेलत बड़ी बार कहुँ लाई, ब्रज भीतर काहू कैं धाम॥
मेरैं संग आइ दोउ बैठैं, उन बिनु भोजन कौने काम।
जसुमति सुनत चली अति आतुर, ब्रज-घर-घर टेरति लै नाम॥

आजु अबेर भई कहुँ खेलत, बोलि लेहु हरि कौं कोउ बाम।
ढूँढ़ति फिरि नहिं पावति हरि कौं, अति अकुलानी, तावति घाम॥
बार-बार पछिताति जसोदा, बासर बीति गए जुग जाम।
सूर स्याम कौं कहूँ न पावति, देखे बहु बालक के ठाम॥

स्नान करते समय श्रीनन्दजीने श्यामसुन्दरका स्मरण किया और कहा कि 'श्याम और बलरामको बुला लाओ। व्रजके भीतर किसीके घरपर कहीं खेलते हुए दोनोंने बड़ी देर लगा दी। दोनों मेरे साथ आकर बैठें, उनके बिना भला, भोजन किस कामका।' यह सुनते ही श्रीयशोदाजी आतुरतापूर्वक चल पड़ीं। वे व्रजमें घर-घर (पुत्रोंका) नाम ले-लेकर उन्हें पुकार रही हैं। (गोपियोंसे बोलीं—) 'आज कहीं खेलते हुए श्यामसुन्दरको बहुत देर हो गयी, कोई सखी उन्हें बुला तो लाओ।' ढूँढ़ते हुए घूमती-रही, किंतु मोहनको पा नहीं रही हैं। बहुत व्याकुल हो गयी हैं और धूपसे संतप्त हो उठी हैं। श्रीयशोदाजी बार-बार पश्चात्ताप कर रही हैं कि 'दिनके दो पहर बीत गये (मेरे पुत्र अब भी भूखे हैं)।' सूरदासजी कहते हैं कि उन्होंने बालकोंके (खेलनेके) बहुत-से स्थान देख लिये, किंतु कहीं श्यामसुन्दरको पा नहीं रही हैं।

[१५५]

कोउ माई बोलि लेहु गोपालहि।
मैं अपने कौ पंथ निहारति, खेलत बेर भई नँदलालहि॥
टेरत बड़ी बार भइ मोकौं, नहिं पावति घनस्याम तमालहि।
सिध जेंवन सिरात नँद बैठे, ल्यावहु बोलि कान्ह ततकालहि॥
भोजन करै नंद सँग मिलि कै, भूख लगी ह्वैहै मेरे बालहि।
सूर स्याम-मग जोवति जननी, आइ गए सुनि बचन रसालहि॥

(मैया यशोदा कहती हैं—) 'कोई सखी गोपालको बुला तो लो! मैं अपने लालका मार्ग जोहती हूँ, उस नन्दनन्दनको खेलते हुए देर हो

गयी। मुझे पुकारते बहुत देर हो गयी; किंतु तमालके समान श्याम उस घनश्यामको पा नहीं रही हूँ, बना हुआ भोजन ठंढा हुआ जाता है। व्रजराज बैठे (प्रतीक्षा कर रहे) हैं, इसलिये कन्हाईको तुरंत बुला लाओ। मेरे बालक-को भूख लगी होगी, वह बाबा नन्दजीके साथ बैठकर भोजन कर ले।' सूरदासजी कहते हैं कि माता इस प्रकार मार्ग देख ही रही थीं कि उनकी रसमयी (प्रेमभरी) बात सुनकर श्यामसुन्दर स्वयं आ गये।

राग नटनारायन

[१५६]

हरि कौं टेरति है नँदरानी।
बहुत अबार भई कहँ खेलत, रहे मेरे सारँग-पानी ?
सुनतहिं टेर, दौरि तहँ आए, कब के निकसे लाल।
जेंवत नहीं नंद तुम्हरे बिनु, बेगि चलौ, गोपाल॥
स्यामहि ल्याई महरि जसोदा, तुरतहिं पाइँ पखारे।
सूरदास प्रभु संग नंद कैं बैठे हैं दोउ बारे॥

श्रीनन्दरानी हरिको पुकार रही हैं—'मेरे शार्ङ्गपाणि ! बहुत देर हो गयी, तुम अबतक कहाँ खेलते थे ? लाल ! तुम कबसे घरसे निकले हो, तुम्हारे बिना बाबा नन्द भोजन नहीं कर रहे हैं। गोपाल ! अब झटपट चलो।' माताकी पुकार सुनकर श्याम दौड़कर वहाँ आ गये। व्रजरानी यशोदाजीने मोहनको घर ले आकर तुरंत ही उनके चरण धोये। सूरदासके स्वामी व्रजराजके दोनों बालक व्रजराज श्रीनन्दजीके साथ (भोजन करने) बैठे हैं।

राग कान्हरौ

[१५७]

बोलि लेहु हलधर भैया कौं।
मेरे आगैं खेल करौ कछु, सुख दीजै मैया कौं॥
मैं मूँदौं हरि ! आँखि तुम्हारी, बालक रहैं लुकाई॥

हरषि स्याम सब सखा बुलाए खेलन आँखि-मुँदाई ॥
हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै, हरि कह्यौ मातु जसोदा ।
सूर स्याम लए जननि खिलावति, हरष सहित मन मोदा ॥

(माताने मोहनसे कहा—) 'लाल ! अपने बड़े भाई बलरामको बुला लो । मेरे सामने ही कोई खेल खेलो और अपनी मैयाको भी आनन्द दो । श्यामसुन्दर ! मैं तुम्हारे नेत्र बंद करूँ, (दूसरे सब) बालक छिप जायँ।' इससे प्रसन्न होकर आँखमिचौनी खेलनेके लिये श्यामसुन्दरने सब सखाओंको बुलाया । बलरामजीने पूछा—'आँख बंद कौन करेगा ?' श्यामसुन्दर बोले—'मैया यशोदा (मेरे) नेत्र बंद करेंगी ।' सूरदासजी कहते हैं, प्रसन्नताके साथ श्यामसुन्दरको साथ लेकर माता खेला रही हैं । उनका चित्त आनन्दित हो रहा है ।

राग गौरी

[१५८]

हरि तब अपनी आँखि मुँदाई ।
सखा सहित बलराम छपाने, जहँ-तहँ गए भगाई ॥
कान लागि कह्यौ जननि जसोदा, वा घर मैं बलराम ।
बलदाऊ कौं आवन दैहौं, श्रीदामा सौं काम ॥
दौरि-दौरि बालक सब आवत, छुवत महरि कौ गात ।
सब आए रहे सुबल श्रीदामा, हारे अब कैं तात ॥
सोर पारि हरि सुबलहि धाए, गह्यौ श्रीदामा जाइ ।
दै-दै सौहैं नंद बबा की, जननी पै लै आइ ॥
हँसि-हँसि तारी देत सखा सब, भए श्रीदामा चोर ।
सूरदास हँसि कहति जसोदा, जीत्यौ है सुत मोर ॥

तब (खेलके प्रारम्भमें) श्यामने अपने नेत्र बंद करवाये। सखाओंके साथ बलरामजी इधर-उधर भागकर छिप गये । मैया यशोदाने (श्यामके)

कानोंसे लगकर कहा—'बलराम उस घरमें हैं।' (मोहन बोले—) 'दाऊ दादाको आने दूँगा, मुझे तो श्रीदामासे काम है (उसे छूकर चोर बनाना है)। सभी बालक दौड़-दौड़कर आते हैं और व्रजरानीका शरीर छूते हैं, सब आ गये। केवल सुबल और श्रीदामा रह गये। (तब मैयाने कहा—) 'लाल ! अबकी बार तो तुम हारते दीखते हो।' ललकारकर श्यामसुन्दर (धोखा देनेके लिये) सुबलकी ओर दौड़े; किंतु जाकर श्रीदामाको पकड़ लिया, फिर बार-बार नन्दबाबाकी शपथ दिलाकर उसे माताके पास ले आये। सब सखा हँसते हुए बार-बार ताली बजाने लगे—'श्रीदामा चोर हो गये।' सूरदासजी कहते हैं कि श्रीयशोदाजी हँसकर कहने लगीं—'मेरा पुत्र विजयी हुआ है।'

राग केदारौ

[१५९]

पौढ़िऐ मैं रचि सेज बिछाई।
अति उज्ज्वल है सेज तुम्हारी, सोवत मैं सुखदाई॥
खेलत तुम निसि अधिक गई सुत, नैननि नींद झँपाई।
बदन जँभात, अंग ऐंडावत, जननि पलोटति पाई॥
मधुरैं सुर गावत केदारौ, सुनत स्याम चित लाई।
सूरदास प्रभु नंद-सुवन कौं नींद गई तब आई॥

(रात्रि हो जानेपर माता कहती हैं—) 'लाल ! मैंने खूब सजाकर तुम्हारी पलंग बिछा दी है, अब तुम लेट जाओ। तुम्हारी पलंग अत्यन्त उज्ज्वल है और सोनेमें सुखदायक है। तुम्हें खेलते हुए अधिक रात्रि बीत गयी। लाल ! अब तुम्हारे नेत्र निद्रासे झपक रहे हैं।' श्यामसुन्दर मुखसे जम्हाई लेते हैं, शरीरसे अँगड़ाई लेते हैं। माता उनके पैर दबा रही हैं तथा मधुर स्वरमें केदारा राग गा रही हैं, श्यामसुन्दर चित्त लगाकर सुन रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि तब नन्दनन्दनको निद्रा आ गयी।

राग सारंग

[१६०]

खेलन जाहु बाल सब टेरत।
यह सुनि कान्ह भए अति आतुर, द्वारैं तन फिरि हेरत॥
बार-बार हरि मातहि बूझत, कहि चौगान कहाँ है।
दधि-मथनी के पाछैं देखौ, लै मैं धर्‌यौ तहाँ है॥
लै चौगान-बटा अपनैं कर, प्रभु आए घर बाहर।
सूर स्याम पूछत सब ग्वालनि, खेलौंगे किहिं ठाहर॥

(माताने कहा–) 'लाल ! खेलने जाओ, सब बालक तुम्हें पुकार रहे हैं।' यह सुनकर कन्हाई अत्यन्त आतुर हो उठे। बार-बार द्वारकी ओर देखने लगे। बार-बार मोहन मैयासे पूछने लगे–'मेरा गेंद खेलनेका बल्ला कहाँ है ?' (माताने कहा–) 'दहीके माटके पीछे देखो, मैंने लेकर वहाँ रख दिया है।' अपने हाथमें बल्ला और गेंद लेकर मोहन घरसे बाहर आये। सूरदासजी कहते हैं––श्यामसुन्दर सब ग्वाल-बालकोंसे पूछ रहे हैं–'किस स्थानपर खेलोगे ?'

[१६१]

खेलत बनैं घोष निकास।
सुनहु स्याम, चतुर-सिरोमनि, इहाँ है घर पास॥
कान्ह-हलधर बीर दोऊ, भुजा-बल अति जोर।
सुबल, श्रीदामा, सुदामा, वै भए इक ओर॥
और सखा बँटाइ लीन्हे, गोप-बालक-बृंद।
चले ब्रज की खोरि खेलत, अति उमँगि नँद-नंद॥
बटा धरनी डारि दीनौ, लै चले ढरकाइ।
आपु अपनी घात निरखत, खेल जम्यौ बनाइ॥
सखा जीतत स्याम जाने, तब करी कछु पेल।
सूरदास कहत सुदामा, कौन ऐसौ खेल॥

(सखाओंने कहा–) 'चतुरशिरोमणि श्यामसुन्दर सुनो ! यहाँ तो घर पास है, ग्रामके बाहर मैदानमें खेलते बनेगा (खेलनेकी स्वच्छन्दता रहेगी)।' कन्हाई और श्रीबलराम—ये दोनों भाई जिनकी भुजाएँ बलवान् थीं और जो स्वयं भी अत्यन्त शक्तिमान् थे, एक दलके प्रमुख हो गये। सुबल, श्रीदामा और सुदामा दूसरी ओर हो गये। गोपबालकोंके समूहके दूसरे सखाओंका भी बँटवारा करा लिया। श्रीनन्दनन्दन बड़ी उमंगमें भरकर व्रजकी गलियोंमें खेलते हुए (ग्रामके बाहर) चल पड़े। (बाहर जाकर) गेंद पृथ्वीपर डाल दिया और उसे लुढ़काते हुए ले चले। सब अपना-अपना अवसर देखते थे, खेल भली प्रकार जम गया। श्यामसुन्दरने देखा कि सखा जीत रहे हैं, तब कुछ मनमानी करने लगे। सूरदासजी कहते हैं कि (उनकी मनमानी देखकर) सुदामाने कहा–'ऐसा (बेईमानीका) खेल कौन खेले।'

[१६२]

खेलत मैं को काकौ गुसैयाँ।
हरि हारे जीते श्रीदामा, बरबसहीं कत करत रिसैयाँ॥
जाति-पाँति हम तें बड़ नाहीं, नाहीं बसत तुम्हारी छैयाँ।
अति अधिकार जनावत यातैं, जातैं अधिक तुम्हारैं गैयाँ।
रुहठि करै तासौं को खेलै, रहे बैठि जहँ-तहँ सब ग्वैयाँ।
सूरदास प्रभु खेल्यौइ चाहत, दाउँ दियौ करि नंद-दुहैयाँ॥

(सखाओंने कहा–) 'श्याम ! खेलनेमें कौन किसका स्वामी है (तुम व्रजराजके लाड़िले हो तो हो क्या गया)। तुम हार गये हो और श्रीदामा जीत गये हैं, फिर झूठमूठ झगड़ा क्यों करते हो ? जाति-पाँति तुम्हारी हमसे बड़ी नहीं है (तुम भी गोप ही हो) और हम तुम्हारी छायाके नीचे (तुम्हारे अधिकार एवं संरक्षणमें) बसते भी नहीं हैं। तुम अत्यन्त अधिकार इसीलिये तो दिखलाते हो कि तुम्हारे घर (हम सबसे) अधिक गाएँ हैं ! जो रूठने-रुठानेका काम करे, उसके साथ कौन खेले।' (यह कहकर) सब साथी जहाँ-तहाँ (खेल छोड़कर) बैठ गये। सूरदासजी कहते हैं कि

मेरे स्वामी तो खेलना ही चाहते थे, इसलिये नन्दबाबाकी शपथ खाकर (कि बाबाकी शपथ मैं फिर ऐसा झगड़ा नहीं करूँगा) दाव दे दिया।

राग कान्हरौ

[१६३]

आवहु, कान्ह, साँझ की बेरिया।
गाइनि माँझ भए हौ ठाढ़े, कहति जननि, यह बड़ी कुबेरिया॥
लरिकाई कहुँ नैकु न छाँड़त, सोइ रहौ सुथरी सेजरिया।
आए हरि यह बात सुनतहीं, धाइ लए जसुमति महतरिया॥
लै पौढ़ी आँगनहीं सुत कौं, छिटकि रही आछी उजियरिया।
सूर स्याम कछु कहत-कहत ही बस करि लीन्हे आइ निंदरिया॥

माता कहती हैं—'कन्हाई ! सायंकाल हो गया, अब आ जाओ। यह बहुत कुसमयमें तुम गायोंके बीचमें खड़े हो। (इस समय गायें बछड़ोंको पिलानेके लिये उछल-कूद करती हैं, कहीं चोट न लग जाय।) तुम तनिक भी लड़कपन नहीं छोड़ते, अब तो स्वच्छ पलंगपर सो रहो।' यह बात सुनते ही श्यामसुन्दर आ गये। माता यशोदाजीने दौड़कर उन्हें गोदमें उठा लिया। अच्छी चाँदनी फैल रही थी, अपने पुत्रको लेकर (माता) आँगनमें ही (पलंगपर) लेट गयीं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर कुछ बातें करते ही थे कि निद्राने आकर उन्हें वशमें कर लिया। (बातें करते-करते वे सो गये।)

[१६४]

आँगन मैं हरि सोइ गए री।
दोउ जननी मिलि कै हरुएँ करि सेज सहित तब भवन लए री॥
नैकु नहीं घर मैं बैठत हैं, खेलहि के अब रंग रए री।
इहिं बिधि स्याम कबहुँ नहिं सोए बहुत नींद के बसहिं भए री॥
कहति रोहिनी सोवन देहु न, खेलत दौरत हारि गए री।
सूरदास प्रभु कौ मुख निरखत हरखत जिय नित नेह नए री॥

'सखी ! श्याम आँगनमें ही सो गये । दोनों माताओं (श्रीरोहिणीजी और यशोदाजी) ने मिलकर धीरेसे (सम्हालकर) पलंगसहित उठाकर उन्हें घरके भीतर कर लिया ।' (माता कहने लगीं—)'अब मोहन तनिक भी घरमें नहीं बैठते, खेलनेके ही रंगमें रँगे रहते (खेलनेकी ही धुनमें रहते) हैं । श्यामसुन्दर इस प्रकार कभी नहीं सोये । (आज तो) सखी ! निद्राके बहुत अधिक वशमें हो गये (बड़ी गाढ़ी नींदमें सो गये) हैं ।' (यह सुनकर) माता रोहिणी कहने लगीं—'खेलनेमें दौड़ते-दौड़ते थक गये हैं, अब इन्हें सोने दो न ।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीके मुखका दर्शन करनेसे प्राण हर्षित होते हैं और नित्य नवीन अनुराग होता रहता है ।

राग धनाश्री

[१६५]

महराने तैं पाँड़े आयौ ।
ब्रज घर-घर बूझत नँद-राउर पुत्र भयौ, सुनि कै, उठि धायौ ॥
पहुँच्यौ आइ नंद के द्वारैं, जसुमति देखि अनंद बढ़ायौ ।
पाँइ धोइ भीतर बैठारयौ, भोजन कौं निज भवन लिपायौ ॥
जो भावै सो भोजन कीजै, बिप्र मनहिं अति हर्ष बढ़ायौ ।
बड़ी बैस बिधि भयौ दाहिनौ, धनि जसुमति ऐसौ सुत जायौ ॥
धेनु दुहाइ, दूध लै आई, पाँड़े रुचि करि खीर चढ़ायौ ।
घृत, मिष्टान्न, खीर मिश्रित करि, परुसि कृष्न हित ध्यान लगायौ ॥
नैन उघारि बिप्र जौ देखै, खात कन्हैया देखन पायौ ।
देखौ आइ जसोदा ! सुत-कृति, सिद्ध पाक इहिं आइ जुठायौ ॥
महरि बिनय करि दुहु कर जोरे, घृत-मधु-पय फिरि बहुत मँगायौ ।
सूर स्याम कत करत अचगरी, बार-बार बाम्हनहि खिझायौ ॥

श्रीयशोदाजीके मायकेसे एक ब्राह्मण (गोकुल) आये । व्रजके घर-घर वे नन्दरायजीके महलका *पता* पूछ रहे थे और यह सुनकर कि उनके पुत्र

हुआ है वे दौड़े आये थे। (शीघ्र ही,) वे श्रीनन्दजीके द्वारपर आ पहुँचे। उन्हें देखकर माता यशोदाको बड़ा आनन्द हुआ। उनके चरण धोकर घरके भीतर उन्हें बैठाया और उनके भोजनके लिये अपना निजी कमरा लिपवा दिया। फिर बोलीं—'आपकी जो इच्छा हो, वह भोजन बना लें।' यह सुनकर विप्रका मन अत्यन्त हर्षित हुआ। वे बोले—'बहुत अवस्था बीत जानेपर विधाता अनुकूल हुए; यशोदाजी! तुम धन्य हो जो ऐसा (सुन्दर) पुत्र तुमने उत्पन्न किया।' (यशोदाजी) गाय दुहवाकर दूध ले आयीं, ब्राह्मणने बड़ी प्रसन्नतासे खीर बनायी। घी, मिश्री मिलाकर खीर परोसकर भगवान् कृष्णको भोग लगानेके लिये ध्यान करने लगे। फिर जब नेत्र खोलकर ब्राह्मण देवताने देखा तो कन्हाई भोजन करते दिखलायी पड़े। (वे बोले—) 'यशोदाजी! आकर अपने पुत्रकी करतूत (तो) देखो, इसने बना-बनाया भोजन आकर जूठा कर दिया।' व्रजरानीने दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना की (कि बालकको क्षमा करें और दुबारा भोजन बना लें)। फिर बहुत-सा घी, मिश्री, दूध मँगा दिया। सूरदासजी (के शब्दोंमें यशोदाजी कृष्णसे)कहते हैं—श्यामसुन्दर! यह लड़कपन क्यों करते हो? बार-बार तुमने ब्राह्मणको खिझाया (तंग किया) है।

राग रामकली

[१६६]

पाँड़े नहिं भोग लगावन पावै।
करि-करि पाक जबै अर्पत है, तबहीं-तब छ्वै आवै॥
इच्छा करि मैं बाम्हन न्यौत्यौ, ताकौं स्याम खिझावै।
वह अपने ठाकुरहि जिंवावै, तू ऐसैं उठि धावै॥
जननी! दोष देति कत मोकौं, बहु बिधान करि ध्यावै।
नैन मूँदि, कर जोरि, नाम लै बारहिं बार बुलावै॥
कहि, अंतर क्यौं होइ भक्त सौं, जो मेरैं मन भावै?
सूरदास बलि-बलि बिलास पर, जन्म-जन्म जस गावै॥

पाँड़ेजी भोग नहीं लगा पाते। जब-जब वे खीर बनाकर (अपने आराध्यको) अर्पित करते हैं, तभी-तभी मोहन उसे छू आता है। (इससे

माता डाँटने लगीं–) 'मैंने तो बड़ी उमंगसे ब्राह्मणको निमन्त्रण दिया और श्याम ! तू उन्हें चिढ़ाता है ? वे अपने ठाकुरजीको भोग लगाते हैं, तब तू यों ही उठकर दौड़ पड़ता है।' (यह सुनकर मोहन बोले–) 'मैया! तू मुझे क्यों दोष दे रही है, वह ब्राह्मण (स्वयं) बड़े विधि-विधानसे मेरा ध्यान करता है। नेत्र बंद करके, हाथ जोड़कर बार-बार नाम लेकर मुझे बुलाता है। भला, बता–जो भक्त मेरे मनको भा जाता है, उससे मुझमें अन्तर कैसे रहे ? (मैं उससे दूर कैसे रह सकता हूँ ?)' सूरदास तो इस लीलापर बार-बार न्यौछावर है (प्रभो ! मुझे तो यही वरदान दो कि) जन्म-जन्ममें तुम्हारे ही यशका गान करूँ।

राग बिलावल

[१६७]

सफल जन्म, प्रभु आजु भयौ।
धनि गोकुल, धनि नंद-जसोदा, जाकैं हरि अवतार लयौ॥
प्रगट भयौ अब पुन्य-सुकृत-फल, दीन-बंधु मोहि दरस दयौ।
बारंबार नंद कैं आँगन, लोटत द्विज आनंदमयौ॥
मैं अपराध कियौ बिनु जानैं, कौ जानै किहिं भेष जयौ।
सूरदास-प्रभु भक्त-हेत बस जसुमति-गृह आनंद लयौ॥

(ब्राह्मणकी समझमें बात आ गयी। वह बोला–)'प्रभो ! मेरा जीवन आज सफल हो गया। यह गोकुल धन्य है, श्रीनन्दजी और यशोदाजी धन्य हैं, जिनके यहाँ साक्षात् श्रीहरिने अवतार लिया। मेरे समस्त पुण्यों एवं उत्तम कर्मोंका फल आज प्रकट हुआ जो दीनबन्धु प्रभुने मुझे दर्शन दिया।' (इस प्रकार कहता) ब्राह्मण आनन्दमग्न होकर बार-बार श्रीनन्दजीके आँगनमें लोट रहा है। (वह श्यामसुन्दरसे प्रार्थना करता है)'प्रभो ! बिना जाने (अज्ञानवश) मैंने अपराध किया (आपका अपमान किया, मुझे क्षमा करें)। पता नहीं किस वेशसे (मेरे किस साधनसे) आप जीते गये (मुझपर प्रसन्न हुए)।

सूरदासजी कहते हैं कि मेरे प्रभुने भक्तके प्रेमवश श्रीयशोदाजीके घरमें यह आनन्द-क्रीड़ा की है।

राग धनाश्री

[१६८]

अहो नाथ ! जेइ-जेइ सरन आए तेइ-तेइ भए पावन।
महापतित-कुल-तारन, एक नाम अघ जारन, दारुन दुख बिसरावन॥
मोतैं को हो अनाथ, दरसन तैं भयौ सनाथ, देखत नैन जुड़ावन।
भक्त हेत देह धरन, पुहुमी कौ भार हरन, जनम-जनम मुक्तावन॥
दीनबंधु, असरन के सरन, सुखनि जसुमति के कारन देह धरावन।
हित कै चित की मानत सब के जिय की जानत सूरदास-मन-भावन॥

(ब्राह्मण कहता है—) 'हे स्वामी ! जो-जो आपकी शरण आये, वे सब परम पवित्र हो गये। आपका एक ही नाम (आपके नामका एक बार उच्चारण) ही महान् पतितोंके भी कुलका उद्धार करनेवाला, पापोंको भस्म करनेवाला तथा कठिन-से-कठिन दुःखको विस्मृत करा देनेवाला है। मेरे समान अनाथ कौन था; किंतु आपके दर्शनसे मैं सनाथ हो गया, आपका दर्शन ही नेत्रोंको शीतल करनेवाला है। आप भक्तोंका मङ्गल करने, पृथ्वीका भार दूर करने एवं (अपने भक्तोंको) जन्मजन्मान्तरसे छुड़ा देनेके लिये अवतार धारण करते हैं। दीनबन्धु, आप अशरणको त्राण देनेवाले हैं, सुखमयी यशोदाजीके लिये आपने यह अवतार धारण किया है। आप सबके चित्तके प्रेम-भावका आदर करते हैं, सबके मनकी बात जानते हैं।' सूरदासजी कहते हैं—मेरे मनभावन आप ही हैं।

राग बिलावल

[१६९]

मया करिऐ कृपाल, प्रतिपाल संसार उदधि जंजाल तैं परौं पार।
काहू के ब्रह्मा, काहू के महेस, प्रभु ! मेरे तौ तुमही अधार॥

दीन के दयाल हरि, कृपा मोकौं करि, यह कहि-कहि लोटत बार-बार।
सूर स्याम अंतरजामी स्वामी जगत के कहा कहौं करौ निरवार ॥

(ब्राह्मण कहता है–) 'हे कृपालु ! मुझपर कृपा कीजिये और मेरा पालन कीजिये, जिससे इस संसार-सागररूपी जंजालमें पड़ा मैं इसके पार हो जाऊँ। किसीके आधार ब्रह्माजी हैं और किसीके शंकरजी; किंतु प्रभो ! मेरे आधार तो (एक) आप ही हैं। हे दीनोंपर दया करनेवाले श्रीहरि ! मुझपर कृपा कीजिये। श्यामसुन्दर ! आप अन्तर्यामी हैं, जगत्के स्वामी हैं, आपसे और स्पष्ट करके क्या कहूँ।' सूरदासजी कहते हैं कि यह कहता हुआ वह (ब्राह्मण आँगनमें) बार-बार लोट रहा है।

[१७०]

खेलत स्याम पौरि कैं बाहर ब्रज-लरिका सँग जोरी।
तैसेइ आपु तैसेई लरिका, अज्ञ सबनि मति थोरी ॥
गावत, हाँक देत, किलकारत, दुरि देखति नँदरानी।
अति पुलकित गदगद मुख बानी, मन-मन महरि सिहानी ॥
माटी लै मुख मेलि दई हरि, तबहिं जसोदा जानी।
साँटी लिए दौरि भुज पकर्‌यौ, स्याम लँगरई ठानी ॥
लरिकनि कौं तुम सब दिन झुठवत, मोसौं कहा कहौगे।
मैया ! मैं माटी नहिं खाई, मुख देखैं निबहौगे ॥
बदन उघारि दिखायौ त्रिभुवन, बन घन नदी-सुमेर।
नभ-ससि-रबि मुख भीतरहीं सब सागर-धरनी-फेर ॥
यह देखत जननी मन ब्याकुल, बालक-मुख कहा आहि।
नैन उघारि, बदन हरि मूँद्यौ, माता-मन अवगाहि ॥
झूठैं लोग लगावत मोकौं, माटी मोहि न सुहावै।
सूरदास तब कहति जसोदा, ब्रज-लोगनि यह भावै ॥

द्वारके बाहर व्रजके बालकोंको एकत्र करके श्यामसुन्दर खेल रहे हैं। वैसे ही आप हैं, वैसे ही सब बालक हैं, सब अनजान हैं, सबमें थोड़ी ही समझ है। कभी गाते हैं, कभी किसीको पुकारते हैं, कभी किलकारी मारते हैं, यह सब क्रीड़ा श्रीनन्दरानी छिपकर देख रही हैं। उनका शरीर अत्यन्त पुलकित हो रहा है। कण्ठस्वर गद्गद हो गया है, व्रजरानी मन-ही-मन मुग्ध हो रही हैं। इतनेमें ही श्यामने मिट्टी लेकर मुखमें डाल ली तभी यशोदाजीने इसे जान (देख) लिया। वे छड़ी लेकर दौड़ पड़ीं और उन्होंने (श्यामकी) भुजा पकड़ ली इससे श्यामसुन्दर मचलने लगे। (माताने कहा—) 'प्रत्येक दिन तुम बालकोंको झूठा सिद्ध कर देते हो, पर अब मुझसे क्या कहोगे ? (कौन-सा बहाना बनाओगे ?), (श्यामसुन्दर बोले–) 'मैया ! मैंने मिट्टी नहीं खायी।' (माता बोलीं–) मेरे 'मुख देख लेनेपर (ही) छुटकारा पाओगे।' श्यामने मुख खोलकर उसमें तीनों लोक दिखला दिये—घने वन, नदियाँ, सुमेरु आदि पर्वत, आकाश, चन्द्रमा, सूर्य, समुद्र तथा पृथ्वी आदि समस्त सृष्टिचक्र मुखके भीतर ही दिखा दिया। यह देखकर माता मनमें अत्यन्त व्याकुल हो गयीं—'मेरे बालकके मुखमें यह सब क्या है ?' माताके मनकी बात समझकर श्यामसुन्दरने मुख बंद कर लिया और बोले–'मैया ! तू नेत्र तो खोल (आँखें क्यों मूँदे हैं)। लोग मुझे झूठमूठ दोष देते हैं, मिट्टी तो मुझे अच्छी ही नहीं लगती।' सूरदासजी कहते हैं, तब माता यशोदाने कहा—'व्रजके लोगोंको यह (दूसरेकी झूठी चुगली करना) अच्छा लगता है।' (मेरे लालको सब झूठा दोष लगाते हैं।)

राग धनाश्री

[१७१]

मोहन काहैं न उगिलौ माटी।
बार-बार अनरुचि उपजावति, महरि हाथ लिये साँटी॥
महतारी सौं मानत नाहीं कपट-चतुरई ठाटी।
बदन उघारि दिखायौ अपनौ, नाटक की परिपाटी॥

बड़ी बार भइ, लोचन उघरे, भरम-जवनिका फाटी।
सूर निरखि नँदरानि भ्रमित भइ, कहति न मीठी-खाटी॥

श्रीव्रजरानी हाथमें छड़ी लिये कहती हैं—'मोहन ! मिट्टी उगल क्यों नहीं देते ?' वे बार-बार (इस कार्यसे) अपने लालके मनमें घृणा उत्पन्न करना चाहती हैं। (किंतु) श्रीकृष्ण (अपनी) माताकी बात नहीं मान रहे हैं, उन्होंने कपटभरी चतुराई ठान ली है।' सूरदासजी कहते हैं कि तब श्यामने मुख खोलकर नाटकके समान (सम्पूर्ण विश्व) दिखला दिया, इससे श्रीनन्दरानी बड़ी देरतक खुले नेत्रोंसे (अपलक) देखती रह गयीं; मैं माता हूँ और ये मेरे पुत्र हैं--उनके इस भ्रमका पर्दा फट गया। (इस अद्भुत दृश्यको) देखकर वे इतनी चकरा गयीं कि भला-बुरा कुछ भी नहीं कह पातीं।

राग रामकली

[१७२]

मो देखत जसुमति तेरैं ढोटा, अबहीं माटी खाई।
यह सुनि कै रिस करि उठि धाई, बाहँ पकरि लै आई॥
इक कर सौं भुज गहि गाढ़ैं करि, इक कर लीन्ही साँटी।
मारति हौं तोहि अबहिं कन्हैया, बेगि न उगिलै माटी॥
ब्रज-लरिका सब तेरे आगैं, झूठी कहत बनाइ।
मेरे कहैं नहीं तू मानति, दिखरावौं मुख बाइ॥
अखिल ब्रह्मंड-खंड की महिमा, दिखराई मुख माँहि।
सिंधु-सुमेर-नदी-बन-पर्वत चकित भई मन चाहि॥
कर तैं साँटि गिरत नहिं जानी, भुजा छाँड़ि अकुलानी।
सूर कहै जसुमति मुख मूँदौ, बलि गई सारँगपानी॥

(किसी सखाने कहा—)'यशोदाजी ! तुम्हारे पुत्रने मेरे देखते-देखते अभी मिट्टी खायी है।' यह सुनते ही माता क्रोध करके दौड़ पड़ीं और बाँह पकड़कर श्यामको (घर) ले आयीं। एक हाथसे कसकर भुजा पकड़कर दूसरे हाथमें छड़ी ले ली (और डाँटकर बोलीं—)'कन्हैया ! मैं अभी तुझे

मारती हूँ, झटपट तू मिट्टी उगलता है या नहीं !' (श्यामसुन्दर बोले—) 'मैया ! व्रजके ये सभी बालक तेरे सम्मुख झूठी बात बनाकर कहते हैं। यदि तू मेरे कहनेसे नहीं मानती तो मुख खोलकर दिखला देता हूँ ।' (यों कहकर) श्यामने मुखके भीतर ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्डका विस्तार दिखला दिया। समुद्र, सुमेरु आदि पर्वत, नदियाँ तथा वन (मुखमें देखकर) माता अत्यधिक आश्चर्यमें पड़ गयी। हाथसे छड़ी कब गिर गयी, इसका उसे पता ही न लगा। श्यामका हाथ छोड़कर व्याकुल हो गयी। सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजीने कहा—'मेरे शार्ङ्गपाणि ! अपना मुख बंद कर लो, मैं तुमपर बलिहारी जाती हूँ।'

राग सारंग

[१७३]

नंदहि कहति जसोदा रानी ।
माटी कैं मिस मुख दिखरायौ, तिहूँ लोक रजधानी ॥
स्वर्ग, पताल, धरनि, बन, पर्बत, बदन माँझ रहे आनी ।
नदी-सुमेर देखि चक्रित भई, याकी अकथ कहानी ॥
चितै रहे तब नंद जुवति-मुख मन-मन करत बिनानी ।
सूरदास तब कहति जसोदा गर्ग कही यह बानी ॥

श्रीयशोदा रानी नन्दजीसे कहती हैं—'मिट्टीके बहाने कन्हाईने अपना मुख खोलकर दिखलाया; पर उसमें तो तीनों लोकोंकी राजधानियाँ ही नहीं, अपितु स्वर्ग, पाताल, पृथ्वी, वन, पर्वत—सभी आकर बस गये हैं। मैं तो नदियाँ और सुमेरु पर्वत (मुखमें) देखकर आश्चर्यमें पड़ गयी, इस मोहनकी तो कथा ही अवर्णनीय है।' (यह बात सुनकर) श्रीनन्दजी पत्नीके मुखकी ओर देखते रह गये और मन-ही-मन सोचने लगे—'यह नासमझ है।' सूरदासजी कहते हैं कि तब यशोदाजीने कहा—'महर्षि गर्गने भी तो यही बात कही थी (कि कृष्णचन्द्र श्रीनारायणका अंश है)।

राग सोरठ

[१७४]

कहत नंद जसुमति सौं बात ।
कहा जानिऐ, कह तैं देख्यौ, मेरैं कान्ह रिसात ॥
पाँच बरष को मेरौ नन्हैया, अचरज तेरी बात ।
बिनहीं काज साँटि लै धावति, ता पाछैं बिललात ॥
कुसल रहैं बलराम स्याम दोउ, खेलत-खात-अन्हात ।
सूर स्याम कौं कहा लगावति, बालक कोमल-बात ॥

सूरदासजी कहते हैं, श्रीनन्दजी यशोदाजीसे यह बात कह रहे हैं—'क्या जानें मेरे कन्हाईमें तुमने क्या देख लिया जिसके कारण उसपर तुम (इतना) खीझती हो ! मेरा नन्हा लाल तो अभी पाँच ही वर्षका है । तुम्हारी बात तो बड़ी आश्चर्यजनक है । बिना काम तुम उसके पीछे चिल्लाती-पुकारती छड़ी लेकर दौड़ती हो । मेरे बलराम और कन्हाई खेलते, खाते, स्नान करते कुशलपूर्वक रहें (मैं तो यही चाहता हूँ) । श्यामसुन्दर तो अभी बालक है । तोतली कोमल वाणी बोलता है, तुम उसे यह सब पता नहीं क्या दोष लगा रही हो ।'

राग बिलावल

[१७५]

देखौ री ! जसुमति बौरानी ।
घर-घर हाथ दिवावति डोलति, गोद लिए गोपाल बिनानी ॥
जानत नाहिं जगतगुरु माधौ, इहिं आए आपदा नसानी ।
जाकौ नाउँ सक्ति पुनि जाकी, ताकौं देत मंत्र पढ़ि पानी ॥
अखिल ब्रह्मंड उदर गत जाकैं, जाकी जोति जल-थलहिं समानी ।
सूर सकल साँची मोहि लागति, जो कछु कही गर्ग मुख बानी ॥

सूरदासजी कहते हैं—(गोपियाँ कहती हैं—) देखो तो सखी ! यशोदाजी पगली हो गयी हैं । ये अनजान बनी गोपालको गोदमें लिये घर-घर उनके

सिरपर (आशीर्वादका) हाथ रखवाती घूम रही हैं । जानती नहीं कि ये तो साक्षात् जगत्पूज्य लक्ष्मीकान्त हैं। इनके (गोकुलमें) आनेसे ही (हमारी) सब आपत्तियाँ दूर हो गयी हैं । जिसके नाम ही मन्त्र हैं और (उन मन्त्रोंमें) जिसकी शक्ति है, उसीके ऊपर मन्त्र पढ़कर जलके छींटे देती हैं। समस्त ब्रह्माण्ड जिसके उदरमें हैं, जल-स्थलमें सर्वत्र जिसकी ज्योति व्याप्त है, वही ये श्यामसुन्दर हैं । महर्षि गर्गने अपने मुखसे जो कुछ कहा था, वह सब मुझे तो सच्चा लगता है ।

राग धनाश्री

[१७६]

गोपाल राइ चरननि हौं काटी ।
हम अबला रिस बाँचि न जानी, बहुत लागि गइ साँटी ॥
वारौं कर जु कठिन अति कोमल, नयन जरहु जिनि डाँटी ।
मधु, मेवा, पकवान छाँड़ि कै, काहैं खात हौ माटी ॥
सिगरोइ दूध पियौ मेरे मोहन, बलहि न दैहौं बाँटी ।
सूरदास नँद लेहु दोहनी, दुहहु लाल की नाटी ॥

सूरदासजी कहते हैं—(माता पश्चात्ताप करती कह रही हैं—) 'अपने राजा गोपालके चरणोंमें मैं तो कट गयी (इसके सामने मैं लज्जित हो गयी)। मैं अबला (नासमझ) हूँ। अपने ही क्रोधको रोक न सकी । छड़ीकी चोट लालको बहुत लग गयी । इस परम कोमलपर अपने इन अत्यन्त कठोर हाथोंको न्यौछावर कर दूँ; मेरे ये नेत्र जल जायँ, जिनसे मोहनको मैंने डाँटा । लाल ! तुम मधु, मेवा और पकवान छोड़कर मिट्टी क्यों खाते हो ? मेरे मोहन ! तुम सारा दूध पी लो, बलरामको इसमेंसे भाग पृथक् करके नहीं दूँगी । व्रजराज ! यह दोहनी लो और मेरे लालकी नाटी (छोटी) गैया दुह दो।'

राग गौरी

[१७७]

मैया री, मोहि माखन भावै ।
जो मेवा पकवान कहति तू, मोहि नहीं रुचि आवै ॥

व्रज-जुवती इक पाछैं ठाढ़ी, सुनत स्याम की बात।
मन-मन कहति कबहु अपनैं घर, देखौं माखन खात॥
बैठैं जाइ मथनियाँ कैं ढिग, मैं तब रहौं छपानी।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, ग्वालिनि-मन की जानी॥

(श्यामसुन्दर बोले—) 'मैया ! मुझे तो मक्खन अच्छा लगता है। तू जिन मेवा और पकवानकी बात कहती है, वे तो मुझे रुचिकर नहीं लगते।' (उस समय मोहनके) पीछे खड़ी व्रजकी एक गोपी श्यामकी बातें सुन रही थी। वह मन-ही-मन कहने लगी—'कभी इन्हें अपने घरमें मैं मक्खन खाते देखूँ। ये आकर मटकेके पास बैठ जायँ और मैं उस समय छिपी रहूँ।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी अन्तर्यामी हैं, उन्होंने गोपिकाके मनकी बात जान ली।

[१७८]

गए स्याम तिहि ग्वालिनि कैं घर।
देख्यौ द्वार नहीं कोउ, इत-उत चितै चले तब भीतर॥
हरि आवत गोपी जब जान्यौ, आपुन रही छपाइ।
सूनैं सदन मथनियाँ कैं ढिग, बैठि रहे अरगाइ॥
माखन भरी कमोरी देखत, लै-लै लागे खान।
चितै रहे मनि-खंभ-छाहँ तन, तासौं करत सयान॥
प्रथम आजु मैं चोरी आयौ, भलौ बन्यौ है संग।
आपु खात, प्रतिबिंब खवावत, गिरत कहत, का रंग?
जौ चाहौ सब देउँ कमोरी, अति मीठौ कत डारत।
तुमहि देत मैं अति सुख पायौ, तुम जिय कहा बिचारत?
सुनि-सुनि बात स्याम के मुख की, उमँगि हँसी ब्रजनारी।
सूरदास प्रभु निरखि ग्वालि-मुख तब भजि चले मुरारी॥

श्यामसुन्दर उस गोपिकाके घर गये। (पहुँचते ही) देखा कि द्वार-पर कोई नहीं है, तब इधर-उधर देखकर भीतर चल दिये। जब गोपीने

श्यामको आते देखा तो स्वयं छिप गयी। सूने घरमें मटकेके पास मोहन चुप साधकर बैठ गये। मक्खनसे भरा मटका देखते ही निकाल-निकालकर खाने लगे। पासके मणिमय खंभेमें अपने शरीरका प्रतिबिम्ब देखकर (उसे बालक समझकर) उसके साथ चतुराईसे बातें करने लगे—'मैं आज पहली बार चोरी करने आया हूँ, तुम्हारा-मेरा साथ तो अच्छा हुआ।' स्वयं खाते हैं और प्रतिबिम्बको खिलाते हैं। जब (मक्खन) गिरता है तो कहते हैं—'यह तुम्हारा क्या ढंग है ? यदि चाहो तो तुम्हें पूरा मटका दे दूँ। मक्खन अत्यन्त मीठा है, इसे गिरा क्यों रहे हो ? तुम्हें भाग देनेमें तो मेरे मनमें बड़ा सुख हुआ है। तुम अपने चित्तमें क्या विचार करते हो ?' श्यामसुन्दरके मुखकी ये बातें सुन-सुनकर गोपी जोरसे हँस पड़ी। सूरदासजी कहते हैं कि गोपिकाका मुख देखते ही मेरे स्वामी श्रीमुरारि भाग चले।

[१७९]

फूली फिरति ग्वालि मन मैं री।
पूछति सखी परस्पर बातैं, पायौ पर्‍यौ कछू कहुँ तैं री ?
पुलकित रोम-रोम, गदगद, मुख बानी कहत न आवै।
ऐसौ कहा आहि सो सखि री, हम कौं क्यौं न सुनावै॥
तन न्यारौ, जिय एक हमारौ, हम तुम एकै रूप।
सूरदास कहै ग्वालि सखिनि सौं, देख्यौ रूप अनूप॥

वह गोपी अपने मनमें प्रफुल्लित हुई घूम रही है। सखियाँ उससे आपसमें यह बात पूछती हैं—'तूने क्या कहीं कुछ पड़ा माल पा लिया है ? तेरा रोम-रोम पुलकित है, कण्ठ गद्गद हो रहा है, जिसके कारण मुखसे बोला नहीं जाता ऐसा क्या है (जिससे तू इतनी प्रसन्न है) ? अरी सखी ! वह बात हमको क्यों नहीं सुनाती ? हमारा शरीर अवश्य अलग-अलग है; परंतु प्राण तो एक ही है, हम तुम तो एक ही हैं (फिर हमसे क्यों छिपाती हो) ? सूरदासजी कहते हैं कि तब उस गोपीने सखियोंसे कहा— 'मैंने एक अनुपम रूप देखा है।'

राग गूजरी

[१८०]

आजु सखी मनि-खंभ-निकट हरि, जहँ गोरस कौं गो री ।
निज प्रतिबिंब सिखावत ज्यौं सिसु, प्रगट करै जनि चोरी॥
अरध बिभाग आजु तैं हम-तुम, भली बनी है जोरी।
माखन खाहु कतहिं डारत हौ, छाड़ि देहु मति भोरी॥
बाँट न लेहु, सबै चाहत हौ, यहै बात है थोरी।
मीठौ अधिक, परम रुचि लागै, तौ भरि देउँ कमोरी॥
प्रेम उमँगि धीरज न रह्यौ, तब प्रगट हँसी मुख मोरी।
सूरदास-प्रभु सकुचि निरखि मुख भजे कुंज की खोरी॥

सूरदासजी कहते हैं कि (उस गोपिकाने बताया—) 'सखी! (मेरे घरमें) मणिमय खंभेके पास जहाँ गोरसका ठिकाना है, वहाँ जाकर श्यामसुन्दर बैठे और उस खंभेमें पड़े प्रतिबिम्बको बालककी भाँति (बालक मानकर) सिखलाने लगे—'तू मेरी चोरी प्रकट मत करना। हमारी जोड़ी अच्छी मिली है, आजसे हमारा-तुम्हारा आधे-आधेका भाग रहा। मक्खन खाओ! इसे गिराते क्यों हो ? यह भोली बुद्धि छोड़ दो। तुम बँटवारा करके नहीं लेना चाहते, सब-का-सब चाहते हो ? यही बात तो अच्छी नहीं। यह अत्यन्त मीठा है; (पहले खाकर देखो) यदि तुमको अत्यन्त रुचिकर लगे तो भरा हुआ मटका तुम्हींको दे दूँगा।' (यह सुनकर) मेरा प्रेम उल्लसित हो उठा, धैर्य नहीं रहा; तब मैं मुख घुमाकर प्रत्यक्ष (जोरसे) हँस पड़ी। इससे श्याम संकुचित हो गये, मेरा मुख देखते ही वे कुंज-गलीमें भाग गये।'

राग बिलावल

[१८१]

प्रथम करी हरि माखन-चोरी।
ग्वालिनि मन इच्छा करि पूरन, आपु भजे ब्रज-खोरी॥

मन मैं यहै बिचार करत हरि, ब्रज घर-घर सब जाउँ।
गोकुल जनम लियौ सुख कारन, सब कैं माखन खाउँ॥
बालरूप जसुमति मोहि जानै, गोपिनि मिलि सुख-भोग।
सूरदास प्रभु कहत प्रेम सौं, ये मेरे ब्रज-लोग॥

श्यामसुन्दरने पहली बार मक्खनकी चोरी की और इस प्रकार गोपिकाके मनकी इच्छा पूरी करके स्वयं व्रजकी गलियोंमें भाग गये। अब श्याम मनमें यही विचार करने लगे कि 'मैंने तो व्रजवासियोंको आनन्द देनेके लिये ही गोकुलमें जन्म लिया है; अतः (सबको आनन्द देनेके लिये) व्रजके प्रत्येक घरमें जाऊँगा और सबके यहाँ मक्खन खाऊँगा। मैया यशोदा तो मुझे (निरा) बालक समझती हैं, गोपियोंसे मिलकर उनके प्रेम-रसका उपभोग करूँगा।' सूरदासजी कहते हैं—मेरे स्वामी प्रेमपूर्वक कह रहे हैं कि 'ये व्रजके लोग तो मेरे निज जन हैं।'

राग गौरी

[१८२]

सखा सहित गए माखन-चोरी।
देख्यौ स्याम गवाच्छ-पंथ ह्वै, मथति एक दधि भोरी॥
हेरि मथानी धरी माट तैं, माखन हो उतरात।
आपुन गई कमोरी माँगन, हरि पाई ह्याँ घात॥
पैठे सखनि सहित घर सूनैं, दधि-माखन सब खाए।
छूछी छाँड़ि मटुकिया दधि की, हँसि सब बाहिर आए॥
आइ गई कर लिए कमोरी, घर तैं निकसे ग्वाल।
माखन कर, दधि मुख लपटानौ, देखि रही नँदलाल॥
कहँ आए ब्रज-बालक सँग लै, माखन मुख लपटान्यौ।
खेलत तैं उठि भज्यौ सखा यह, इहिं घर आइ छपान्यौ॥
भुज गहि लियौ कान्ह एक बालक, निकसे ब्रज की खोरि।
सूरदास ठगि रही ग्वालिनी, मन हरि लियौ अँजोरि॥

(दूसरे दिन) सखाओंके साथ श्यामसुन्दर मक्खन-चोरी करने गये। वहाँ उन्होंने खिड़कीकी राहसे (झाँककर) देखा कि एक भोली गोपी दही मथ रही है। उसने यह देखकर कि मक्खन ऊपर तैरने लगा है, मथानीको मटकेसे निकालकर रख दिया और स्वयं (मक्खन रखनेकी) मटकी माँगकर लेने गयी, श्यामसुन्दरको यहीं अवसर मिल गया। वे सखाओंके साथ सुनसान घरमें घुस गये और सारा दही तथा मक्खन (सबने मिलकर) खा लिया, और दहीका मटका खाली छोड़कर हँसते हुए सब घरसे बाहर निकल आये। इतनेमें वह (गोपी) हाथमें मटकी लिये आ गयी, (उसने देखा कि) सब गोप-बालक उसके घरसे निकल रहे हैं। हाथमें मक्खन लिये, मुखमें दही लिपटाये श्रीनन्द-नन्दनकी छटा तो वह देखती ही रह गयी। (उसने पूछा—) 'व्रजके बालकों-को साथ लेकर (यहाँ) कहाँ आये हो? मुखमें मक्खन (कैसे) लिपटा रखा है?' (श्याम बोले—) 'मेरा यह सखा खेलमेंसे उठकर भाग आया और यहाँ इस घरमें आकर छिप गया था।' (यह कहकर) कन्हाईने (पासके) एक बालकका हाथ पकड़ लिया और व्रजकी गलियोंमें चले गये। सूरदासजी कहते हैं कि वह गोपी तो ठगी-सी (मुग्ध) रह गयी, श्यामसुन्दरने प्रकाशमें (सबके सामने, दिन-दहाड़े) उसके मनको हर लिया।

[१८३]

चकित भई ग्वालिनि तन हेरौ।
माखन छाँड़ि गई मथि वैसैहिं, तब तैं कियौ अबेरौ॥
देखै जाइ मटुकिया रीती, मैं राख्यौ कहुँ हेरि।
चकित भई ग्वालिनि मन अपनैं, ढूँढ़ति घर फिरि-फेरि॥
देखति पुनि-पुनि घर के बासन, मन हरि लियौ गोपाल।
सूरदास रस-भरी ग्वालिनी, जानै हरि कौ ख्याल॥

इस आश्चर्यमें पड़ी गोपीका मुख तो देखो। (यह सोच रही है—) 'मैं तो दही मथकर मक्खन वैसे ही छोड़ गयी थी, उस समयसे लौटनेमें कुछ देर अवश्य मैंने कर दी।' अपने मटकेके पास जाकर उसे खाली देखकर

(सोचती है—) 'मैंने कहीं अन्यत्र तो (माखन) नहीं रख दिया ?' यह गोपी अपने मनमें चकित हो रही है, बार-बार घरमें ढूँढ़ती है। इसके मनको तो गोपालने हर लिया है (इसलिये ठीक सोच पाती नहीं)। घरके बर्तनोंको बार-बार देखती है। सूरदासजी कहते हैं— यह समझते ही कि यह मेरे श्यामका (मधुर) खेल है; गोपी प्रेममें मग्न हो गयी।

राग बिलावल

[१८४]

ब्रज घर-घर प्रगटी यह बात।
दधि-माखन चोरी करि लै हरि, ग्वाल-सखा सँग खात ॥
ब्रज-बनिता यह सुनि मन हरषित, सदन हमारैं आवैं।
माखन खात अचानक पावैं, भुज हरि उरहिं छुवावैं ॥
मनहीं-मन अभिलाष करति सब, हृदय धरति यह ध्यान।
सूरदास प्रभु कौं घर तैं लै, दैहौं माखन खान ॥

(शीघ्र ही) व्रजके प्रत्येक घरमें यह बात प्रकट हो गयी कि श्याम दही और मक्खन चोरी करके ले लेते हैं और गोपसखाओंके साथ खाते हैं। व्रजकी गोपियाँ यह सुनकर हर्षित हो रही हैं। (वे सोचती हैं-) 'मोहन हमारे घर भी आयें, उन्हें मक्खन खाते मैं अचानक पा जाऊँ और दोनों भुजाओंका हृदयसे स्पर्श करा लूँ।' सब मन-ही-मन यही अभिलाषा करती हैं, हृदयमें उन्हींका ध्यान करती रहती हैं। सूरदासजी कहते हैं—(मेरे स्वामीके विषयमें वे सोचती हैं कि-) 'घरसे लेकर हम मोहनको खानेके लिये मक्खन देंगी।'

राग कान्हरौ

[१८५]

चली ब्रज घर-घरनि यह बात।
नंद-सुत, सँग सखा लीन्हे, चोरि माखन खात ॥

कोउ कहति, मेरे भवन भीतर अबहिं पैठे धाइ।
कोउ कहति, मोहि देखि द्वारैं, उतहिं गए पराइ॥
कोउ कहति, किहिं भाँति हरि कौं, देखौं अपने धाम।
हेरि माखन देउँ आछौ, खाइ जितनौ स्याम॥
कोउ कहति, मैं देखि पाऊँ, भरि धरौं अँकवारि।
कोउ कहति, मैं बाँधि राखौं, को सकै निरवारि!
सूर प्रभु के मिलन कारन, करति बुद्धि बिचार।
जोरि कर बिधि कौं मनावति, पुरुष नंद-कुमार॥

व्रजके घर-घरमें यह चर्चा चलने लगी कि नन्दनन्दन साथमें सखाओंको लेकर चोरीसे मक्खन खाते हैं। कोई गोपी कहती है—'मेरे घरमें अभी दौड़कर घुस गये थे।' कोई कहती है—'मुझे द्वारपर देखकर (जिधरसे आये थे) उधर ही भाग गये।' कोई कहती है— 'मैं कैसे अपने घरमें उन्हें देखूँ? और श्यामसुन्दर जितना खायँ, भली प्रकार देखकर उतना ही अच्छा मक्खन उन्हें दूँ?' कोई कहती है—'यदि मैं देख पाऊँ तो दोनों भुजाओंमें भरकर पकड़ लूँ।' कोई कहती है—'मैं बाँधकर रख लूँ, फिर उन्हें कौन छुड़ा सकता है।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीसे मिलनेके लिये सब अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार विचार करती हैं और दोनों हाथ जोड़कर विधातासे मनाती हैं—'हमें नन्दनन्दन ही पतिरूपमें मिलें।'

राग सारंग

[१८६]

गोपालहि माखन खान दै।
सुनि री सखी, मौन ह्वै रहिऐ, बदन दही लपटान दै॥
गहि बहियाँ हौं लैकै जैहौं, नैननि तपति बुझान दै।
याकौ जाइ चौगुनौ लैहौं, मोहि जसुमति लौं जान दै॥
तू जानति हरि कछू न जानत, सुनत मनोहर कान दै।
सूर स्याम ग्वालिनि बस कीन्हौ राखति तन-मन-प्रान दै॥

(एक गोपी कहती है–) 'गोपालको मक्खन खाने दो ! सखियो! सुनो, सब चुप हो रहो; इन्हें मुखमें दही लिपटाने दो (जिससे प्रमाणित हो जाय कि इन्होंने चोरी की है)। तनिक नेत्रोंकी जलन (इन्हें देखकर) शान्त कर लेने दो, फिर इनका हाथ पकड़कर मैं इन्हें ले जाऊँगी। मुझे यशोदाजीतक जाने तो दो, इसका चौगुना (मक्खन) जाकर लूँगी।' (सखियाँ कहती हैं–) 'तू समझती है कि मोहन कुछ जानता ही नहीं, वह सुन्दर तो कान लगाकर सुन रहा है।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरने गोपीको वशमें कर लिया है। (मक्खन तो दूर) वह तो तन, मन और प्राण देकर भी उन्हें (अपने यहाँ) रख रही (रखना चाहती)है।

[१८७]

जसुदा कहँ लौं कीजै कानि।
दिन-प्रति कैसैं सही परति है, दूध-दही की हानि॥
अपने या बालक की करनी, जौ तुम देखौ आनि।
गोरस खाइ, खवावै लरिकनि, भाजत भाजन भानि॥
मैं अपने मंदिर के कोनैं, राख्यौ माखन छानि।
सोई जाइ तिहारैं ढोटा, लीन्हौ है पहिचानि॥
बूझि ग्वालि निज गृह मैं आयौ, नैकु न संका मानि।
सूर स्याम यह उतर बनायौ, चींटी काढ़त पानि॥

(गोपी कहती है–) 'यशोदाजी ! कहाँतक संकोच किया जाय। प्रतिदिन दूध और दहीकी हानि कैसे सही जा सकती है। तुम यदि आकर अपने इस बालकका करतब देखो—यह स्वयं गोरस (दही-मक्खन) खाता है, लड़कोंको खिलाता है और बर्तनोंको फोड़कर भाग जाता है। मैंने अपने भवनके एक कोनेमें (ताजा) मक्खन (मठेमेंसे) छानकर (छिपाकर) रखा था, तुम्हारे इस पुत्रने पहचानकर (कि यह ताजा मक्खन है) उसीको ले लिया।' सूरदासजी कहते हैं—जब गोपीने पूछा तो श्यामसुन्दरने यह उत्तर गढ़कर दे दिया था कि मैं तो इसे अपना घर समझकर तनिक भी

शङ्का न करके भीतर चला आया और अपने हाथसे (दहीमें पड़ी) चींटियाँ निकाल रहा था ।'

[१८८]

माई ! हौं तकि लागि रही ।
जब घर तैं माखन लै निकस्यौ, तब मैं बाहँ गही ॥
तब हँसि कै मेरौ मुख चितयौ, मीठी बात कही ।
रही ठगी, चेटक-सौ लाग्यौ, परि गइ प्रीति सही ॥
बैठौ कान्ह, जाउँ बलिहारी, ल्याऊँ और दही ।
सूर स्याम पै ग्वालि सयानी सरबस दै निबही ॥

(गोपी कहती है—) 'सखी ! मैं ताकमें लगी थी । ज्यों ही घरमेंसे मक्खन लेकर मोहन निकला, त्यों ही मैंने हाथ पकड़ लिया । तब उसने हँसकर मेरे मुखकी ओर देखकर मधुरवाणीसे कुछ कह दिया । इससे मैं ठगी रह गयी, जैसे जादू हो गया हो ऐसी दशा हो गयी, उससे मेरा सच्चा प्रेम हो गया । (मैंने कहा—) 'कन्हाई, बैठो ! मैं तुमपर बलिहारी जाती हूँ, और भी दही ले आती हूँ (भली प्रकार खा लो) । सूरदासजी कहते हैं कि इस चतुर गोपीने श्यामसुन्दरपर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया और (सहज ही संसार-सागरसे) तर गयी ।

राग गौरी

[१८९]

आपु गए हरुएँ सूनैं घर ।
सखा सबै बाहिर ही छाँड़े, देख्यौ दधि-माखन हरि भीतर ॥
तुरत मथ्यौ दधि-माखन पायौ, लै-लै खात, धरत अधरनि पर ।
सैन देइ सब सखा बुलाए, तिनहिं देत भरि-भरि अपनैं कर ॥
छिटकि रही दधि-बूँद हृदय पर, इत-उत चितवत करि मन मैं डर ।
उठत ओट लै लखत सबनि कौं, पुनि लै खात लेत ग्वालनि बर ॥

अंतर भई ग्वालि यह देखति मगन भई, अति उर आनँद भरि।
सूर स्याम-मुख निरखि थकित भइ, कहत न बनै, रही मन दै हरि॥

श्यामसुन्दर स्वयं धीरेसे सूने घरमें घुस गये, सभी सखाओंको बाहर ही छोड़ दिया; वहाँ भीतर उन्होंने दही और मक्खन देखा। तुरंतके मथे हुए दहीसे निकला मक्खन वे पा गये। उसे उठा-उठाकर होठोंपर रखने और आरोगने लगे। (फिर) संकेत करके सब सखाओंको बुला लिया, उन्हें भी अपने हाथोंमें भर-भरकर देने लगे। वक्षःस्थलपर दहीकी बूँदें छिटक रही हैं। मनमें भय करके इधर-उधर देखते भी जाते हैं। सखाओंकी आड़ लेकर उठते हैं और सबको देख लेते हैं (कि कोई कहींसे देखती तो नहीं), फिर मक्खन लेकर खाते हैं, इन श्रेष्ठ (बड़भागी) गोपबालकोंके हाथसे भी लेते हैं। छिपी हुई गोपी यह सब देख रही है। उसके हृदयमें अत्यन्त आनन्द भर रहा है, वह मग्न हो रही है। सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दरके मुखको देखकर वह थकित (निश्चेष्ट) हो रही है, उससे कुछ कहते (बोलते) नहीं बनता, श्यामसुन्दरको उसने अपना मन अर्पित कर दिया है।

राग धनाश्री

[१९०]

गोपाल दुरे हैं माखन खात।
देखि सखी! सोभा जु बनी है स्याम मनोहर गात॥
उठि, अवलोकि ओट ठाढ़े ह्वै, जिहिं बिधि हैं लखि लेत।
चकित नैन चहूँ दिसि चितवत, और सखनि कौं देत॥
सुंदर कर आनन समीप, अति राजत इहिं आकार।
जलरुह मनौ बैर बिधु सौं तजि, मिलत लएँ उपहार॥
गिरि-गिरि परत बदन तैं उर पर हैं दधि-सुत के बिंदु।
मानहुँ सुभग सुधा-कन बरषत प्रियजन आगम इंदु॥
बाल-बिनोद बिलोकि सूर-प्रभु सिथिल भईं ब्रजनारि।
फुरै न बचन बरजिबैं कारन, रहीं बिचारि-बिचारि॥

(एक गोपी कहती है—) 'सखी ! गोपाल छिपे-छिपे मक्खन खा रहे हैं। उनके मनोहर श्यामशरीरकी देख तो कैसी शोभा बनी है ? किस प्रकार वे उठते हैं, आड़में खड़े होकर इधर-उधर ताक लेते हैं। चकित नेत्रोंसे चारों ओर देखते हैं। दूसरे सखाओंको (मक्खन) देते हैं, इससे इनका सुन्दर हाथ सखाओंके मुखके पास इस प्रकार शोभा देता है, मानो कमल चन्द्रमासे अपनी शत्रुता छोड़कर उपहार लिये हुए उससे मिल रहा है। मक्खनके बिन्दु बार-बार मुखसे वक्षःस्थलपर गिर पड़ते हैं, मानो चन्द्रमा अपने प्रियजन (श्रीकृष्णके वक्षःस्थलमें स्थित अपनी बहिन लक्ष्मी) का आगमन समझकर सुहावनी अमृतकी बूँदोंकी वर्षा कर रहा है। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीका बाल-विनोद देखकर व्रजकी सभी नारियाँ (प्रेमवश) शिथिल हो रही हैं, वे सोच-सोचकर रह जाती हैं; किंतु (मोहनको) रोकनेके लिये मुखसे शब्द निकलते ही नहीं।

राग सारंग

[१९१]

ग्वालिनि जौ घर देखै आइ।
माखन खाइ चोराइ स्याम सब, आपुन रहे छपाइ॥
ठाढ़ी भई मथनियाँ कैं ढिग, रीती परी कमोरी।
अबहिं गई, आई इनि पाइनि, लै गयौ को करि चोरी ?
भीतर गई, तहाँ हरि पाए, स्याम रहे गहि पाइ।
सूरदास प्रभु ग्वालिनि आगैं, अपनौ नाम सुनाइ॥

गोपीने जो घरमें आकर देखा तो (घरकी यह दशा थी कि) सब मक्खन चुराकर, खा-पीकर श्यामसुन्दर स्वयं छिप गये थे। वह अपने मटकेके पास खड़ी हुई तो (देखती क्या है कि) मटका खाली पड़ा है। (सोचने लगी—) 'मैं अभी-अभी तो गयी थी और इन्हीं पैरों (बिना कहीं रुके) लौट आयी हूँ, इतनेमें कौन चोरी कर ले गया ?' भवनके भीतर

गयी तो वहाँ कृष्णचन्द्र मिले। सूरदासजी कहते हैं कि ग्वालिनीके आगे अपना नाम बताकर मेरे स्वामी श्यामसुन्दरने उसके पैर पकड़ लिये।

राग गौरी

[१९२]

जौ तुम सुनहु जसोदा गोरी।
नंद-नँदन मेरे मंदिर मैं आजु करन गए चोरी॥
हौं भइ जाइ अचानक ठाढ़ी, कह्यौ भवन मैं को री।
रहे छपाइ, सकुचि, रंचक ह्वै, भई सहज मति भोरी॥
मोहिं भयौ माखन-पछितावौ, रीती देखि कमोरी।
जब गहि बाहँ कुलाहल कीनी, तब गहि चरन निहोरी॥
लागे लैन नैन जल भरि-भरि, तब मैं कानि न तोरी।
सूरदास-प्रभु देत दिनहिं-दिन ऐसियै लरिक-सलोरी॥

(वह गोपी नन्दभवनमें आकर कहती है—) 'सखी यशोदाजी! यदि तुम सुनो तो एक बात बताऊँ। आज मेरे मकानमें चोरी करने नन्दनन्दन गये थे। इतनेमें मैं (बाहरसे लौटकर) वहाँ अचानक जाकर खड़ी हो गयी और पूछा—'घरमें कौन है ?' तब तो इनकी बुद्धि स्वभावतः भोली हो गयी (कोई उपाय इन्हें सूझा नहीं), सिकुड़कर तनिक-से बनकर छिपे रह गये (अपने अङ्ग सिकोड़कर दुबक गये)। अपनी मटकी खाली देखकर मुझे मक्खन जानेका पश्चात्ताप (दुःख) हुआ; (इससे) जब इनकी बाँह पकड़कर मैंने कोलाहल किया, तब मेरे पैर पकड़कर अनुनय-विनय करने लगे। बार-बार नेत्रोंमें आँसू भर लेने लगे (रोने लगे)। तब मैंने संकोच तोड़ा नहीं (चुपचाप चले जाने दिया)। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी दिनों-दिन लड़कपनकी ऐसी ही प्रिय लगनेवाली क्रीड़ाका आनन्द दे रहे हैं।

राग नट

[१९३]

देखी ग्वालि जमुना जात।
आपु ता घर गए पूछत, कौन है, कहि बात॥
जाइ देखे भवन भीतर, ग्वाल-बालक दोइ।
भीर देखत अति डराने, दुहुनि दीन्हौ रोइ॥
ग्वाल के काँधें चढ़े तब, लिए छींके उतारि।
दह्यौ-माखन खात सब मिलि, दूध दीन्हौ डारि॥
बच्छ लै सब छोरि दीन्हे, गए बन समुहाइ।
छिरकि लरिकनि मही सौं भरि, ग्वाल दए चलाइ॥
देखि आवत सखी घर कौं, सखनि कह्यौ जु दौरि।
आनि देखे स्याम घर मैं, भई ठाढ़ी पौरि॥
प्रेम अंतर, रिस भरे मुख, जुवति बूझति बात।
चितै मुख तन-सुधि बिसारी, कियौ उर नख-घात॥
अतिहिं रस-बस भई ग्वालिनि, गेह-देह बिसारि।
सूर-प्रभु-भुज गहे ल्याई, महरि पै अनुसारि॥

(श्यामसुन्दरने) देखा कि गोपी यमुनाजी जा रही है तो स्वयं यह बात पूछते हुए कि 'यहाँ कौन है ?' उसके घरमें चले गये। घरके भीतर जाकर देखा कि वहाँ दो गोपशिशु हैं। (बालकोंकी) भीड़ देखकर वे दोनों शिशु बहुत डर गये और रो पड़े। तब श्यामसुन्दर एक गोपसखाके कंधेपर चढ़ गये और उन्होंने छींके उतार लिये। सब मिलकर दही और मक्खन खाने लगे तथा दूध गिरा दिया। उसके सभी बछड़ोंको खोल दिया, वे सब एकत्र होकर वनमें भाग गये। दोनों शिशुओंको मट्ठा छिड़ककर उससे सराबोर करके गोपसखाओंको आगे बढ़ा दिया। उस सखी (गोपी) को आते देखकर सखाओंने भागते हुए उससे (सारा समाचार) कह दिया। गोपीने आकर

जो अपने घरमें श्यामसुन्दरको देखा तो दरवाजेपर (मार्ग रोककर) खड़ी हो गयी। (उसके) हृदयमें तो प्रेम था; किंतु मुखपर क्रोध लाकर उस गोपीने सारी बात पूछी। किंतु मोहनके मुखको देखकर वह अपने शरीरकी सुधि ही भूल गयी, तभी श्यामसुन्दरने (चिढ़ानेके लिये) उसके वक्षःस्थलपर नखसे आघात किया। (अब तो) गोपी रसके अत्यन्त वश हो गयी, अपने शरीर और (सूने) घरको भी वह भूल गयी। सूरदासजी कहते हैं कि वह मेरे स्वामीका हाथ पकड़कर उन्हें अपने साथ व्रजरानीके पास ले आयी।

राग गौरी

[१९४]

महरि ! तुम मानौ मेरी बात।
ढूँढ़ि-ढाँढ़ि गोरस सब घर कौ, हर्‌यौ तुम्हारैं तात॥
कैसैं कहति लियौ छींके तैं, ग्वाल-कंध दै लात।
घर नहिं पियत दूध धौरी कौ, कैसैं तेरैं खात ?
असंभाव बोलन आई है, ढीठ ग्वालिनी प्रात।
ऐसौ नाहिं अचगरौ मेरौ, कहा बनावति बात॥
का मैं कहौं, कहत सकुचति हौं, कहा दिखाऊँ गात !
हैं गुन बड़े सूर के प्रभु के, ह्याँ लरिका ह्वै जात॥

(उस गोपीने आकर कहा—) 'व्रजरानी ! तुम मेरी बात मानो (उसपर विश्वास करो)। तुम्हारे पुत्रने मेरे घरका सारा गोरस ढूँढ़-ढाँढ़कर चुरा लिया। (यशोदाजीने पूछा—) 'यह बात तुम कैसे कहती हो कि इसने छींकेपरसे गोरस ले लिया ?' (वह बोली—) '(किसी) गोपकुमारके कंधे पर पैर रखकर चढ़ गये थे।' (यशोदाजी बोलीं—) 'यह घरपर तो धौरी (पद्मगन्धा) गायका दूध (भी) नहीं पीता, तुम्हारे यहाँ (का दही-मक्खन) कैसे खा जाता है ? सबेरे-सबेरे यह ढीठ गोपी असम्भव बात कहने आयी है ! तू इतनी बातें क्यों बनाती है ? मेरा लड़का इतना ऊधमी नहीं है।'

सूरदासजी कहते हैं—(गोपीने कहा—) '(अब) मैं क्या कहूँ, कहते हुए संकोच होता है और अपना शरीर कैसे दिखलाऊँ। ये यहाँ तो लड़के बन जाते हैं; किंतु इनके गुण बहुत बड़े हैं (अनोखे ऊधम ये किया करते हैं)।'

[१९५]

साँवरेहि बरजति क्यों जु नहीं।
कहा करौं दिन प्रति की बातैं, नाहिन परतिं सही॥
माखन खात, दूध लै डारत, लेपत देह दही।
ता पाछैं घरहू के लरिकनि, भाजत छिरकि मही॥
जो कछु धरहिं दुराइ, दूरि लै, जानत ताहि तहीं।
सुनहु महरि, तेरे या सुत सौं, हम पचि हारि रहीं॥
चोरी अधिक चतुरई सीखी, जाइ न कथा कही।
ता पर सूर बछुरुवनि ढीलत, बन-बन फिरतिं बही॥

सूरदासजी कहते हैं—(गोपीने यशोदाजीसे कहा—) 'तुम श्यामसुन्दरको मना क्यों नहीं करती? क्या करूँ, इनकी प्रतिदिनकी बातें (नित्य-नित्यका उपद्रव) सही नहीं जातीं। मक्खन खा जाते हैं, दूध लेकर गिरा देते हैं, दही अपने शरीरमें लगा लेते हैं और इसके बाद भी (संतोष नहीं होता तो) घरके बालकोंपर भी मट्ठा छिड़ककर भाग जाते हैं। जो कुछ वस्तुएँ दूर (ऊपर) ले जाकर छिपाकर रखती हूँ, उसको वहाँ भी (पता नहीं कैसे) जान लेते हैं। व्रजरानी! सुनो, तुम्हारे इस पुत्रसे बचनेके उपाय करके हम तो थक गयीं। चोरीसे भी अधिक इन्होंने चतुराई सीख ली है, जिसका वर्णन किया नहीं जा सकता। ऊपरसे बछड़ोंको (और) खोल देते हैं, (उन्हें पकड़ने) हम वन-वन भटकती फिरती हैं।'

राग कान्हरौ

[१९६]

अब ये झूठहु बोलत लोग।
पाँच बरष अरु कछुक दिननि कौ, कब भयौ चोरी जोग॥

इहिं मिस देखन आवतिं ग्वालिनि, मुँह फाटे जु गँवारि।
अनदोषे कौं दोष लगावतिं, दई देइगौ टारि॥
कैसैं करि याकी भुज पहुँची, कौन बेग ह्याँ आयौ?
ऊखल ऊपर आनि पीठ दै, तापर सखा चढ़ायौ॥
जौ न पत्याहु चलौ सँग जसुमति, देखौ नैन निहारि।
सूरदास-प्रभु नैकु न बरज्यौ, मन मैं महरि बिचारि॥

(श्रीयशोदाजी कहती हैं—) 'अब ये लोग झूठ भी बोलने लगे; मेरा बच्चा अभी (कुल) पाँच वर्ष और कुछ दिनोंका (तो) हुआ ही है, वह चोरी करने योग्य कब हो गया? ये मुँहफट गवाँर गोपियाँ इसी बहाने (मेरे मोहनको) देखने आती हैं, और मेरे दोषहीन लालको दोष लगाती हैं, दैव स्वयं इस कलङ्कको मिटा देगा। भला, इस (श्याम) का हाथ वहाँ (छींकेतक) कैसे पहुँच गया (और यदि यह इस गोपीके घर गया था तो गोपीसे पहले) किस बलसे यहाँ आ गया (इतना शीघ्र वहाँसे आना तो सम्भव नहीं है)।' (गोपी बोली–) 'ऊखलके ऊपर इसने लाकर पीढ़ा रखा और उसपर एक सखाको चढ़ाया (और उस सखाके कंधेपर स्वयं चढ़ गया)। यशोदाजी! यदि आप मेरा विश्वास नहीं करतीं तो मेरे साथ चलें, स्वयं अपनी आँखोंसे (मेरे घरकी दशा भली प्रकार) देख लें।' सूरदासजी कहते हैं कि (इतनेपर भी) व्रजरानी अपने मनमें विचार करती रहीं, उन्होंने मेरे स्वामीको तनिक भी डाँटा (रोका) नहीं।

राग देवगंधार

[१९७]

मेरौ गोपाल तनक सौ, कहा करि जानै दधि की चोरी।
हाथ नचावत आवति ग्वारिनि, जीभ करै किन थोरी॥
कब सीकैं चढ़ि माखन खायौ, कब दधि-मटुकी फोरी।
अँगुरी करि कबहूँ नहिं चाखत, घरहीं भरी कमोरी॥

इतनी सुनत घोष की नारी, रहसि चली मुख मोरी।
सूरदास जसुदा कौ नंदन, जो कछु करै सो थोरी ॥

मेरा नन्हा-सा गोपाल दहीकी चोरी करना क्या जाने । अरी ग्वालिन ! तू हाथ नचाती हुई आती है, अपनी जीभको क्रम क्यों नहीं चलाती ? इसने कब तेरे छींकेपर चढ़कर मक्खन खाया और कब दहीका मटका फोड़ा ? घरपर ही कमोरी भरी रहती है कभी यह अँगुली डालकर चखता तक नहीं है । सूरदासजी कहते हैं इतनी फटकार सुनकर व्रजकी ग्वालिन चुपचाप मुँह मोड़कर (निराश होकर) यह कहती हुई चली गयी कि यशोदाका लाड़िला जो कुछ करे, वही थोड़ा है ।

राग सारंग

[१९८]

कहै जनि ग्वारिनि ! झूठी बात ।
कबहूँ नहिं मनमोहन मेरौ, धेनु चरावन जात ॥
बोलत है बतियाँ तुतरौहीं, चलि चरननि न सकात ।
कैसैं करै माखन की चोरी, कत चोरी दधि खात ॥
देहीं लाइ तिलक केसरि कौ, जोबन-मद इतराति ।
सूरज दोष देति गोबिंद कौं, गुरु-लोगनि न लजाति ॥

सूरदासजी कहते हैं—(श्रीयशोदाजी बोलीं–) 'गोपी ! झूठी बात मत कह । मेरा मनमोहन (तो) कभी गायें चराने भी नहीं जाता । अभी तो तोतली वाणी बोलता है और पैरोंसे भली प्रकार चल भी नहीं पाता । यह मक्खनकी चोरी कैसे करेगा ? चोरीसे यह दही क्यों खायगा ? तू अपने शरीरपर केसरका तिलक लगाकर जवानीके मदसे इठला रही है, मेरे गोविन्दको दोष लगाती हुई अपने गुरुजनों (अपनेसे बड़ों अर्थात् मुझसे) भी संकोच नहीं करती ?'

राग नटनारायन

[१९९]

मेरे लाड़िले हो ! तुम जाउ न कहूँ ।
तेरेही काजैं गोपाल, सुनहु लाड़िले लाल,
राखे हैं भाजन भरि सुरस छहूँ ॥
काहे कौं पराऐं जाइ, करत इते उपाइ,
दूध-दही-घृत अरु माखन तहूँ ।
करति कछू न कानि, बकति हैं कटु बानि,
निपट निलज बैन बिलखि सहूँ ॥
व्रज की ढीठी गुवारि, हाट की बेचनहारि,
सकुचैं न देत गारि झगरत हूँ ।
कहाँ लगि सहौं रिस, बकत भई हौं कृस,
इहिं मिस सूर स्याम-बदन चहूँ ॥

(माताने कहा—) 'मेरे लाड़िले तुम कहीं मत जाया करो। दुलारे लाल ! सुनो। मेरे गोपाल ! तुम्हारे लिये ही छहों रसोंसे भरे बर्तन मैंने सजा रखे हैं। दूसरेके घर जाकर तुम इतने उपाय क्यों करते हो ? (अन्ततः) वहाँ भी (तो) दूध, दही, घी और मक्खन ही रहता है (तुम्हारे घर इनकी कमी थोड़े ही है)। ये गोपियाँ तो कुछ भी मर्यादा नहीं रखतीं, कठोर बातें बकती हैं, इनके अत्यन्त निर्लज्जताभरे बोल मैं कष्टसे सहती हूँ। ये व्रजकी गोपियाँ बड़ी ढीठ हैं, ये हैं ही बाजारोंमें (घूम-घूमकर) दही बेचनेवाली। ये गाली देनेमें और झगड़ा करनेमें भी संकोच नहीं करतीं। मैं कहाँतक क्रोधको सहन करूँ, बकते-बकते (तुम्हें समझाते-समझाते) तो मैं दुबली हो गयी (थक गयी)। सूरदासजी कहते हैं—यशोदाजी चाहती हैं कि (यदि श्यामसुन्दर घर-घर भटकना छोड़ दें तो) इसी बहाने लालका श्रीमुख देखती रहूँ ।

राग कान्हरौ

[२००]

इन अँखियनि आगैं तैं मोहन, एकौ पल जनि होहु नियारे।
हौं बलि गई, दरस देखैं बिनु, तलफत हैं नैननि के तारे॥
औरौ सखा बुलाइ आपने, इहिं आँगन खेलौ मेरे बारे।
निरखति रहौं फनिग की मनि ज्यौं, सुंदर बाल-बिनोद तिहारे॥
मधु, मेवा, पकवान, मिठाई, व्यंजन खाटे, मीठे, खारे।
सूर स्याम जोइ-जोइ तुम चाहौ, सोइ-सोइ माँगि लेहु मेरे बारे॥

सूरदासजी कहते हैं—(माता कह रही हैं—) 'मोहन ! मेरी इन आँखोंके सामनेसे एक क्षणके लिये भी अलग (ओझल) मत हुआ करो। मैं तुमपर बलिहारी जाती हूँ, तुम्हारा दर्शन किये बिना मेरे नेत्रोंकी पुतलियाँ तड़पती ही रहती हैं। मेरे लाल ! दूसरे सखाओंको भी बुलाकर अपने इसी आँगनमें खेलो। सर्प जैसे (अपनी) मणिको देखता रहता है, उसी प्रकार मैं तुम्हारी सुन्दर बालक्रीड़ाको देखती रहूँ। मधु, मेवा, पकवान, मिठाई तथा खट्टे, मीठे, चरपरे—जो-जो भी व्यञ्जन श्यामसुन्दर ! तुम्हें चाहिये, मेरे लाल ! वही-वही तुम माँग लिया करो।

राग धनाश्री

[२०१]

चोरी करत कान्ह धरि पाए।
निसि-बासर मोहिं बहुत सतायौ, अब हरि हाथहिं आए॥
माखन-दधि मेरौ सब खायौ, बहुत अचगरी कीन्ही।
अब तौ घात परे हौ लालन, तुम्हैं भलैं मैं चीन्ही॥
दोउ भुज पकरि कह्यौ, कहँ जैहौ, माखन लेउँ मँगाइ।
तेरी सौं मैं नैकु न खायौ, सखा गए सब खाइ॥
मुख तन चितै, बिहँसि हरि दीन्हौ, रिस तब गई बुझाइ।
लियौ स्याम उर लाइ ग्वालिनी, सूरदास बलि जाइ॥

(गोपीने) चोरी करते कन्हाईको पकड़ लिया । (बोली–) श्याम ! रात-दिन तुमने मुझे बहुत तंग किया, अब (मेरी) पकड़में आये हो । मेरा सारा मक्खन और दही तुमने खा लिया, बहुत ऊधम किया; किंतु लाल ! अब तो मेरे चंगुलमें पड़ गये हो, तुम्हें मैं भली प्रकार पहचानती हूँ (कि तुम कैसे चतुर हो) ।' (श्यामके) दोनों हाथ पकड़कर उसने कहा—'बताओ, (अब भागकर) कहाँ जाओगे ? मैं सारा मक्खन (यशोदाजीसे) मँगा लूँगी ।' (तब श्यामसुन्दर बोले—) 'तेरी शपथ ! मैंने थोड़ा भी नहीं खाया, सखा ही सब खा गये ।' उसके मुखकी ओर देखकर मोहन हँस पड़े, इससे उसका सब क्रोध शान्त हो गया । उस गोपीने श्यामसुन्दरको हृदयसे लगा लिया । इस शोभा (तथा चतुरतापर) सूरदास बलिहारी जाता है ।

राग गौरी

[२०२]

कत हो कान्ह ! काहु कैं जात ।
ये सब ढीठ गरब गोरस कैं, मुख सँभारि बोलति नहिं बात ॥
ज़ोइ-जोइ रुचै सोइ तुम मोपै माँगि लेहु किन तात ।
ज्यौं-ज्यौं बचन सुनौं मुख अमृत, त्यौं-त्यौं सुख पावत सब गात॥
कैसी टेव परी इन गोपिनि, उरहन कैं मिस आवति प्रात ।
सूर सु कत हठि दोष लगावति, घरही कौ माखन नहिं खात ॥

सूरदासजी कहते हैं—(माता कह रही हैं—) श्याम ! तुम क्यों किसीके यहाँ जाते हो ? ये सब (गोपियाँ) तो गोरस (अपने दूध-दही) के गर्वमें ढीठ (मतवाली) हो रही हैं, मुख सम्हालकर बात नहीं कहतीं । मेरे लाल ! तुम्हें जो-जो अच्छा लगे, वही-वही तुम मुझसे क्यों नहीं माँग लेते ? मैं तो जैसे-जैसे तुम्हारे मुखकी अमृतमयी वाणी सुनती हूँ, वैसे-वैसे मेरे सारे अङ्ग आनन्दित हो उठते हैं (तुम्हारे बार-बार माँगनेसे मैं खीझ नहीं सकती) । इन सब गोपियोंको कैसी टेव (आदत) पड़ गयी है कि

सबेरे-सबेरे उलाहना देनेके बहाने आ जाती हैं। ये क्यों मेरे लालको हठ करके दोष लगाती हैं, यह तो घरका ही मक्खन नहीं खाता।

[२०३]

घर गोरस जनि जाहु पराए।
दूध भात भोजन घृत अंमृत, अरु आछौ करि दह्यौ जमाए॥
नव लख धेनु खरिक घर तेरैं, तू कत माखन खात पराए।
निलज ग्वालिनी देति उरहनौ, वै झूठैं करि वचन बनाए॥
लघु-दीरघता कछू न जानैं, कहुँ बछरा कहुँ धेनु चराए।
सूरदास प्रभु मोहन नागर, हँसि-हँसि जननी कंठ लगाए॥

(माताने कहा—) 'लाल! (तुम्हारे) घरमें ही (पर्याप्त) गोरस है, दूसरेके घर मत जाया करो। दूध-भात और घीका अमृततुल्य भोजन है तथा भली प्रकार (दूध गाढ़ा करके) दही जमाया है। तुम्हारे ही घरके गोष्ठमें नौ लाख गायें हैं,(फिर) तुम दूसरेके घर जाकर मक्खन क्यों खाते हो?' (श्याम बोले—) 'ये निर्लज्ज गोपियाँ गढ़ी हुई बातें कहकर झूठमूठ उलाहना देती रहती हैं। ये बड़े-छोटेका भाव कुछ जानतीं नहीं, कहीं बछड़े और कहीं गायें चराती घूमती हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी मोहन तो (परम) चतुर हैं, (उनकी बातें सुनकर) माताने बार-बार हँसते हुए उन्हें गले लगा लिया।

राग बिलावल

[२०४]

(कान्ह कौं) ग्वालिनि ! दोष लगावति जोर।
इतनक दधि-माखन कैं कारन कबहिं गयौ तेरी ओर॥
तू तौ धन-जोबन की माती, नित उठि आवति भोर।
लाल कुँअर मेरौ कछू न जानै, तू है तरुनि किसोर॥
कापर नैंन चढ़ाए डोलति, ब्रज मैं तिनुका तोर।
सूरदास जसुदा अनखानी, यह जीवन-धन मोर॥

(माताने कहा—) 'गोपी ! तू क्यों (कन्हैयाको) हठपूर्वक दोष लगा रही है ? इतने थोड़े-से मक्खन और दहीके लिये वह कब तेरी ओर गया ! तू तो अपनी सम्पत्ति और युवावस्थाके कारण मतवाली हो रही है, प्रतिदिन सवेरे ही उठकर चली आती है। मेरा लाल तो बालक है, वह कुछ जानता ही नहीं; इधर तू नवयुवती है (तुझे ही यह सब धूर्तता आती है)। तू तिनका तोड़कर (निर्लज्ज होकर) व्रजमें किसपर आँखें चढ़ाये घूमती है ?' सूरदासजी कहते हैं कि मैया यशोदा रुष्ट होकर बोलीं—'यह तो मेरा जीवनधन है।' (समझी ! अब चुपचाप चली जा)।

राग गौरी

[२०५]

गए स्याम ग्वालिनि-घर सूनैं।
माखन खाइ, डारि सब गोरस, बासन फोरि किए सब चूनै॥
बड़ौ माट इक बहुत दिननि कौ, ताहि कर्‌यौ दस टूक।
सोवत लरिकनि छिरकि मही सौं, हँसत चले दै कूक॥
आइ गई ग्वालिनि तिहिं औसर, निकसत हरि धरि पाए।
देखे घर-बासन सब फूटे, दूध-दही ढरकाए॥
दोउ भुज धरि गाढ़ैं करि लीन्हे, गई महरि कै आगैं।
सूरदास अब बसै कौन ह्याँ, पति रहिहै ब्रज त्यागैं॥

श्यामसुन्दर (किसी) गोपीके सूने घरमें गये। वहाँ मक्खन खाकर शेष सब गोरस (दूध-दही) गिरा दिया और बर्तनोंको फोड़कर चूर-चूर कर दिया। बहुत दिनोंका पुराना एक बड़ा मटका था, उसके भी दस टुकड़े कर दिये। सोते हुए बालकोंपर मट्ठा छिड़ककर हँसते हुए किलकारी मार-कर भाग चले। उसी समय वह गोपी आ गयी और घरसे निकलते हुए श्याम उसकी पकड़में आ गये। उसने देख लिया कि घरके सब बर्तन फूट गये हैं और दूध-दही ढुलकाया हुआ है। दोनों हाथ उसने दृढ़तासे

पकड़ लिया और व्रजरानीके सामने (लेकर) गयी। सूरदासजी कहते हैं—(वहाँ जाकर बोली—) 'अब हमलोग किसके यहाँ जाकर बसें ? हमारा सम्मान तो व्रज छोड़ देनेपर ही बचा रह सकता है।'

राग बिलावल

[२०६]

ऐसो हाल मेरैं घर कीन्हौ, हौं ल्याई तुम पास पकरि कै।
फोरि भाँड़ दधि माखन खायौ, उबर्‌यौ सो डार्‌यौ रिस करि कै॥
लरिका छिरकि मही सौं देखै, उपज्यौ पूत सपूत महरि कै।
बड़ौ माट घर धर्‌यौ जुगनि कौ, टूक-टूक कियौ सखनि पकरि कै॥
पारि सपाट चले तब पाए, हौं ल्याई तुमहीं पै धरि कै।
सूरदास प्रभु कौं यौं राखौ, ज्यौं राखिये गज मत्त जकरि कै॥

सूरदासजी कहते हैं—(गोपी बोली—) 'मैं इसे तुम्हारे पास पकड़कर ले आयी हूँ—इसने मेरे घर ऐसी दशा कर दी है—(कि क्या कहूँ) बर्तन फोड़कर दही-मक्खन खा लिया; जो बचा, उसे क्रोध करके गिरा दिया; बालकोंपर मट्ठा छिड़ककर उनकी ओर (हँसता हुआ) देखता है। व्रजरानीके ऐसा सुपूत (योग्य) पुत्र उत्पन्न हुआ है। मेरे घरमें एक युगोंका पुराना बड़ा मटका रखा था, सखाओंके साथ उसे पकड़कर (उठाकर) टुकड़े-टुकड़े कर दिया; सब कुछ बराबर (चौपट) करके जब सब-के-सब भाग चले, तब मुझे मिले और मैं पकड़कर (इन्हें) तुम्हारे ही पास ले आयी हूँ। अब इसे इस प्रकार बाँधकर रखो, जैसे मतवाले हाथीको जकड़कर रखा जाता है।'

राग कान्हरौ

[२०७]

करत कान्ह व्रज-घरनि अचगरी।
खीझति महरि कान्ह सौं, पुनि-पुनि उरहन लै आवति हैं सगरी॥
बड़े बाप के पूत कहावत, हम वै बास बसत इक बगरी।
नंदहु तैं ये बड़े कहैहैं, फेरि बसैहैं यह व्रज-नगरी॥

जननी कैं खीझत हरि रोए, झूठहि मोहि लगावति धगरी।
सूर स्याम-मुख पोंछि जसोदा, कहति सबै जुवती हैं लँगरी ॥

कन्हाई व्रजके घरोंमें ऊधम करते हैं, इससे व्रजरानी कृष्णचन्द्रपर खीझ रही हैं—'ये सभी बार-बार उलाहना लेकर आती हैं, तुम बड़े (सम्मानित) पिताके पुत्र कहलाते हो, हम और वे गोपियाँ एक स्थानमें ही निवास करती हैं (उनसे रोज-रोज कहाँतक झगड़ा किया जा सकता है) । इधर ये (मेरे सुपुत्र) तो ऐसे हो गये हैं मानो व्रजराज नन्दजीसे भी बड़े कहलायेंगे और (सबको उजाड़कर) व्रजकी नगरीको ये फिरसे बसायेंगे ।' माताके डाँटनेपर श्यामसुन्दर रो पड़े (और बोले–) 'ये कुलक्षणियाँ मुझे झूठा ही दोष लगाती हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजीने श्यामका मुख पोंछा (और पुचकारकर) कहने लगीं—(लाल ! रो मत ।) 'ये सब युवती गोपियाँ हैं ही झगड़ालू ।'

राग नट

[२०८]

मेरौ माई ! कौन कौ दधि चोरै ।
मेरैं बहुत दई कौ दीन्हौ, लोग पियत हैं औरै ॥
कहा भयौ तेरे भवन गए जो, पियौ तनक लै भोरै ।
ता ऊपर काहैं गरजति है, मनु आई चढ़ि घोरै ॥
माखन खाइ, मह्यौ सब डारै, बहुरौ भाजन फोरै ।
सूरदास यह रसिक ग्वालिनी, नेह नवल सँग जोरै ॥

(व्रजरानी कहती हैं–) 'सखी ! मेरा लाल किसका दही चुराता है ? दैवका दिया हुआ मेरे घर ही बहुत (गोरस) है, दूसरे लोग ही उसे पीते-खाते हैं । हो क्या गया जो यह तुम्हारे घर गया और भोलेपनसे थोड़ा-सा (दूध या दही) लेकर पी लिया । इतनी-सी बातपर गरजती क्यों हो ? मानो घोड़ेपर चढ़ी आयी हो।' सूरदासजी कहते हैं—(वह ग्वालिनि बोली—) 'मोहन मक्खन खा

जाते हैं, सब मट्ठा गिरा देते हैं और फिर बर्तन भी फोड़ देते हैं।, यह गोपी तो प्रेमिका है ? (उलाहना देनेके बहाने यह) उन अलबेलेके साथ स्नेहका नाता जोड़ना चाहती है। (यशोदाजीकी फटकार इसे बुरी नहीं लगती।)

राग रामकली

[२०९]

अपनौ गाउँ लेउ नँदरानी।
बड़े बाप की बेटी, पूतहि भली पढ़ावति बानी॥
सखा-भीर लै पैठत घर मैं, आपु खाइ तौ सहिऐ।
मैं जब चली सामुहैं पकरन, तब के गुन कहा कहिऐ॥
भाजि गए दुरि देखत कतहूँ, मैं घर पौढ़ी आइ।
हरैं-हरैं बेनी गहि पाछैं, बाँधी पाटी लाइ॥
सुनु मैया, याके गुन मोसौं, इन मोहि लयौ बुलाई।
दधि मैं पड़ी सेंत की मोपै चींटी सबै कढ़ाई॥
टहल करत मैं याके घर की, यह पति सँग मिलि सोई।
सूर-बचन सुनि हँसी जसोदा, ग्वालि रही मुख गोई॥

(गोपी बोली—) 'नन्दरानी ! अपना गाँव सम्हालो (हम किसी दूसरे गाँवमें बसेंगी)। तुम तो बड़े (सम्मानित) पिताकी पुत्री हो, सो पुत्र-को अच्छी बात पढ़ा (सिखला) रही हो। यह स्वयं खा ले तो सहा भी जाय, सखाओंकी भीड़ लेकर घरमें घुसता है। जब मैं सामनेसे पकड़ने चली, तबके इसके गुण (उस समयकी इसकी चेष्टा) क्या कहूँ। मेरे देखनेमें तो ये कहीं भागकर छिप गये, मैं घर लौटकर लेट गयी, सो धीरे-धीरे पीछेसे मेरी चोटी पकड़कर पलंगकी पाटीमें लगाकर (फँसाकर) बाँध दी।' (यह सुनकर श्यामसुन्दर सरल बाल्यभावसे बोले–) 'मैया ! इसके गुण मुझसे सुन, इसीने मुझे बुलाया और दहीमें पड़ी सब चींटियाँ इसने बिना कुछ दिये ही मुझसे निकलवायीं। मैं तो इसके घरकी सेवा (दहीमेंसे चींटी निकालनेका काम)

कर रहा था और यह जाकर अपने पतिके पास सो गयी।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामकी बात सुनकर यशोदाजी हँस पड़ीं और गोपी (लज्जासे) मुख छिपाकर रह गयी।

राग नटनारायन

[२१०]

लोगनि कहत झुकति तू बौरी।
दधि-माखन गाँठी दै राखति, करत फिरत सुत चोरी॥
जाके घर की हानि होति नित, सो नहिं आनि कहै री?
जाति-पाँति के लोग न देखति, और बसैहै नैरी॥
घर-घर कान्ह खान कौं डोलत, बड़ी कृपन तू है री।
सूर स्याम कौं जब जोइ भावै, सोइ तबहीं तू दै री॥

सूरदासजी कहते हैं—(कोई गोपी व्रजरानीसे कहती है—) 'लोगोंके कहनेसे तुम पगली होकर खीझती हो! अपना दही-मक्खन तो गाँठ बाँधकर (छिपाकर) रखती हो और पुत्र चोरी करता घूमता है। जिसके घरकी प्रतिदिन हानि होती है, वह आकर कहेगा नहीं? अपने जाति-पाँतिके लोगोंको देखती नहीं हो (उनका संकोच न करके उन्हें डाँटती हो, वे गाँव छोड़कर चले जायँगे तो) क्या दूसरे नये लोगोंको बसाओगी? तुम तो बड़ी कृपण हो, (तभी तो) कन्हाई भोजनके लिये घर-घर घूमता है। श्यामसुन्दरको जब जो रुचे, वही तुम उसे उसी समय दिया करो।'

राग मलार

[२११]

महरि तैं बड़ी कृपन है माई।
दूध-दही बहु बिधि कौ दीनौ, सुत सौं धरति छपाई॥
बालक बहुत नहीं री तेरैं, एकै कुँवर कन्हाई।
सोऊ तौ घरहीं घर डोलतु, माखन खात चोराई॥

वृद्ध बयस पूरे पुन्यनि तैं, तैं बहुतै निधि पाई।
ताहू के खैबे-पीबे कौं, कहा करति चतुराई॥
सुनहु न बचन चतुर नागरि के, जसुमति नंद सुनाई।
सूर स्याम कौं चोरी कैं मिस, देखन है यह आई॥

(गोपीने कहा–) 'सखी व्रजरानी ! तुम तो बड़ी कंजूस हो। दैवने बहुत अधिक दूध-दही तुम्हें दिया है, उसे भी पुत्रसे छिपाकर रखती हो। सखी ! तुम्हारे बहुत लड़के तो हैं नहीं, अकेला कुँअर कन्हैया ही तो है। वह भी तो घर-घर घूमता रहता है और चोरी करके मक्खन खाता है। बुढ़ापेकी अवस्थामें समस्त पुण्योंका फल पूरा (प्रकट) होनेपर तो यह (कृष्णरूपी) बहुमूल्य निधि तुमने पायी है, अब उसके भी खाने-पीनेमें चतुरता (कतर-ब्यौंत) क्यों करती हो ?' सूरदासजी कहते हैं कि श्रीयशोदाजीने (यह बात सुनकर) श्रीनन्दजीको सुनाकर यह बात कही—'इस चतुर नागरीकी बातें तो सुनो, श्यामसुन्दरकी चोरीका बहाना लेकर यह उसे देखने आयी है।'

राग नट

[२१२]

अनत सुत ! गोरस कौं कत जात ?
घर सुरभी कारी-धौरी कौ माखन माँगि न खात॥
दिन प्रति सबै उरहने कैं मिस, आवति हैं उठि प्रात।
अनलहते अपराध लगावति, बिकट बनावति बात॥
निपट निसंक बिबादति सनमुख, सुनि-सुनि नंद रिसात।
मोसौं कहति कृपन तेरैं घर ढोटाहू न अघात॥
करि मनुहारि उठाइ गोद लै, बरजति सुत कौं मात।
सूर स्याम ! नित सुनत उरहनौ, दुख पावत तेरौ तात॥

(माता कहती हैं—) 'पुत्र ! तुम दूसरोंके यहाँ गोरसके लिये क्यों जाते हो ? घरपर ही तुम्हारी कृष्णा और धवला गायोंका मक्खन (बहुत)

है, उसे माँगकर क्यों नहीं खा लिया करते ? ये सब (गोपियाँ) प्रतिदिन सबेरे-सबेरे उलाहना देनेके बहाने उठकर चली आती हैं । अनहोने दोष लगाती हैं, अद्भुत बातें बनाती (गढ़ लेती) हैं । ये सर्वथा निःशङ्क हैं, सामने होकर झगड़ा करती हैं, जिसे सुन-सुनकर व्रजराज रोष करते हैं। मुझसे कहती हैं—'तू कृपण है, तेरे घर तेरे पुत्रका भी पेट नहीं भरता ।' सूरदासजी कहते हैं कि इस प्रकार माता पुत्रको उठाकर गोदमें ले लेती हैं और उसकी मनुहार (विनती-खुशामद) करके रोकती हैं कि—'श्यामसुन्दर ! नित्य उलाहना सुननेसे तुम्हारे पिता दुःख पाते (दुखी होते) हैं ।'

[२१३]

हरि सब भाजन फोरि पराने ।
हाँक देत पैठे दै पेला, नैकु न मनहिं डराने ॥
सींके छोरि, मारि लरिकनि कौं, माखन-दधि सब खाइ ।
भवन मच्यौ दधि-काँदौ, लरिकनि रोवत पाए जाइ ॥
सुनहु-सुनहु सबहिनि के लरिका, तेरौ-सौ कहुँ नाहिं ।
हाटनि-बाटनि, गलिनि कहूँ कोउ चलत नहीं, डरपाहिं ॥
रितु आए कौ खेल, कन्हैया सब दिन खेलत फाग ।
रोकि रहत गहि गली साँकरी, टेढ़ी बाँधत पाग ॥
बारे तैं सुत ये ढँग लाए, मनहीं-मनहिं सिहाति ।
सुनैं सूर ग्वालिनि की बातैं, सकुचि महरि पछिताति ॥

श्यामसुन्दर ललकारते हुए बलपूर्वक (गोपीके घरमें) घुस गये, तनिक भी मनमें डरे नहीं । छींके खोलकर (उनसे उतारकर) सब दही-मक्खन खाकर, उस घरके लड़कोंको पीटकर और सब बर्तन फोड़कर भाग गये । गोपीने जाकर देखा कि घर-में दहीका कीचड़ हो रहा है, अपने लड़कोंको उसने रोते पाया।

(अब यशोदाजीके पास जाकर बोली—) 'सुनो ! सुनो ! लड़के तो सभीके हैं; किंतु तुम्हारे लड़के-जैसे तो कहीं नहीं हैं; उसके कारण बाजारोंमें, मुख्य मार्गोंपर, गलियोंमें—कहीं भी कोई चल नहीं पाता; सभी उससे डरते हैं। वसन्त ऋतु आनेपर फाग खेलना तो ठीक है; किंतु तुम्हारा कन्हैया तो सब समय होली खेलता है, तिरछी पगड़ी बाँधता है और पतली गलियोंमें (गोपियोंको) पकड़कर रोक लेता है। बचपनसे ही तुम्हारे पुत्रने ये ढंग ग्रहण कर रखे हैं।' (यह कहती हुई भी वह) मन-ही-मन (श्यामके द्वारा छेड़े जानेके लिये) ललचा रही है। सूरदासजी कहते हैं कि गोपीकी बातें सुनकर व्रज-रानी संकोचमें पड़ गयी हैं और पछतावा कर रही हैं।

राग सारंग

[२१४]

कन्हैया ! तू नहिं मोहि डरात।
षटरस धरे छाँड़ि कत पर-घर, चोरी करि-करि खात॥
बकत-बकत तोसौं पचि हारी, नैकुहुँ लाज न आई।
व्रज-परगन-सिकदार महर, तू ताकी करत नन्हाई॥
पूत सपूत भयौ कुल मेरैं, अब मैं जानी बात।
सूर स्याम अब लौं तुहि बकस्यौ, तेरी जानी घात॥

सूरदासजी कहते हैं—(माताने डाँटा—) 'कन्हैया ! तू मुझे डरता नहीं है ? घरमें रखे छहों रस छोड़कर तू दूसरेके घर चोरी करके क्यों खाता है ? मैं तुझसे कहते-कहते प्रयत्न करके थक गयी; पर तुझे तनिक भी लज्जा नहीं आयी ! श्रीव्रजराज इस व्रज-परगनेके सिक्केदार हैं (यहाँ उनका सिक्का चलता है), तू उनकी हेठी करता है ? मैंने अब यह बात जान ली कि मेरे कुलमें तू बड़ा योग्य पुत्र जन्मा है। श्याम ! अबतक तो मैंने तुझे क्षमा कर दिया था, पर अब तेरे दाव समझ गयी हूँ।'

राग गौरी

[२१५]

सुनु री ग्वारि ! कहौं इक बात ।
मेरी सौं तुम याहि मारियौ, जबहीं पावौ घात ॥
अब मैं याहि जकरि बाँधौंगी, बहुतै मोहि खिझायौ ।
साटिनि मारि करौं पहुनाई, चितवत कान्ह डरायौ ॥
अजहूँ मानि, कह्यौ करि मेरौ, घर-घर तू जनि जाहि ।
सूर स्याम कह्यौ, कहूँ न जैहौं, माता मुख तन चाहि ॥

(व्रजरानीने कहा-) 'गोपी ! सुन, तुझसे एक बात कहती हूँ । तुम सबको मेरी शपथ है—जब भी अवसर पाओ, तुम इसे (अवश्य) मारना। इसने मुझे बहुत चिढ़ाया है, अब मैं इसे जकड़कर बाँध रखूँगी । छड़ियोंसे मारकर इसका आतिथ्य करूँगी।' (यों कहकर) श्रीकृष्णकी ओर देखते ही कृष्णचन्द्र डर गये । (माताने उनसे कहा—) 'अब भी मान जा, मेरा कहना कर, तू घर-घर मत जाया कर !' सूरदासजी कहते हैं कि माताके मुखकी ओर देखकर श्यामसुन्दर बोले—'मैया ! मैं कहीं नहीं जाऊँगा ।'

राग बिलावल

[२१६]

तेरैं लाल मेरौ माखन खायौ ।
दुपहर दिवस जानि घर सूनौ, ढूँढ़ि-ढँढ़ोरि आपही आयौ ॥
खोलि किवार, पैठि मंदिर मैं, दूध-दही सब सखनि खवायौ ।
ऊखल चढ़ि, सींके कौ लीन्हौ, अनभावत भुइँ मैं ढरकायौ ॥
दिन प्रति हानि होति गोरस की, यह ढोटा कौनैं ढँग लायौ ।
सूर स्याम कौं हटकि न राखै, तैं ही पूत अनोखौ जायौ ॥

सूरदासजी कहते हैं–(एक गोपी उलाहना देती है–) 'तुम्हारे लालने मेरा मक्खन खाया है । दिनमें दोपहरके समय घरको सुनसान समझकर स्वयं ढूँढ़-

ढाँढ़कर इसने स्वयं खाया। (अकेले ही खा लेता तो कोई बात नहीं थी) किवाड़ खोलकर, घरमें घुसकर सारा दूध-दही इसने सखाओंको खिला दिया। ऊखलपर चढ़कर छींकेपर रक्खा गोरस भी ले लिया और जो अच्छा नहीं लगा, उसे पृथ्वीपर ढुलका दिया। प्रतिदिन इसी प्रकार गोरसकी बरबादी हो रही है, तुमने अपने इस पुत्रको किस ढंगपर लगा दिया। श्यामसुन्दरको मना करके घर क्यों नहीं रखती हो। क्या तुमने ही अनोखा पुत्र उत्पन्न किया है?'

राग रामकली

[२१७]

माखन खात पराए घर कौ।
नित प्रति सहस मथानी मथिऐ, मेघ-सब्द दधि-माट-घमरकौ॥
कितने अहिर जियत मेरैं घर, दधि मथि लै बेंचत महि मरकौ।
नव लख धेनु दुहत हैं नित प्रति, बड़ौ नाम है नंद महर कौ॥
ताके पूत कहावत हौ तुम, चोरी करत उघारत फरकौ।
सूर स्याम कितनौ तुम खैहौ, दधि-माखन मेरैं जहँ-तहँ ढरकौ॥

सूरदासजी कहते हैं–(माता समझाती हैं–) 'तुम दूसरेके घरका मक्खन खाते हो! (तुम्हारे घरमें) प्रतिदिन सहस्रों मथानियोंसे दही मथा जाता है, दहीके मटकोंसे जो घरघराहट निकलती है, वह मेघगर्जनाके समान होती है। कितने ही अहीर मेरे घर जीते (पालन-पोषण पाते) हैं, दही मथकर वे मट्ठेके मटके बेच लेते हैं। व्रजराज श्रीनन्दजीका बड़ा नाम है, उनके यहाँ प्रतिदिन नौ लाख गायें दुही जाती हैं। उनके तुम पुत्र कहलाते हो और चोरी करके छप्पर उजाड़ते (अपने घरकी कंगाली प्रकट करते) हो। श्यामसुन्दर! तुम कितना खाओगे, दही-मक्खन तो मेरे घर जहाँ-तहाँ ढुलकता फिरता है।'

[२१८]

मैया मैं नहिं माखन खायौ।
ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि, मेरैं मुख लपटायौ ॥
देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचैं धरि लटकायौ।
हौं जु कहत नान्हे कर अपनैं मैं कैसैं करि पायौ ॥
मुख दधि पोंछि, बुद्धि इक कीन्ही, दोना पीठि दुरायौ।
डारि साँटि, मुसुकाइ जसोदा, स्यामहि कंठ लगायौ ॥
बाल-बिनोद-मोद मन मोह्यौ, भक्ति-प्रताप दिखायौ।
सूरदास जसुमति कौ यह सुख, सिव बिरंचि नहिं पायौ ॥

(श्यामसुन्दर बोले--) 'मैया ! मैंने मक्खन नहीं खाया है। ये सब सखा मिलकर मेरी हँसी करानेपर उतारू हैं, इन्होंने उसे मेरे (ही) मुखमें लिपटा दिया। तू ही देख ! बर्तन तो छींकेपर रखकर ऊँचाईपर लटकाये हुए थे, मैं कहता हूँ कि अपने नन्हे हाथोंसे मैंने उन्हें कैसे पा लिया ?' यों कहकर मुखमें लगा दही मोहनने पोंछ डाला तथा एक चतुरता की कि (मक्खन-भरा) दोना पीछे छिपा दिया। माता यशोदाने (पुत्रकी बात सुनकर) छड़ी रख दी और मुसकराकर श्यामसुन्दरको गले लगा लिया। सूरदासजी कहते हैं कि प्रभुने अपने बाल-विनोदके आनन्दसे माताके मनको मोहित कर लिया, (इस बालक्रीडा तथा मातासे डरनेमें) उन्होंने भक्तिका प्रताप दिखलाया। श्रीयशोदाजीको जो यह (श्यामके बाल-विनोदका) आनन्द मिल रहा है, उसे तो शंकरजी और ब्रह्माजी (भी) नहीं पा सके।

राग बिलावल

[२१९]

तेरी सौं सुनु-सुनु मेरी मैया !
आवत उबटि पर्‌यौ ता ऊपर, मारन कौं दौरी इक गैया ॥
ब्यानी गाइ बछरुवा चाटति, हौं पय पियत पतूखिनि लैया।
यहै देखि मोकौं बिजुकानी, भाजि चल्यौ कहि दैया दैया ॥

दोउ सींग बिच ह्वै हौं आयौ, जहाँ न कोऊ हौ रखवैया।
तेरौ पुन्य सहाय भयौ है, उबर्‌यौ बाबा नंद दुहैया॥
याके चरित कहा कोउ जानै, बूझौ धौं संकर्षन भैया।
सूरदास स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि लेति बलैया॥

(मोहन भोलेपनसे बोले—) 'मेरी मैया ! सुन, सुन; तेरी शपथ (सच कह रहा हूँ) घर आते समय एक ऊबड़-खाबड़ मार्गमें जा पड़ा और उसपर एक गाय मुझे मारने दौड़ी। गाय ब्यायी हुई थी और अपने बछड़ेको चाट रही थी, मैं छोटे दोनेमें दुहकर उसका धारोष्ण दूध पी रहा था। यही देखकर वह मुझसे भड़क गयी, मैं 'दैया रे ! दैया रे' कहकर भाग पड़ा। जहाँपर कोई भी रक्षा करनेवाला नहीं था, वहाँ मैं उसके दोनों सींगोंके बीचमें पड़कर बच आया ! मैं नन्दबाबाकी दुहाई (शपथ) करके कहता हूँ कि आज तेरा पुण्य ही मेरा सहायक बना है।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे इन स्वामीकी लीला कोई क्या समझ सकता है, चाहे इनके बड़े भाई बलरामजीसे पूछ लो (वे भी कहेंगे कि इनकी लीला अद्भुत है)। माता तो मोहनको हृदयसे लगाकर उनकी बलैया ले रही हैं।

राग गौरी

[२२०]

ह्वाँ लगि नैकु चलौ नँदरानी !
मेरे सिर की नई बहनियाँ, लै गोरस मैं सानी॥
हमै-तुम्है रिस-बैर कहाँ कौ, आनि दिखावत ज्यानी।
देखौ आइ पूत कौ करतब, दूध मिलावत पानी॥
या ब्रज कौ बसिबौ हम छाड़्यौ, सो अपनैं जिय जानी।
सूरदास ऊसर की बरषा थोरे जल उतरानी॥

(एक गोपी कहती है—) 'नन्दरानी ! तनिक वहाँतक चलो ! मेरे मस्तकपरकी नयी गगरी लेकर (तुम्हारे लालने) गोरससे लथपथ कर

दी। हमारे और तुम्हारेमें किस बातकी खीझ या शत्रुता है जो अपनी हानि (स्वयं) कर तुम्हें दिखायेंगी। तुम आकर अपने पुत्रके करतब देख लो कि हम (कहाँतक) दूधमें पानी मिलाती हैं (झूठ बोलती हैं)। अपने मनमें हमने यह समझ लिया कि इस व्रजमें बसना हमें छोड़ना ही पड़ेगा।' सूरदासजी कहते हैं कि यह तो ऊसरपर हुई वर्षाके समान है, जहाँ थोड़ा-सा जल पड़ते ही पानी छलकने लगता है। अर्थात् थोड़ी-सी सम्पत्ति या श्यामसुन्दरकी थोड़ी-सी बाल-विनोदकी कृपा पाकर ही यह ओछी गोपी अपनी सीमासे बाहर होकर इतराने लगी है।

राग बिलावल

[२२१]

सुनि-सुनि री तैं महरि जसोदा! तैं सुत बड़ौ लड़ायौ।
इहिं ढोटा लै ग्वाल भवन मैं, कछु बिथर्‍यौ कछु खायौ॥
काकैं नहीं अनौखौ ढोटा, किहिं न कठिन करि जायौ।
मैं हूँ अपनैं औरस पूतै बहुत दिननि मैं पायौ॥
तैं जु गँवारि! पकरि भुज याकी, बदन दह्यौ लपटायौ।
सूरदास ग्वालिनि अति झूठी, बरबस कान्ह बँधायौ॥

(गोपी कहती है—) 'सुनो, सुनो, व्रजरानी यशोदा! तुमने अपने पुत्रको बहुत दुलारा (जिससे यह बिगड़ गया) है। (तुम्हारे) इस बालकने गोप-बालकोंको (साथ) लेकर तथा (मेरे) भवनमें जाकर वहाँ कुछ गोरस ढुलकाया तथा कुछ खाया। किसका बालक अनोखा (निराला) नहीं होता, किसने बड़े कष्टसे उसे उत्पन्न नहीं किया है, मैंने भी तो अपने गर्भसे (यह) पुत्र बहुत दिनोंपर पाया है (अर्थात् मेरे भी तो बड़ी अवस्थामें पुत्र हुआ; किंतु इतना अनर्थ तो वह भी नहीं करता)।' सूरदासजी कहते हैं— (व्रजरानीने उसे उलटे डाँटा—) 'तू भी गँवार (झगड़ालू) है, इस मेरे लालका हाथ पकड़कर तूने ही इसके मुखमें दही लिपटा दिया है। ये गोपियाँ अत्यन्त झूठ बोलनेवाली हैं। झूठ-मूठ ही इन्होंने कन्हाईको बँधवा दिया।'

राग नट

[२२२]

नंद-घरनि ! सुत भलौ पढ़ायौ।
ब्रज-बीथिनि, पुर-गलिनि, घरै-घर, घाट-बाट सब सोर मचायौ ॥
लरिकनि मारि भजत काहू के, काहू कौ दधि-दूध लुटायौ।
काहू कैं घर करत भँड़ाई, मैं ज्यौं-त्यौं करि पकरन पायौ ॥
अब तौ इन्हें जकरि धरि बाँधौ, इहिं सब तुम्हरौ गाउँ भजायौ।
सूर स्याम-भुज गहि नँदरानी, बहुरि कान्ह अपनैं ढँग लायौ ॥

(गोपी कहती है—)'नन्दरानी ! तुमने पुत्रको अच्छी शिक्षा दी है! व्रजकी गलियोंमें, नगरके मार्गोंमें, घर-घरमें, घाटोंपर, कच्चे रस्तोंमें—सब कहीं उसने हल्ला (ऊधम) मचा रखा है। किसीके लड़कोंको मारकर भाग जाता है, किसीका दूध-दही लुटा देता है, किसीके घरमें घुसकर ढूँढ़-ढाँढ़ करता है, जैसे-तैसे करके मैं इसे पकड़ सकी हूँ। अब तो इसे जकड़कर बाँध रखो, इसने तुम्हारे सारे गाँवको भगा दिया (इसके ऊधमसे तंग होकर सब लोग गाँव छोड़कर जाने लगे)। सूरदासजी कहते हैं कि श्रीनन्दरानीने श्यामसुन्दरका हाथ पकड़ लिया; किंतु कन्हाई तो फिर अपने ही ढंगमें लग गये (पूर्ववत् ऊधम करते रहे)।

राग गौरी

[२२३]

ऐसी रिस मैं जौ धरि पाऊँ।
कैसे हाल करौं धरि हरि के, तुम कौं प्रगट दिखाऊँ ॥
सँटिया लिए हाथ नँदरानी, थरथरात रिस गात।
मारे बिना आजु जौ छाँड़ौं, लागै मेरैं तात ॥
इहिं अंतर ग्वारिनि इक औरै, धरे बाँह हरि ल्यावति।
भली महरि सूधौ सुत जायौ, चोली-हार बतावति ॥

रिस मैं रिस अतिहीं उपजाई, जानि जननि-अभिलाष।
सूर-स्याम-भुज गहे जसोदा, अब बाँधौं कहि माष॥

(मैया यशोदा कहती हैं—)'ऐसे क्रोधमें यदि पकड़ पाऊँ तो श्यामको पकड़कर कैसी गति बनाती हूँ, यह तुमको प्रत्यक्ष दिखला दूँ। श्रीनन्दरानी हाथमें छड़ी लिये हैं, क्रोधसे उनका शरीर थर-थर काँप रहा है। (वे कहती हैं—) 'यदि मारे बिना आज छोड़ दूँ तो वह मेरा बाप लगे' (अर्थात् मेरा बाप थोड़े ही लगता है जो मारे बिना छोड़ दूँ)। इसी समय एक दूसरी गोपी हाथ पकड़कर श्यामसुन्दरको ले आ रही थी। (आकर) उसने अपनी (फटी) चोली और (टूटा) हार दिखाकर कहा—'व्रजरानी ! तुम (स्वयं बहुत) भली हो, और तुमने पुत्र (भी बहुत) सीधा उत्पन्न किया है !' (इस प्रकार श्यामने) माताकी (अपना क्रोध प्रकट करनेकी) इच्छा जानकर उनके क्रोधकी दशामें और भी क्रोध उत्पन्न कर दिया (क्रोध बढ़नेका निमित्त उपस्थित कर दिया)। सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजीने श्यामसुन्दरका हाथ पकड़ लिया और क्रोधसे कहा—'अब तुझे बाँध दूँगी।'

राग सोरठ

[२२४]

जसुमति रिस करि-करि रजु करषै।
सुत हित क्रोध देखि माता कैं, मनहीं-मन हरि हरषै॥
उफनत छीर जननि करि ब्याकुल, इहिं बिधि भुजा छुड़ायौ।
भाजन फोरि दही सब डार्‌यौ, माखन-कीच मचायौ॥
लै आई जेंवरि अब बाँधौं, गरब जानि न बँधायौ।
अंगुर द्वै घटि होति सबनि सौं, पुनि-पुनि और मँगायौ॥
नारद-साप भए जमलार्जुन, तिन कौं अब जु उधारौं।
सूरदास-प्रभु कहत भक्त हित जनम-जनम तनु धारौं॥

यशोदाजी क्रोध करके बार-बार रस्सी खींच रही हैं। अपने पुत्रकी भलाई (उसके सुधार) के लिये माताका क्रोध देखकर श्याम मन-ही-मन प्रसन्न हो रहे हैं। उफनते दूधके बहाने माताको व्याकुल करके मोहनने हाथ छुड़ा लिया और बर्तन फोड़कर सारा दही ढुलका दिया तथा मक्खन (भूमिपर गिराकर) उसकी कीच मचा दी। (इससे और रुष्ट होकर माता) रस्सी ले आयी कि 'अब तुम्हें बाँधती हूँ'; किंतु (बाँधनेका) गर्व समझकर बन्धनमें नहीं आये। (माताने) बार-बार और रस्सियाँ मँगायीं; किंतु सभी दो अंगुल छोटी ही पड़ जाती थीं। सूरदासजी कहते हैं—मेरे प्रभु (मन-ही-मन) कहने लगे—'देवर्षि नारदजीके शापसे (कुबेरके पुत्र) यमलार्जुन (सटे हुए अर्जुनके दो वृक्ष) हो गये हैं, इनका अब उद्धार कर दूँ; क्योंकि मैं तो भक्तोंके लिये ही बार-बार अवतार लेकर शरीर धारण करता हूँ।'

राग रामकली

[२२५]

जसोदा ! एतौ कहा रिसानी।
कहा भयौ जौ अपने सुत पै, महि ढरि परी मथानी ?
रोषहिं रोष भरे दृग तेरे, फिरत पलक पर पानी।
मनहुँ सरद के कमल-कोष पर मधुकर मीन सकानी॥
स्रम-जल किंचित निरखि बदन पर, यह छबि अति मन मानी।
मनौ चंद नव उमँगि सुधा भुव ऊपर बरषा ठानी॥
गृह-गृह गोकुल दई दाँवरी, बाँधति भुज नँदरानी।
आपु बँधावत, भक्तनि छोरत, बेद बिदित भई बानी॥
गुन लघु चरचि करति स्रम जितनौ, निरखि बदन मुसुकानी।
सिथिल अंग सब देखि सूर-प्रभु-सोभा-सिंधु तिरानी॥

(गोपी कहती है—) 'यशोदाजी ! इतना क्रोध तुमने क्यों किया है ? हो क्या गया जो अपने पुत्रसे दही मथनेका मटका भूमिपर लुढ़क गया ? (देखो तो) क्रोध-ही-क्रोधमें तुम्हारे नेत्र डबडबा आये हैं, पलकोंपर आँसू उमड़ने लगा है; ऐसा लगता है मानो शरद्‌ऋतुमें खिले कमलके कोषपर भौंरेको देखकर मछली (वहाँ पहुँचकर) संदेहमें पड़ गयी हो (कि कोषपर जाय या जलमें लौट जाय)। तुम्हारे मुखपर पसीनेकी कुछ बूँदें दीखने लगी हैं, यह छटा तो मनको बहुत ही भाती है, मानो नवीन उमंगसे उमड़कर चन्द्रमाने पृथ्वीपर अमृतकी वर्षा प्रारम्भ कर दी हो।' गोकुलके घर-घरने रस्सी दी और श्रीनन्दरानी श्यामके हाथ बाँध रही हैं; (इससे) वेदोंमें भी यह बात प्रसिद्ध हो गयी कि (दयामय) अपने-आपको बन्धनमें डालकर भी भक्तोंको मुक्त करते हैं। रस्सियोंको छोटी समझकर उन्हें जोड़ने-खींचने (में) माता जो श्रम करती हैं, उसके कारण उनके मुखको देखकर गोपी मुसकरा उठी। सूरदासजी कहते हैं कि माताका सारा शरीर शिथिल (थका हुआ) दीखने लगा है; मानो मेरे प्रभुकी शोभाके समुद्रमें वे (थककर) तैर रही हों।

राग सारंग

[२२६]

बाँधौं आजु, कौन तोहि छोरै।
बहुत लँगरई कीन्ही मोसौं, भुज गहि रजु ऊखल सौं जोरै॥
जननी अति रिस जानि बँधायौ, निरखि बदन, लोचन जल ढोरै।
यह सुनि ब्रज-जुवतीं सब धाईं,कहतिं कान्ह अब क्यौं नहिं छोरै॥
ऊखल सौं गहि बाँधि जसोदा, मारन कौं साँटी कर तोरै।
साँटी देखि ग्वालि पछितानी, बिकल भई जहँ-तहँ मुख मोरै॥
सुनहु महरि ! ऐसी न बूझिऐ, सुत बाँधति माखन-दधि थोरैं।
सूर स्याम कौं बहुत सतायौ, चूक परी हम तैं यह भोरैं॥

(माता कहती हैं—) 'आज तुझे बाँध (ही) दूँगी, देखती हूँ कौन खोलता है। मेरे साथ बहुत ऊधम तूने किया, यह कहकर हाथ पकड़कर (उसे) रस्सीके द्वारा ऊखलसे बाँध रही हैं। माताको अत्यन्त क्रोधित देखकर मोहनने अपनेको बँधवा लिया और माताके मुखकी ओर देखकर आँखोंसे आँसू ढुलकाने लगे । यह सुनकर (कि माताने श्यामको बाँध दिया) व्रजकी सब युवतियाँ दौड़ी आयीं और कहने लगीं—'अब कन्हाईको छोड़ क्यों नहीं देती !' (किंतु) यशोदाजी तो ऊखलसे उन्हें बाँधकर मारनेके लिये हाथसे छड़ी तोड़ रही हैं। छड़ी देखकर गोपियोंको (अपने उलाहना देनेका) बड़ा पश्चात्ताप हुआ (श्यामके पीटे जानेकी सम्भावनासे ही व्याकुल होकर उन्होंने जहाँ-तहाँ अपना मुख छिपा लिया । सूरदासजी कहते हैं—(वे सब बोलीं—) 'व्रजरानी ! ऐसा तुम्हें नहीं करना चाहिये कि थोड़े-से मक्खन और दहीके लिये तुमने पुत्रको बाँध दिया । श्यामसुन्दरको तुमने बहुत त्रास दिया, यह तो भोलेपनके कारण हमलोगोंसे भूल हो गयी (जो उलाहना दिया) ।'

राग आसावरी

[२२७]

जाहु चली अपनैं-अपनैं घर ।
तुमहिं सबनि मिलि ढीठ करायौ, अब आईं छोरन बर ॥
मोहिं अपने बाबा की सौहैं, कान्हहि अब न पत्याउँ ।
भवन जाहु अपनैं-अपनैं सब, लागति हौं मैं पाउँ ॥
मोकौं जनि बरजौ जुवती कोउ, देखौ हरि के ख्याल ।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा, बड़े नंद के लाल ॥

(श्रीव्रजरानी कहती हैं—) 'सब अपने-अपने घर चली जाओ ! तुम्हीं सबने मिलकर तो इसे ढीठ बना दिया है और अब भली बनकर छोड़ने आयी हो । मुझे अपने पिताकी शपथ, अब मैं कन्हाईका विश्वास नहीं करूँगी । मैं तुम सबके पैरों पड़ती हूँ, अब अपने-अपने घर चली जाओ !

कोई युवती मुझे मना मत करो सब कोई श्यामकी चपलता देखो ।' सूरदासजी कहते हैं कि (व्यङ्गसे) यशोदाजी श्यामसुन्दरसे कह रही हैं— 'तुम सम्मानित व्रजराजके दुलारे हो न !' (तात्पर्य यह कि पिताके बलपर ऊधम करते थे, अब देखती हूँ कि पिता तुम्हें कैसे छुड़ाते हैं ।)

राग सोरठ

[२२८]

जसुदा ! तेरौ मुख हरि जोवै ।
कमलनैन हरि हिचिकिनि रोवै, बंधन छोरि जसोवै ॥
जौ तेरौ सुत खरौ अचगरौ, तऊ कोखि कौ जायौ ।
कहा भयौ जौ घर कैं ढोटा, चोरी माखन खायौ ॥
कोरी मटुकी दह्यौ जमायौ, जाख न पूजन पायौ ।
तिहिं घर देव-पितर काहे कौं, जा घर कान्हर आयौ ॥
जाकौ नाम लेत भ्रम छूटे, कर्म-फंद सब काटै ।
सोई इहाँ जेंवरी बाँधे, जननि साँटि लै डाँटै ॥
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के ऊखल आपु बँधायौ ।
सूरदास-प्रभु भक्त हेत ही देह धारि कै आयौ ॥

(गोपियाँ कहती हैं—) 'यशोदाजी ! श्याम तुम्हारा ही मुख देख रहा है । कमललोचन मोहन हिचकी ले-लेकर रो रहा है, यशोदाजी ! (झटपट इसका) बन्धन खोल दो । यदि तुम्हारा पुत्र सचमुच ऊधमी है, तो भी वह उत्पन्न तो हुआ है, तुम्हारे ही पेटसे न ? क्या हो गया जो घरके लड़केने चोरीसे मक्खन खा लिया । (देखो तो मैंने ही) कोरी मटकीमें दही जमाया था, कुल-देवता भी पूजने नहीं पायी थी (कि इसने जूठा कर दिया, पर मैं क्या क्रोध करती हूँ ? अरे) उस घरमें किसके देवता और किसके पितर, जिस घरमें कन्हैया आ गया ।' जिसका नाम लेनेसे अज्ञान दूर हो जाता है, जो कर्मके जालको काट देता है, उसीको माताने रस्सीसे बाँध दिया है और

ऊपरसे छड़ी लेकर डाँट रही है। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे प्रभु तो भक्तोंके लिये ही शरीर धारण करके संसारमें आये हैं; उन्होंने कुबेरके दोनों पुत्रोंको दुखी समझकर (उनके उद्धारके लिये) अपनेको ऊखलसे बँधवा लिया है।

राग बिहागरौ

[२२९]

देखौ माई ! कान्ह हिलकियनि रोवै।
इतनक मुख माखन लपटान्यौ, डरनि आँसुवनि धोवै॥
माखन लागि उलूखल बाँध्यौ, सकल लोग ब्रज जोवै।
निरखि कुरुख उन बालनि की दिस, लाजनि अँखियनि गोवै॥
ग्वाल कहैं धनि जननि हमारी, सुकर सुरभि नित नोवै।
बरबस हीं बैठारि गोद मैं, धारैं बदन निचोवै॥
ग्वालि कहैं या गोरस कारन, कत सुत की पति खोवै ?
आनि देहिं अपने घर तैं हम, चाहति जितौ जसोवै॥
जब-जब बंधन छोर्‌यौ चाहति, सूर कहै यह को वै।
मन माधौ तन, चित गोरस मैं, इहिं बिधि महरि बिलोवै॥

(गोपियाँ परस्पर कहती हैं—) 'देखो तो सखी, कन्हाई हिचकी ले-लेकर रो रहा है। छोटे-से मुखमें मक्खन लिपटा है, जिसे भयके कारण आँसुओंसे धो रहा है।' मक्खनके कारण ऊखलसे बाँधा गया मोहन व्रजके सब लोगोंकी ओर देख रहा है फिर उन गोपियोंकी ओर कठोर दृष्टिसे देखकर वह लज्जासे आँखें छिपा रहा है। गोप-बालक कहते हैं—'हमारी माताएँ धन्य हैं, जो प्रतिदिन अपने हाथों ही गायोंको नोती (उनके पिछले पैरोंमें रस्सी बाँधती) हैं, फिर आग्रहपूर्वक पकड़कर हमें गोदमें बैठाकर हमारे मुखमें (दूधकी) धार निचोड़ती (दुहती) हैं।' गोपियाँ कहती हैं—'इस गोरसके लिये तुम पुत्रका सम्मान क्यों नष्ट करती हो ? यशोदाजी ! तुम जितना चाहती हो (बताओ) हम अपने घरोंसे लाकर दे दें।' सूरदासजी

कहते हैं कि जब-जब (कोई गोपी) बन्धन खोलना चाहती है, तभी (व्रजरानी कहती हैं –) 'यह कौन है ?' व्रजेश्वरी इस प्रकार दधि-मन्थन कर रही हैं कि उनका मन तो श्यामसुन्दरकी ओर है और ध्यान गोरसमें लगा है ।

राग सारंग

[२३०]

(माई) नैकुहूँ न दरद करति, हिलकिनि हरि रोवै ।
बज्रहु तैं कठिन हियौ, तेरौ है जसोवै ॥
पलना पौढ़ाइ जिन्हैं बिकट बाउ काटै ।
उलटे भुज बाँधि तिन्हैं लकुट लिए डाँटै ॥
नैकुहूँ न थकत पानि, निरदई अहीरी ।
अहो नंदरानि, सीख कौन पै लही री ॥
जाकौं सिव-सनकादिक सदा रहत लोभा ।
सूरदास-प्रभु कौ मुख निरखि देखि सोभा ॥

(एक गोपी कहती है–) 'सखी ! तनिक भी पीड़ाका तुम अनुभव नहीं करती हो ? (देखो तो) श्याम हिचकी ले-लेकर रो रहा है। यशोदाजी ! तुम्हारा हृदय तो वज्रसे भी कठोर है। जिसे पलनेपर लिटा देनेपर भी तीव्र वायुसे कष्ट होता है, उसीको हाथ उलटे करके बाँधकर तुम छड़ी लेकर डाँट रही हो ? तुम्हारा हाथ तनिक भी थकता नहीं ? (सचमुच तुम) दयाहीन अहीरिन ही हो । अरी नन्दरानी ! यह (कठोरताकी) शिक्षा तुमने किससे पायी है ?' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे जिस प्रभुका दर्शन पानेके लिये शंकरजी तथा सनकादि ऋषि भी सदा ललचाते रहते हैं। (माता !) तुम उनके मुखकी शोभाको एक बार भली प्रकार देखो तो सही ! (फिर तुम्हारा क्रोध स्वयं नष्ट हो जायगा ।)

राग बिहागरौ

[२३१]

कुँवर जल लोचन भरि-भरि लेत ।
बालक-बदन बिलोकि जसोदा, कत रिस करति अचेत ॥
छोरि उदर तैं दुसह दाँवरी, डारि कठिन कर बेंत ।
कहि धौं री तोहि क्यौं करि आवै, सिसु पर तामस एत ॥
मुख आँसू अरु माखन-कनुका, निरखि नैन छबि देत ।
मानौ स्रवत सुधानिधि मोती, उडुगन-अवलि समेत ॥
ना जानौं किहिं पुन्य प्रगट भए इहिं ब्रज नंद-निकेत ।
तन-मन-धन न्यौछावरि कीजै सूर स्याम कैं हेत ॥

सूरदासजी कहते हैं—(गोपी कह रही है—) 'कुँवर कन्हाई बार-बार नेत्रोंमें आँसू भर लेता है (रो रहा है)। यशोदाजी! अपने बालकका मुख तो देखो, (इस प्रकार) बुद्धि खोकर क्रोध क्यों कर रही हो ? दुःसह (पीड़ा-दायिनी) रस्सी इसके पेट (कमर) मेंसे खोल दो और हाथसे कठोर बेंत डाल दो (अलग रख दो)। अरी ! बताओ तो, तुमसे नन्हे बच्चेपर इतना क्रोध कैसे किया जाता है ? मोहनके मुखपर आँसू ढुलक रहे हैं और मक्खन-के कुछ कण लगे हैं; नेत्रोंसे देखनेपर यह ऐसी शोभा देता है मानो चन्द्रमा तारागणोंके झुंडके साथ मोती टपका रहा है। पता नहीं किस पुण्यसे इस व्रजमें नन्दभवनमें यह प्रकट हुआ है; इस श्यामसुन्दरके लिये तो तन, मन, धन—सब न्यौछावर कर देना चाहिये ।'

राग केदारौ

[२३२]

हरि के बदन तन धौं चाहि ।
तनक दधि कारन जसोदा इतौ कहा रिसाहि ॥
लकुट कैं डर डरत ऐसैं सजल सोभित डोल ।
नील-नीरज-दल मनौ अलि-अंसकनि कृत लोल ॥

बात बस समृनाल जैसैं प्रात पंकज-कोस।
नमित मुख इमि अधर सूचत, सकुच मैं कछु रोस॥
कतिक गोरस-हानि, जाकौं करति है अपमान।
सूर ऐसे बदन ऊपर वारिऐ तन-प्रान॥

सूरदासजी कहते हैं– (गोपी समझा रही है—) 'श्यामके मुखकी ओर तो देखो। यशोदाजी! तनिक-से दहीके लिये इतना क्रोध क्यों करती हो ? तुम्हारी छड़ीके भयसे भीत इसके अश्रुभरे नेत्र ऐसी शोभा दे रहे हैं जैसे भौंरोंके बच्चोंद्वारा चञ्चल किये नीलकमलके दल हों। जैसे सवेरेके समय नालसहित कमल-कोष वायुके झोंकेसे झुक गया हो, उसी प्रकार इसका मुख झुका हुआ है और इसके ओष्ठोंसे संकोचके साथ कुछ क्रोध प्रकट होता है। गोरसकी इतनी कितनी हानि हो गयी, जिसके लिये मोहनका अपमान करती हो। ऐसे सुन्दर मुखपर तो शरीर और प्राण भी न्यौछावर कर देना चाहिये।'

[२३३]

मुख-छबि देखि हो नँद-घरनि !
सरद-निसि कौ अंसु अगनित इंदु-आभा-हरनि॥
ललित श्रीगोपाल-लोचन लोल आँसू-ढरनि।
मनहुँ बारिज बिथकि बिभ्रम, परे परबस परनि॥
कनक मनिमय जटित कुंडल-जोति जगमग करनि।
मित्र मोचन मनहुँ आए, तरल गति द्वै तरनि॥
कुटिल कुंतल, मधुप मिलि मनु, कियौ चाहत लरनि।
बदन-कांति बिलोकि सोभा सकै सूर न बरनि॥

(गोपी कहती है–) 'नन्दरानी ! (अपने लालके) मुखकी शोभा तो देखो, यह तो शरद्की रात्रिके अगणित किरणोंवाले चन्द्रमाओंकी छटाको भी हरण कर रहा है। श्रीगोपालके सुन्दर (एवं) चञ्चल नेत्रोंसे आँसुओंका ढुलकना

ऐसा (भला) लगता है, मानो कमल (कोश) में क्रीडासे अत्यन्त थककर भौंरे विवश गिरे पड़ते हों। मणिजटित स्वर्णमय कुण्डलोंकी कान्ति इस प्रकार जगमग कर रही है, जैसे अपने मित्र (कमल) को छुड़ानेके लिये दो चञ्चल गतिवाले सूर्य उतर आये हों। घुँघराली अलकें तो ऐसी लगती हैं मानो भ्रमरोंका समूह एकत्र होकर युद्ध करना चाहता है।' सूरदासजी कहते हैं कि यह मुखकी कान्ति देखकर (जो कि देखने ही योग्य है) उसकी शोभाका वर्णन मैं नहीं कर पाता।

[२३४]

मुख-छवि कहा कहौं बनाइ।
निरखि निसि-पति बदन-सोभा, गयौ गगन दुराइ॥
अमृत अलि मनु पिवन आए, आइ रहे लुभाइ।
निकसि सर तैं मीन मानौ, लरत कीर छुराइ॥
कनक-कुंडल स्रवन विभ्रम कुमुद निसि सकुचाइ।
सूर हरि की निरखि सोभा कोटि काम लजाइ॥

इस मुखकी शोभाका क्या बनाकर (उपमा देकर) वर्णन करूँ। इसकी छटाको देखकर चन्द्रमा (लज्जासे) आकाशमें छिप गया है। (अलकें ऐसी लगती हैं मानो) भौंरोंका झुंड अमृत पीने आया था और आकर लुब्ध हो रहा है। (नेत्रोंके मध्यमें नासिका ऐसी है मानो) सरोवरसे निकलकर दो मछलियाँ लड़ रही थीं, एक तोता उन्हें अलग करने बीचमें आ बैठा है। कानोंमें सोनेके कुण्डलोंकी शोभाको देखकर रात्रिमें फूलनेवाले कुमुदके पुष्प भी संकुचित होते हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरकी शोभा देखकर करोड़ों कामदेव लज्जित हो रहे हैं।

[२३५]

हरि-मुख देखि हो नँद-नारि।
महरि! ऐसे सुभग सुत सौं, इतौ कोह निवारि॥

सरद मंजुल जलज लोचन लोल चितवनि दीन।
मनहुँ खेलत हैं परस्पर मकरध्वज द्वै मीन॥
ललित कन-संजुत कपोलनि लसत कज्जल-अंक।
मनहुँ राजत रजनि, पूरन कलापति सकलंक॥
बेगि बंधन छोरि, तन-मन वारि, लै हिय लाइ।
नवल स्याम किसोर ऊपर, सूर जन बलि जाइ॥

(गोपी कहती है–) 'नन्दरानी ! श्यामके मुखकी ओर तो देखो। व्रजरानी ! ऐसे मनोहर पुत्रपर इतना क्रोध करना छोड़ दो। शरत्कालीन (पूर्ण विकसित) सुन्दर कमलके समान इसके चञ्चल नेत्र इस प्रकार दीन (भयातुर) होकर देख रहे हैं, मानो कामदेवकी दो मछलियाँ परस्पर खेल रही हों। सुन्दर कपोलोंपर मक्खनके कणोंके साथ (आँसूके साथ नेत्रोंसे आये) काजलके धब्बे ऐसे शोभित हैं, मानो रात्रिमें अपनी कालिमाके साथ पूर्ण चन्द्रमा शोभित हो। झटपट बन्धन खोलकर, तन-मन इसपर न्यौछावर करके इसे हृदयसे लगा लो।' सूरदासजी कहते हैं कि नवलकिशोर श्यामसुन्दरपर यह सेवक बार-बार न्यौछावर होता है।

राग बिहागरौ

[२३६]

कहौ तौ माखन ल्यावैं घर तैं।
जा कारन तू छोरति नाहीं, लकुट न डारति कर तैं॥
सुनहु महरि ! ऐसी न बूझियै, सकुचि गयौ मुख डर तैं।
ज्यौं जलरुह ससि-रस्मि पाइ कै, फूलत नाहिं न सर तैं॥
ऊखल लाइ भुजा धरि बाँधी, मोहनि मूरति वर तैं।
सूर स्याम-लोचन जल बरषत जनु मुकुता हिमकर तैं॥

(गोपियाँ कहती हैं–) 'यशोदाजी ! जिसके लिये तुम (मोहनको) खोलती नहीं हो और हाथसे छड़ी नहीं रख रही हो, वह मक्खन कहो तो

हम अपने घरसे ला दें। व्रजरानी ! सुनो, ऐसा तुम्हें नहीं करना चाहिये; (देखो तो) इसका मुख भयसे (उसी प्रकार) कुम्हिला गया है, जैसे चन्द्रमाकी किरणें पड़नेसे कमल सरोवरमें प्रफुल्लित नहीं हो पाता। (हाय, हाय) इस श्रेष्ठ मोहिनी मूर्तिके हाथ ऊखलसे लगाकर तुमने बाँध दिये हैं !' सूरदासजी कहते हैं— श्यामसुन्दरके नेत्रोंसे इस प्रकार आँसूकी बूँदें टपक रही हैं, जैसे चन्द्रमासे मोती बरसते हों।

राग कल्यान

[२३७]

कहन लगीं अब बढ़ि-बढ़ि बात।
ढोटा मेरौ तुमहिं बँधायौ, तनकहि माखन खात॥
अब मोहि माखन देतिं मँगाए, मेरैं घर कछु नाहिं !
उरहन कहि-कहि साँझ-सवारैं, तुमहिं बँधायौ याहि॥
रिसही मैं मोकौं गहि दीन्हौ, अब लागीं पछितान।
सूरदास अब कहति जसोदा बूझ्यौ सब कौ ज्ञान॥

(यशोदाजीने गोपियोंको डाँटा—) 'अब तुम सब बढ़-बढ़कर बातें कहने लगी हो। तुम्हीं सबोंने तो तनिक-सा मक्खन खानेके कारण मेरे पुत्रको बँधवाया है। अब मुझे (अपने घरोंसे) मक्खन मँगाकर दे रही हो, जैसे मेरे घर कुछ है ही नहीं। बार-बार प्रातः-सायं (हर समय) उलाहना दे-देकर तुम्हीं (सबों) ने तो इसे बँधवाया है। क्रोधमें ही इसे पकड़कर तो मुझे दे दिया और अब पश्चात्ताप करने लगी हो।' सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजीने कहा— 'अब तुम सबकी समझदारी मैं समझ गयी।'

राग धनाश्री

[२३८]

कहा भयौ जौ घर कैं लरिका चोरी माखन खायौ।
अहो जसोदा ! कत त्रासति हौ, यहै कोखि कौ जायौ॥

बालक अजौं अजान न जानै केतिक दह्यौ लुटायौ।
तेरौ कहा गयौ ? गोरस को गोकुल अंत न पायौ॥
हा हा लकुट त्रास दिखरावति, आँगन पास बँधायौ।
रुदन करत दोउ नैन रचे हैं, मनहुँ कमल-कन छायौ॥
पौढि रहे धरनी पर तिरछै, बिलखि बदन मुरझायौ।
सूरदास-प्रभु रसिक-सिरोमनि, हँसि करि कंठ लगायौ॥

(कोई गोपी कहती है—) 'क्या हुआ जो घरके लड़केने चोरीसे मक्खन खा लिया ? अरी यशोदाजी ! इसे क्यों भयभीत करती हो, (आखिर) यह तुम्हारी इसी कोख (पेट) से (तो) उत्पन्न हुआ है। अभी यह अनजान बालक है; यह समझता नहीं कि कितनी दही मैंने ढुलका दिया। किंतु तुम्हारी हानि क्या हुई ? तुम्हारे पास तो इतना गोरस है कि पूरा गोकुल उसका अन्त (थाह) नहीं पा सकता। हाय, हाय, छड़ी लेकर तुम इसे भय दिखलाती हो और (खुले) आँगनमें पाशसे बाँध रखा है ! रोनेसे इसके दोनों नेत्र ऐसे हो गये हैं मानो कमलदलपर जलकण छिटके हों। यह पृथ्वीपर तिरछे होकर लेट रहा है, रोते-रोते इसका मुख मलिन पड़ गया है।' सूरदासके स्वामी तो रसिक-शिरोमणि हैं, (माताने रस्सी खोलकर) हँसकर उन्हें गले लगा लिया।

[२३९]

खित दै चितै तनय-मुख ओर।

सकुचत सीत-भीत जलरुह ज्यौं, तुव कर लकुट निरखि सखि घोर॥
आनन ललित स्रवत जल सोभित, अरुन चपल लोचन की कोर।
कमल-नाल तैं मृदुल ललित भुज ऊखल बाँधे दाम कठोर॥
लघु अपराध देखि बहु सोचति, निरदय हृदय बज्रसम तोर।
सूर कहा सुत पर इतनी रिस, कहि इतनै कछु माखन-चोर॥

सूरदासजी कहते हैं– (गोपी कह रही है–) 'तनिक मन लगाकर (ध्यानसे) पुत्रके मुखकी ओर तो देखो। सखी ! तुम्हारे हाथमें भयानक छड़ी देखकर यह भयसे इस प्रकार संकुचित हो रहा है जैसे पालेसे कमल संकुचित हो रहा हो। सुन्दर मुखपर अरुण एवं चञ्चल नेत्रोंके कोनोंसे टपकते आँसू शोभित हो रहे हैं। कमल-नालसे भी कोमल इसकी सुन्दर भुजाओंको तुमने कठोर रस्सीसे ऊखलके साथ बाँध दिया है। इसके छोटे-से अपराधको देखकर मुझे बहुत चिन्ता हो रही है; किंतु तुम तो निर्दय हो, तुम्हारा हृदय वज्रके समान कठोर है। अरे, पुत्रपर इतना क्रोध भी क्या, बताओ तो इतना कितना अधिक मक्खन इसने चुरा लिया ?'

राग बिलावल

[२४०]

जसुदा ! देखि सुत की ओर।
बाल बैस रसाल पर रिस, इती कहा कठोर॥
बार-बार निहारि तुव तन, नमित-मुख दधि-चोर।
तरनि-किरनहिं परसि मानौ, कुमुद सकुचत भोर॥
त्रास तैं अति चपल गोलक, सजल सोभित छोर।
मीन मानौ बेधि बंसी, करत जल झकझोर॥
देत छबि अति गिरत उर पर, अंबु-कन कै जोर।
ललित हिय जनु मुक्त-माला, गिरति टूटैं डोर॥
नंद-नंदन जगत-बंदन करत आँसू कोर।
दास सूरज मोहि सुख-हित निरखि नंदकिसोर॥

(गोपी कहती है–) 'यशोदाजी ! (तनिक) पुत्रकी ओर (तो) देखो। इस रसमयी (खेलने योग्य) अवस्थाके बालकपर इतना कठोर क्रोध क्या (उचित है) ? यह दही-चोर, बार-बार तुम्हारी ओर देखकर मुख झुका लेता है, मानो प्रातःकाल सूर्यकी किरणोंका स्पर्श होनेसे कुमुदिनी संकुचित हो गयी हो।

भयके कारण नेत्र अत्यन्त चञ्चल हो रहे हैं और आँसूकी बूँदोंसे युक्त उनके किनारे शोभित हो रहे हैं, मानो (दो) मछलियोंको बंसीमें फँसाकर जलमें उन्हें हिलाया जा रहा हो। वक्षःस्थलपर वेगपूर्वक गिरती आँसूकी बूँदें अत्यन्त शोभा दे रही हैं, मानो सुन्दर हृदयपर (धारण की हुई) मोतियोंकी माला ही तागेके टूट जानेसे गिर रही हो। जगत्के वन्दनीय श्रीनन्दनन्दन आज आँखोंके कोनोंमें आँसू भर रहे हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि—'मुझे आनन्द देनेके लिये नन्दलाल! अपने इस दासकी ओर (एक बार) देख तो लो।'

राग धनाश्री

[२४१]

चितै धौं कमल-नैन की ओर।
कोटि चंद वारौं मुख-छबि पर, ए हैं साहु कै चोर॥
उज्ज्वल अरुन असित दीसति हैं, दुहु नैननि की कोर।
मानौ सुधा-पान कैं कारन, बैठे निकट चकोर॥
कतहिं रिसाति जसोदा इन सौं, कौन ज्ञान है तोर।
सूर स्याम बालक मनमोहन, नाहिन तरुन किसोर॥

सूरदासजी कहते हैं—(कोई गोपी समझा रही है—) 'कमल-लोचनकी ओर देखो तो! ये चाहे साहु (चोरी न करनेवाले) हों या चोर हों, इनके मुखकी शोभापर करोड़ों चन्द्रोंको न्यौछावर कर दूँ। इनके दोनों नेत्रोंके किनारे उज्ज्वल, श्याम तथा अरुण दीख पड़ रहे हैं, मानो चकोर (इस मुखचन्द्रका) अमृत पीनेके लिये पास बैठे हों। यशोदाजी! इनपर क्यों क्रोध करती हो, यह तुम्हारी कौन-सी समझदारी है? अरे, श्यामसुन्दर अभी मनमोहन बालक हैं, कोई तरुण या किशोर तो हैं नहीं।'

राग नटनारायनी

[२४२]

देखि री देखि हरि बिलखात।
अजिर लोटत राखि जसुमति, धूरि-धूसर गात॥

मूँदि मुख छिन सुसुकि रोवत, छिनक मौन रहात।
कमल मधि अलि उड़त सकुचत, पच्छ दल-आघात॥
चपल दृग, पल भरे अँसुवा, कछुक ढरि-ढरि जात।
अलप जल पर सीप द्वै लखि, मीन मनु अकुलात॥
लकुट कैं डर ताकि तोहि तब पीत पट लपटात।
सूर-प्रभु पर वारियै ज्यौं, भलेहिं माखन खात॥

(गोपी कह रही है—) 'देखो सखी, देखो तो श्यामसुन्दर क्रन्दन कर रहे हैं। यशोदाजी! इन्हें आँगनमें लोटनेसे बचाओ। (देखो न)! इनका शरीर धूलिसे मटमैला हो रहा है। कभी कुछ क्षण मुख ढँककर सिसकारी लेकर रोते हैं, कभी क्षणभर चुप हो जाते हैं। इनकी ऐसी शोभा हो रही है मानो कमलपरसे भौंरे उड़ना चाहते हों किंतु पंखकी चोट कहीं दलोंको न लगे, इससे संकुचित हो रहे हैं। नेत्र चञ्चल हैं, पलकें आँसूसे भरी हैं, जिनकी कुछ बूँदें बार-बार ढुलक पड़ती हैं, मानो थोड़े जलके ऊपर दो सीप देखकर मछलियाँ व्याकुल हो रही हैं। जब छड़ीके भयसे तुम्हारी ओर देखते हैं, तब पीताम्बरमें लिपट जाते (संकुचित हो जाते) हैं।' सूरदासजी कहते हैं—'मेरे इन स्वामीपर तो प्राण न्यौछावर कर देना चाहिये। ये (मक्खन खाते हैं तो) भले ही खायँ (इनपर रोष करना तो अनुचित ही है)।'

राग सारंग

[२४३]

कब के बाँधे ऊखल दाम।
कमल-नैन बाहिर करि राखे, तू बैठी सुख धाम॥
है निरदई, दया कछु नाहीं, लागि रही गृह-काम।
देखि छुधा तैं मुख कुम्हिलानौ, अति कोमल तन स्याम॥
छोरहु बेगि भई बड़ी बिरियाँ, बीति गए जुग जाम।
तेरैं त्रास निकट नहिं आवत बोलि सकत नहिं राम॥

जन कारन भुज आपु बँधाए, बचन कियौ रिषि-ताम।
ताही दिन तैं प्रगट सूर-प्रभु यह दामोदर नाम॥

(गोपी कहती है—) 'कबसे इस कमल-लोचनको रस्सीमें ऊखलके साथ बाँधकर तुमने बाहर (आँगनमें) छोड़ दिया है और स्वयं सुख-पूर्वक घरमें बैठी हो ! तुम बड़ी निर्दय हो, (तुममें) तनिक भी दया नहीं है; तभी तो (मोहनको बाँधकर) घरके काममें लगी हो। देखो तो श्यामसुन्दरका शरीर अत्यन्त कोमल है और भूखसे इसका मुख मलिन हो गया है। झटपट खोल दो, बड़ी देर हो गयी, दो पहर बीत गये; तुम्हारे भयसे बलराम भी पास नहीं आते, न कुछ बोल ही सकते हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे प्रभुने अपने भक्तों (यमलार्जुन) के लिये अपने हाथ बँधवाये हैं और देवर्षि नारदके क्रोधमें कहे वचन (शाप) को सत्य किया (उस शापका उद्धार करना सोचा) है ! इसी दिनसे तो इनका दामोदर यह नाम प्रसिद्ध हुआ है।

राग गौरी

[२४४]

वारौं हौं वे कर जिन हरि कौ बदन छुयौ
वारौं रसना सो जिहिं बोल्यौ है तुकारि।
वारौं ऐसी रिस जो करति सिसु बारे पर
ऐसौ सुत कौन पायौ मोहन मुरारि॥
ऐसी निरमोही माई महरि जसोदा भई
बाँध्यौ है गोपाल लाल बाहँनि पसारि।
कुलिसहु तैं कठिन छतिया चितै री तेरी
अजहूँ द्रवति जो न देखति दुखारि॥
कौन जानै कौन पुन्य प्रगटे हैं तेरैं आनि
जाकौं दरसन काज जपै मुख-चारि।
केतिक गोरस-हानि जाकौ सूर तोरै कानि
डारौं तन स्याम रोम-रोम पर वारि॥

सूरदासजी कहते हैं—(कोई वृद्धा गोपी कह रही है—) 'उन हाथोंको न्यौछावर कर दूँ, जिन्होंने श्यामके शरीरका स्पर्श किया है (उसे मारा है)! उस जीभको न्यौछावर कर दूँ, जो 'तू' कहकर (मोहनका अपमान करके) बोली है ! ऐसे क्रोधको न्यौछावर कर दूँ, जो इतने छोटे शिशुपर किया जाता है ! भला, ऐसा मोहन मुरारिके समान पुत्र पाया किसने है ? सखी, व्रजरानी यशोदा ऐसी निर्मम हो गयी कि गोपाललालकी भुजाएँ फैलाकर उसे बाँध दिया है ! अरी देख तो, तेरा हृदय तो वज्रसे भी कठोर है, जो मोहनको दुखी देखकर अब भी नहीं पिघलता । जिसका दर्शन पानेके लिये चतुर्मुख ब्रह्मा सदा जप (स्तुति) करते रहते हैं, पता नहीं किस पुण्यसे तेरे यहाँ आकर वे प्रकट हुए हैं ! अरी, गोरसकी कितनी हानि हो गयी, जिसके लिये संकोच तोड़ रही है ! श्यामसुन्दरके तो रोम-रोमपर मैं शरीर न्यौछावर कर दूँ (दूध-दहीकी तो बात ही क्या है) ।'

राग सोरठ

[२४५]

(जसोदा) तेरौ भलौ हियौ है माई !
कमल-नैन माखन कैं कारन, बाँधे ऊखल ल्याई ॥
जो संपदा देव-मुनि-दुर्लभ, सपनेहुँ देइ न दिखाई ।
याही तैं तू गर्ब भुलानी, घर बैठे निधि पाई ॥
जो मूरति जल-थल मैं व्यापक, निगम न खोजत पाई ।
सो मूरति तैं अपनैं आँगन, चुटकी दै जु नचाई ॥
तब काहू सुत रोवत देखति, दौरि लेति हिय लाई ।
अब अपने घर के लरिका सौं इती करति निठुराई !
बारंबार सजल लोचन करि चितवत कुँवर कन्हाई ।
कहा करौं, बलि जाउँ, छोरि तू, तेरी सौंह दिवाई ॥
सुर-पालक, असुरनि उर सालक, त्रिभुवन जाहि डराई ।
सूरदास-प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाई ॥

(गोपी कहती है—) 'सखी यशोदाजी ! तुम्हारा अच्छा (कठोर) हृदय है, जो मक्खनके लिये लाकर कमल-लोचनको तुमने ऊखलसे बाँध दिया। जो सम्पत्ति देवता तथा मुनियोंको भी दुर्लभ है, स्वप्नमें भी उन्हें दिखलायी नहीं पड़ती, वही महान् निधि घर बैठे तुमने पा ली ! इसीसे गर्वमें (अपने आपको) भूल गयी हो। जो मूर्ति जल-स्थलमें सर्वत्र व्यापक है, वेद ढूँढ़कर भी जिसे नहीं पा सके, उसी मूर्ति (साकार ब्रह्म) को तुमने अपने आँगनमें चुटकी बजाकर नचाया है ! तब तो (जब पुत्र नहीं था) किसीके भी लड़केको रोते देखकर दौड़कर हृदयसे लगा लेती थीं और अब अपने घरके बालकसे ही इतनी निष्ठुरता कर रही हो ! कुँवर कन्हाई बार-बार नेत्रोंमें आँसू भरकर देखता है ! क्या करूँ, मैं बलिहारी जाती हूँ, तुम्हारी ही शपथ तुम्हें दिलाती हूँ कि इसे तुम छोड़ दो।' सूरदासजी कहते हैं कि जो देवताओंके भी पालनकर्ता तथा असुरोंके हृदयको पीड़ा देनेवाले हैं—(यही नहीं) त्रिभुवन जिनसे डरता है, मेरे उन प्रभुकी यह लीला है ! (इसीसे तो) वेद 'नेति-नेति' (इनका अन्त नहीं है, नहीं है) कहकर नित्य (इनका) गान करता है।

राग केदारौ

[२४६]

देखि री नंद-नंदन ओर।
त्रास तैं तन त्रसित भए हरि, तकत आनन तोर॥
बार बार डरात तोकौं, बरन बदनहिं थोर।
मुकुर-मुख, दोउ नैन ढारत, छनहिं-छन छबि-छोर॥
सजल चपल कनीनिका पल अरुन ऐसे डोर (ल)।
रस भरे अंबुजनि भीतर भ्रमत मानौ भौंर॥
लकुट कैं डर देखि जैसे भए स्रोनित और।
लाइ उरहिं, बहाइ रिस जिय, तजहु प्रकृति कठोर॥
कछुक करुना करि जसोदा, करति निपट निहोर।
सूर स्याम त्रिलोक की निधि, भलैहिं माखन-चोर॥

(गोपी कहती है—) 'सखी (यशोदाजी) ! नन्दनन्दनकी ओर देखो ! भयसे कम्पित-शरीर होकर श्यामसुन्दर तुम्हारे मुखकी ओर देख रहे हैं । बार-बार तुम्हें डर रहे हैं, मुखकी कान्ति घट गयी है, क्षण-क्षण-पर दोनों नेत्रोंसे दर्पणके समान निर्मल कपोलोंपर अश्रु ढुलका रहे हैं ! ये तो शोभाकी सीमा हैं । अश्रुभरे पलक हैं तथा चञ्चल पुतलियोंपर ऐसे लाल डोरे हैं, मानो रसभरे कमलोंके भीतर भौंरें घूम रहे हों ! छड़ीके भयसे ये नेत्र ऐसे दीखते हैं जैसे और भी लाल हो उठे हैं । इन्हें हृदयसे लगा लो, चित्तसे क्रोध दूर कर दो और इस कठोर स्वभावको छोड़ दो । यशोदाजी; मैं अत्यन्त निहोरा (अनुनय) करती हूँ, कुछ तो दया करो ।' सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दर भले माखन-चोर हों, परंतु वे त्रिलोकी-की निधि हैं ।

राग धनाश्री

[२४७]

तब तैं बाँधे ऊखल आनि ।
बालमुकुंदहि कत तरसावति, अति कोमल अँग जानि ॥
प्रातकाल तैं बाँधे मोहन, तरनि चढ़्यौ मधि आनि ।
कुम्हिलानौ मुख-चंद दिखावति, देखौं धौं नँदरानि ॥
तेरे त्रास तैं कोउ न छोरत, अब छोरौ तुम आनि ।
कमल-नैन बाँधेही छाँड़े, तू बैठी मनमानि ॥
जसुमति के मन के सुख कारन आपु बँधावत पानि ।
जमलार्जुन कौं मुक्त करन हित, सूर स्याम जिय ठानि ॥

'तभीसे लाकर तुमने कन्हैयाको ऊखलमें बाँध दिया है । यह जानकर (भी) कि बाल-मुकुन्दका शरीर अत्यन्त कोमल है, इन्हें क्यों तरसाती (पीड़ा देती) हो ? मोहनको तुमने सबेरेसे ही बाँध रखा है और अब तो सूर्य मध्य आकाश-में आ चढ़ा (दोपहर हो गया) है ।' (इस प्रकार गोपी) मलिन हुए

चन्द्रमुखको दिखलाती हुई कहती है कि—'तनिक देखो तो नन्दरानी! तुम्हारे भयसे कोई इन्हें खोलता नहीं, अब तुम्हीं आकर खोल दो। कमललोचनको बँधा ही छोड़कर तुम मनमाने ढंगसे बैठी हो।' सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दरने यमलार्जुनको मुक्त करनेका मनमें निश्चय करके यशोदाजीके चित्तको सुख देनेके लिये स्वयं (अपने) हाथ बँधवा लिये हैं! (नहीं तो इन्हें कोई कैसे बाँध सकता है।)

राग नट

[२४८]

कान्ह सौं आवत क्यौंऽब रिसात।
लै-लै लकुट कठिन कर अपनैं परसत कोमल गात॥
देखत आँसू गिरत नैन तैं यौं सोभित ढरि जात।
मुक्ता मनौ चुगत खग खंजन, चोंच-पुटी न समात॥
डरनि लोल डोलत हैं इहि बिधि, निरखि भ्रुवनि सुनि बात।
मानौ सूर सकात सरासन, उड़िबे कौं अकुलात॥

सूरदासजी कहते हैं—कन्हैयापर इतना रोष करते (मैया) तुमसे बनता कैसे है, जो अपने कठोर हाथमें बार-बार छड़ी लेकर इसके कोमल शरीरका स्पर्श कर रही हो (इसे मारती हो)! देखती हो इसकी आँखोंसे गिरते हुए आँसू ढुलकते हुए ऐसे शोभित होते हैं, मानो खंजन पक्षी मोती चुग रहे हैं, परंतु वे उनके चञ्चु-पुटमें समाते नहीं (बार-बार गिर पड़ते हैं)। मेरी बात सुनो! भौंहोंकी ओर देखो! भयसे चञ्चल हुए ये इस प्रकार हिल रहे हैं मानो उड़ जानेको व्याकुल हो रहे हैं, किंतु (भ्रूरूपी) धनुषको देखकर शङ्कित हो रहे हैं।

राग रामकली

[२४९]

जसुदा! यह न बूझि कौ काम।
कमल-नैन की भुजा देखि धौं, तैं बाँधे हैं दाम॥

पुत्रहु तैं प्यारौ कोउ है री, कुल-दीपक मनिधाम।
हरि पर वारि डारि सब तन, मन, धन गोरस अरु ग्राम ॥
देखियत कमल-बदन कुम्हिलानौ, तू निरमोही बाम।
बैठी है मंदिर सुख छहियाँ, सुत दुख पावत घाम ॥
येई हैं सब ब्रज के जीवन सुख प्रात लिएँ नाम।
सूरदास-प्रभु भक्तनि कैं बस यह ठानी घनस्याम ॥

(गोपी कहती है—) 'यशोदाजी ! यह समझदारीका काम नहीं है। देखो तो, तुमने रस्सीसे कमललोचन श्यामके हाथ बाँध दिये हैं। अरी ! कुलके दीपक (कुलको नित्य उज्ज्वल करनेवाले) तथा घरको मणिकी भाँति प्रकाशित करनेवाले पुत्रसे भी बढ़कर कोई प्यारा है ? श्यामसुन्दरपर तन, मन, धन, गोरस और गाँव—सब कुछ न्यौछावर कर दे। मोहनका कमल-मुख मलिन हुआ दिखायी पड़ता है, किंतु तू बड़ी निर्मम स्त्री है, जो स्वयं तो भवनकी छायामें सुख-पूर्वक बैठी है और पुत्र धूपमें दुःख पा रहा है।' सूरदासजी कहते हैं कि ये ही समस्त व्रजके जीवन हैं, प्रातःकाल ही इनका नाम लेनेसे आनन्द होता है। मेरे स्वामी घनश्यामने भक्तोंके वशीभूत होकर ही यह लीला की है।

राग धनाश्री

[२५०]

ऐसी रिस तोकौं नँदरानी।
बुद्धि तेरैं जिय उपजी बड़ी, बैस अब भई सयानी ॥
ढोटा एक भयौ कैसैहूँ करि, कौन-कौन करबर बिधि भानी।
क्रम-क्रम करि अब लौं उबर्‌यौ है, ताकौं मारि पितर दै पानी !
को निरदई रहै तेरैं घर, को तेरैं सँग बैठै आनी।
सुनहु सूर कहि-कहि पचि हारीं, जुवती चलीं घरनि बिरुझानी ॥

(गोपियाँ कहती हैं—) 'नन्दरानी ! तुममें इतना क्रोध है ? कब तुम्हारे हृदयमें बुद्धि आवेगी ? तुम्हारी अवस्था बड़ी है (तुम बूढ़ी हो चली हो)

और वैसे भी तुम समझदार हो। पता नहीं कौन-कौन-से संकट विधाताने काटे हैं और किसी प्रकार तुम्हारे एक पुत्र हुआ। क्रमशः (अनेक विपत्तियोंसे) वह अबतक बचता रहा, अब उसीको मारकर अपने पितरोंको जल दे लो। कौन इतनी निर्दय है जो तुम्हारे घर रहे और कौन तुम्हारे पास आकर बैठे।' सूरदासजी कहते हैं कि गोपियाँ कह-कहकर, प्रयत्न करके जब थक गयीं (और यशोदाजीने श्यामको नहीं छोड़ा) तब वे अप्रसन्न होकर अपने घरोंको चली गयीं।

राग सारंग

[२५१]

हलधर सौं कहि ग्वालि सुनायौ।
प्रातहि तैं तुम्हरौ लघु भैया, जसुमति ऊखल बाँधि लगायौ॥
काहू के लरिकहि हरि मार्‌यौ, भोरहिं आनि तिनहिं गुहरायौ।
तबही तैं बाँधे हरि बैठे, सो हम तुमकौं आनि जनायौ॥
हम बरजी बरज्यौ नहिं मानति, सुनतहिं बल आतुर ह्वै धायौ।
सूर स्याम बैठे ऊखल लगि, माता उर-तनु अतिहिं त्रसायौ॥

(किसी) गोपीने श्रीबलरामसे यह बात कह सुनायी कि 'सबेरेसे ही यशोदाजीने तुम्हारे छोटे भाईको ऊखलसे लगाकर बाँध रखा है। श्यामने किसीके लड़केको मारा था, सबेरे ही आकर उसने पुकार की, तभीसे मोहन बँधे बैठे हैं—यह बात हमने आकर तुम्हें बता दी। हमने तो बहुत रोका, किंतु (व्रजरानी) हमारा रोकना मानती नहीं हैं।' यह सुनते ही बलरामजी आतुरतापूर्वक दौड़ पड़े। सूरदासजी कहते हैं (उन्होंने देखा) कि श्यामसुन्दर ऊखलसे सटे बैठे हैं, माताने उनके शरीरको अत्यन्त पीड़ित तथा हृदयको बहुत भयभीत कर दिया है।

[२५२]

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए।
देखि स्याम ऊखल सौं बाँधे, तबहीं दोउ लोचन भरि आए॥

मैं बरज्यौ कै बार कन्हैया, भली करी दोउ हाथ बँधाए।
अजहूँ छाँड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आए॥
स्यामहि छोरि मोहि बाँधै बरु, निकसत सगुन भले नहिं पाए।
मेरे प्रान जिवन-धन कान्हा, तिन के भुज मोहि बँधे दिखाए॥
माता सौं कहा करौं ढिठाई, सो सरूप कहि नाम सुनाए।
सूरदास तब कहति जसोदा, दोउ भैया तुम इक-मत पाए॥

(गोपीकी) यह बात सुनते ही बलराम वहाँ दौड़े आये। ज्यों ही उन्होंने श्यामको ऊखलसे बँधा देखा, त्यों ही उनके दोनों नेत्र भर आये। (वे बोले—) 'कन्हाई, मैंने तुम्हें कितनी बार (ऊधम करनेसे) रोका था; अच्छा किया दोनों हाथ बँधवा लिये (मैयाने तुम्हारे हाथ बाँधकर ठीक ही किया)। अब भी ऊधम करना छोड़ोगे ?' (यह कहकर दोनों हाथ जोड़े हुए माता के पास आये (और बोले—) 'मैया! श्यामसुन्दरको छोड़ दे, बल्कि (उसके बदले) मुझे बाँध दे; (घरसे) निकलते ही मुझे अच्छे शकुन नहीं हुए थे। (इसका फल प्रत्यक्ष हुआ।) कन्हाई मेरा प्राण है, जीवन-धन है। उसीके हाथ बँधे हुए मुझे दीखे (देखने पड़े)। मातासे मैं क्या धृष्टता करूँ।' यह कहकर (श्रीकृष्णचन्द्रका) वह (परमब्रह्म) स्वरूप तथा नाम बताया। सूरदासजी कहते हैं कि तब यशोदाजी कहने लगीं—'तुम दोनों भाइयोंको मैंने एक ही मतका (एक समान ऊधमी) पाया है।'

[२५३]

एतौ कियौ कहा री मैया ?
कौन काज धन दूध दही यह, छोभ करायौ कन्हैया॥
आईं सिखवन भवन पराऐं स्यानि ग्वालि बौरैया।
दिन-दिन देन उरहनौ आवतिं ढुकि-ढुकि करतिं लरैया॥
सूधी प्रीति न जसुदा जानै, स्याम सनेही ग्वैयाँ।
सूर स्यामसुंदरहिं लगानी, वह जानै बल-भैया॥

(श्रीबलरामजी कहते हैं—)'मैया ! कन्हाईने ऐसा क्या (भारी अपराध) किया था ? यह दूध-दहीकी सम्पत्ति किस काम आयेगी, जिसके लिये तुमने श्यामको दुखी किया ?' (यशोदाजी बोलीं—)'ये पागल हुई गोपियाँ बड़ी समझदार बनकर दूसरेके घर आज शिक्षा देने आयी थीं; किंतु प्रतिदिन ये ही उलाहना देने आती हैं और जमकर लड़ाई करती हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि यशोदाजी तो सीधी हैं, वे (गोपियोंके) प्रेम-भावको समझतीं नहीं; किंतु श्यामसुन्दर तो प्रेम करनेवालेके साथी हैं और इन गोपियोंकी प्रीति भी श्यामसे लगी है, यह बात बलरामजीके भाई श्रीकृष्ण ही जानते हैं।

राग केदारौ

[२५४]

काहे कौं कलह नाध्यौ, दारुन दाँवरि बाँध्यौ,
कठिन लकुट लै तैं, त्रास्यौ मेरैं भैया।
नाहीं कसकत मन, निरखि कोमल तन,
तनिक-से दधि काज, भली री तू मैया॥
हौं तौ न भयौ री घर, देखत्यौ तेरी यौं अर,
फोरतौ बासन सब, जानति बलैया।
सूरदास हित हरि, लोचन आए हैं भरि,
बलहू कौं बल जाकौ सोई री कन्हैया॥

(श्रीबलरामजी कहते हैं—)'मैया ! तूने यह झगड़ा क्यों खड़ा किया। मेरे भाईको तुमने दुःखदायिनी रस्सीसे बाँध दिया है और कठोर छड़ी लेकर भयभीत कर दिया है। तू अच्छी मैया है, थोड़े-से दहीके लिये यह सब करते हुए इसके कोमल शरीरको देखकर तेरे मनमें पीड़ा नहीं होती ? अरी मैया ! मैं घर नहीं था, होता तो तेरा यह हठ देख लेता, तेरे सब बर्तन फोड़ देता, तब तू इस बलरामको जानती।' सूरदासजी कहते हैं कि मोहनके प्रेमसे

दाऊके नेत्र भर आये हैं। बलरामजीका भी जो बल है, वही तो यह कन्हाई (दाऊका सर्वस्व) है।

राग सोरठ

[२५५]

काहे कौं जसोदा मैया, त्रास्यौ तैं बारौ कन्हैया,
मोहन हमारौ भैया, केतौ दधि पियतौ।
हौं तौ न भयौ री घर, साँटी दीनी सर-सर,
बाँध्यौ कर जेंवरिनि, कैसैं देखि जियतौ॥
गोपाल सबनि प्यारौ, ताकौं तैं कीन्हौ प्रहारौ,
जाकौ है मोह्रू कौं गारौ, अजगुत कियतौ।
और होतौ कोऊ, बिन जननी जानतौ सोऊ,
कैसैं जाइ पावतौ, जौ आँगुरिनि छियतौ॥
ठाढ़ौ बाँध्यौ बलबीर, नैननि गिरत नीर,
हरि जू तैं प्यारौ तोकौं, दूध-दही-घियतौ।
सूर स्याम गिरिधर, धराधर हलधर,
यह छबि सदा थिर, रहौ मेरैं जियतौ॥

(श्रीबलरामजी कहते जाते हैं—) 'यशोदा मैया! बालक कन्हाईको तूने (यह) त्रास क्यों दी? मेरे इस मनमोहन भाईने कितना दही पी लिया? मैं तो घर नहीं था, तूने इसे सटासट छड़ीसे मार दिया और रस्सीसे इसके हाथ बाँध दिये—यह देखकर मैं कैसे जीवित रहता? यह गोपाल तो सबका प्यारा है, जिसका मुझे भी गर्व है, तूने उसीको पीटा, यह कितनी अनुचित बात है! माताको छोड़कर कोई दूसरा होता तो उसे भी पता लग जाता, यदि अँगुलीसे भी वह (श्यामको) छू लेता तो जा कैसे पाता। मेरे भाईको तूने कसकर बाँध दिया है, इसके नेत्रोंसे आँसू झर रहे हैं; श्यामसुन्दरसे भी तुझे दूध, दही और मक्खन

प्यारा है ?' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर गिरिधर हैं और बलरामजी पृथ्वीको धारण करनेवाले (साक्षात् शेष) हैं, इन दोनों भाइयोंकी यह छबि मेरे हृदयमें सदा स्थिर बसी रहे।

राग बिलावल

[२५६]

जसुदा तोहिं बाँधि क्यौं आयौ।
कसक्यौ नाहिं नैकु मन तेरौ, यहै कोखि कौ जायौ॥
सिव-बिरंचि महिमा नहिं जानत, सो गाइनि सँग धायौ।
तातैं तू पहचानति नाहीं, कौन पुन्य तैं पायौ!
कहा भयौ जो घर कैं लरिका, चोरी माखन खायौ?
इतनी कहि उकसारत बाहैं, रोष सहित बल धायौ॥
अपनैं कर सब बंधन छोरे, प्रेम सहित उर लायौ।
सूर सुबचन मनोहर कहि-कहि अनुज-सूल बिसरायौ॥

(श्रीबलरामजी कहते हैं—)'यशोदाजी! तुमसे (कन्हाई) बाँधा कैसे गया? तुम्हारे चित्तमें तनिक भी पीड़ा नहीं हुई? यह तुम्हारी इसी कोखसे तो उत्पन्न हुआ है। जिसका माहात्म्य शंकर और ब्रह्माजी भी नहीं जानते, (वही तुम्हारे प्रेमवश) यहाँ गायोंके साथ दौड़ता है, इसलिये तुम इसे पहचानती नहीं हो, पता नहीं किस पुण्यसे तुमने इसे पाया है। हुआ क्या जो घरके लड़केने चोरीसे मक्खन खा लिया!' इतनी बात कहकर अपनी बाँहें उभारते हुए बलराम क्रोधपूर्वक दौड़ पड़े। अपने हाथों उन्होंने सब बन्धन खोल दिये और प्रेमसे (छोटे भाईको) हृदयसे लगा लिया। सूरदासजी कहते हैं कि सुन्दर मनोहर बातें कह-कहकर अपने छोटे भाईकी पीड़ा उन्होंने भुलवा दी।

राग सोरठ

[२५७]

काहे कौं हरि इतनौ त्रास्यौ।
सुनि री मैया, मेरैं भैया कितनौ गोरस नास्यौ॥

जब रजु सौं कर गाढ़ैं बाँधे, छर-छर मारी साँटी।
सूनैं घर बाबा नँद नाहीं, ऐसैं करि हरि डाँटी॥
और नैकु छवै देखै स्यामहि, ताकौ करौं निपात।
तू जो करै बात सोइ साँची, कहा कहौं तोहि मात॥
ठाढ़े बदत बात सब हलधर, माखन प्यारौ तोहि।
ब्रज-प्यारौ, जाकौ मोहि गारौ, छोरत काहे न ओहि॥
काकौ ब्रज, माखन-दधि काकौ, बाँधे जकरि कन्हाई।
सुनत सूर हलधर की बानी जननी सैन बताई॥

(श्रीबलरामजी कहते हैं—) 'श्यामसुन्दरको तूने इतना त्रस्त क्यों कर दिया ? अरी मैया ! सुन, मेरे भाईने (अन्ततः) कितना गोरस नष्ट किया था जिसके कारण तूने रस्सीसे इसके हाथ कसकर बाँध दिये और सटासट छड़ी मार दी ? सूने घरमें, जब नन्दबाबा नहीं थे, तभी तू इस प्रकार मोहनको डाँट सकी। कोई दूसरा श्यामको तनिक छूकर तो देखे, उसे मैं मार ही डालूँ पर तुझे क्या कहूँ। तू माता है इसलिये तू जो कुछ करे वही बात सच्ची (ठीक) है (तुझपर मेरा कोई वश नहीं)।' खड़े-खड़े बलराम ये सब बातें कह रहे हैं—'तुझे मक्खन प्यारा है! जो पूरे व्रजका प्यारा है, जिसपर मुझे भी गर्व है, उसे तू छोड़ती क्यों नहीं? तूने कन्हाईको जकड़कर बाँध रखा है, पर यह व्रज किसका है ! मक्खन और दही किसका है !' (श्यामका ही तो है।) सूरदासजी कहते हैं कि बलरामजीकी बात सुनकर माताने उन्हें (अलग बात करनेका) संकेत किया।

राग सारंग

[२५८]

सुनहु बात मेरी बलराम !
करन देहु इन की मोहि पूजा, चोरी प्रगटत नाम॥

तुमही कहौ, कमी काहे की, नव-निधि मेरैं धाम।
मैं बरजति, सुत जाहु कहूँ जनि, कहि हारी दिन-जाम॥
तुमहु मोहि अपराध लगायौ, माखन प्यारौ स्याम।
सुनि मैया, तोहि छाँड़ि कहौं किहि, को राखै तेरैं ताम॥
तेरी सौं, उरहन लै आवतिं झूठहिं ब्रज की बाम।
सूर स्याम अतिहीं अकुलाने, कब के बाँधे दाम॥

(माता कहती हैं—) 'बलराम! मेरी बात सुनो। मुझे इनकी पूजा कर लेने दो; क्योंकि अब ये चोरीमें अपना नाम प्रसिद्ध करने लगे हैं। मेरे घरमें नवों निधियाँ हैं; तुम्हीं बताओ, यहाँ किसका अभाव है ? मैं मना करती हूँ—पुत्र! कहीं मत जाओ ! किंतु रात-दिन कहते-कहते हार गयी। तुम भी मुझे ही दोष लगाते हो कि मुझे श्यामसे भी मक्खन प्यारा है!' (बलरामजी कहते हैं—) 'मैया सुन ! तुझे छोड़कर और किसको कहूँ, तेरे क्रोध करनेपर दूसरा कौन रक्षा कर सकता है ? तेरी शपथ ! ये व्रजकी स्त्रियाँ झूठमूठ ही उलाहना लेकर आती हैं।' सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दर कबसे रस्सीमें बंधे हैं, अब तो वे अत्यन्त व्याकुल हो गये हैं।

[२५९]

कहा करौं हरि बहुत खिझाई।
सहि न सकी, रिसहीं रिस भरि गई, बहुतै ढीठ कन्हाई॥
मेरौ कह्यौ नैकु नहिं मानत, करत आपनी टेक।
भोर होत उरहन लै आवतिं, ब्रज की बधू अनेक॥
फिरत जहाँ-तहँ दुंद मचावत, घर न रहत छन एक।
सूर स्याम त्रिभुवन कौ कर्ता, जसुमति गहि निज टेक॥

(माता कहती हैं—) क्या करूँ, श्यामने मुझे बहुत तंग कर लिया था। मैं सहन नहीं कर सकी, बार-बार क्रोध आनेसे मैं आवेशमें आ

गयी,यह कन्हैया बहुत ही ढीठ (हो गया) है। मेरा कहना यह तनिक भी नहीं मानता, अपनी हठ ही करता है और व्रजकी अनेकों गोपियाँ सबेरा होते ही उलाहना लेकर आ जाती हैं। जहाँ-तहाँ यह धूम मचाता घूमता है, एक क्षण भी घर नहीं रहता। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर त्रि-भुवनके कर्ता हैं; किंतु आज तो (उन्हें बाँध रखनेकी) अपनी हठ यशोदाजीने भी पकड़ ली है।

राग गूजरी

[२६०]

जसोदा ! कान्हहु तैं दधि प्यारौ ?
डारि देहि कर मथत मथानी, तरसत नंद-दुलारौ ॥
दूध-दही-माखन लै वारौं, जाहि करति तू गारौ।
कुम्हिलानौ मुख-चंद देखि छबि, कोह न नैकु निवारौ !
ब्रह्म, सनक, सिव ध्यान न पावत, सो ब्रज गैयनि चारौ।
सूर स्याम पर बलि-बलि जैऐ, जीवन-प्रान हमारौ ॥

सूरदासजी कहते हैं-(बलरामजी कह रहे हैं—) 'यशोदा मैया ! कन्हाईसे भी तुझे दही प्यारा है ? दही मथनेकी मथानी हाथसे रख दे; देख, नन्दनन्दन (छूटनेको) तरस रहा है (इसे पहले छोड़ दे) ! तू जिसपर गर्व करती है, वह दूध, दही, मक्खन लेकर मैं इसपर न्यौछावर कर दूँ। इसके मलिन हुए चन्द्रमुखकी शोभा देखकर अपने क्रोधको कुछ कम नहीं करती ? ब्रह्मा, सनकादि ऋषि तथा (साक्षात्) शंकरजी तो जिसे ध्यानमें (भी) नहीं पाते, वही व्रजमें गायें चराता है। श्यामसुन्दर हमारा जीवन और प्राण है, इसपर तो बार-बार न्यौछावर हो जाना चाहिये।'

राग रामकली

[२६१]

जसोदा ऊखल बाँधे स्याम।
मन-मोहन बाहिर ही छाँड़े, आपु गई गृह-काम ॥

दह्यौ मथति, मुख तैं कछु बकरति, गारी दे लै नाम ।
घर-घर डोलत माखन चोरत, षट-रस मेरैं धाम ॥
ब्रज के लरिकनि मारि भजत हैं, जाहु तुमहु बलराम ।
सूर स्याम ऊखल सौं बाँधे, निरखहिं ब्रज की बाम ॥

यशोदाजीने श्यामसुन्दरको ऊखलमें बाँध दिया है । मनमोहनको बाहर (आँगनमें) ही छोड़कर स्वयं घरके कार्यमें लग गयी हैं । दही मथती जाती हैं और मुखसे नाम ले-लेकर गाली देती हुई कुछ बकती भी जाती हैं कि 'यह घर-घर मक्खन चुराता घूमता है जब कि मेरे घरमें छहों रस (भरे) हैं । व्रजके लड़कोंको मारकर भाग जाता है । (मैं इसे नहीं छोड़ूँगी ।) बलराम ! तुम भी चले जाओ ।' सूरदासजी कहते हैं कि व्रजकी गोपियाँ श्यामसुन्दरको ऊखलमें बँधा देख रही हैं ।

राग गौरी

[२६२]

निरखि स्याम हलधर मुसुकाने ।
को बाँधै, को छोरै इन कौं, यह-महिमा येई पै जाने ॥
उतपति-प्रलय करत हैं येई, सेष सहस मुख सुजस बखाने ।
जमलार्जुन-तरु तोरि उधारन कारन करन आपु मन माने ॥
असुर सँहारन, भक्तनि तारन, पावन-पतित कहावत बाने ।
सूरदास-प्रभु भाव-भक्ति के अति हित जसुमति हाथ बिकाने ॥

श्यामसुन्दरको देखकर बलरामजी मुसकरा उठे (और बोले)—'इन्हें कौन बाँध सकता है और कौन इनको खोल सकता है; अपना यह माहात्म्य (यह लीला) यही समझते हैं । ये ही सृष्टिकी उत्पत्ति और प्रलय भी करते हैं । शेषजी सहस्र मुखोंसे इनके सुयशका वर्णन करते हैं । यमलार्जुनके वृक्षोंको तोड़ (उखाड़कर) उनका उद्धार करनेकेलिये यह सब करना (अपनेको बँधवाना) इनको स्वयं अच्छा लगा है । ये असुरोंका संहार करनेवाले हैं,

भक्तोंके उद्धारक हैं, पतितपावन इनका स्वरूप ही कहा जाता है।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे ये स्वामी तो अत्यन्त भावपूर्वक भक्ति करनेके कारण (प्रेमपरवश) होकर श्रीयशोदाजीके हाथ बिक गये हैं।

राग धनाश्री

[२६३]

जसुमति, किहिं यह सीख दई।
सुतहि बाँधि तू मथति मथानी, ऐसी निठुर भई॥
हरैं बोलि जुवतिनि कौं लीन्हौ, तुम सब तरुनि नई।
लरिकहि त्रास दिखावत रहिऐ, कत मुरुझाइ गई॥
मेरे प्रान-जिवन-धन माधौ, बाँधें बेर भई।
सूर स्याम कौं त्रास दिखावति, तुम कहा कहति दई॥

(गोपियाँ कहती हैं—)'यशोदाजी ! तुमको यह (निष्ठुरताकी) शिक्षा किसने दी ? पुत्रको बाँधकर मथानी लिये (स्वयं) दही मथ रही हो ! इतनी निष्ठुर हो गयी हो तुम ?' (तब यशोदाजीने) धीरेसे युवतियोंको बुला लिया (और बोलीं—)'तुम सब अभी नवीन तरुणियाँ हो (तुम्हें अनुभव तो है नहीं । अरे) लड़केको भय दिखलाते रहना चाहिये। (जिसमें वह बिगड़ न जाय। इसपर) तुम सब क्यों म्लान हो गयी हो ?' सूरदासजी कहते हैं (गोपियाँ बोलीं—)'हे भगवान् ! तुम यह क्या कहती हो ? श्यामसुन्दरको भय दिखला रही हो ? अरे, ये माधव तो हमारे प्राण हैं, जीवनधन हैं, इन्हें बाँधे देर हो गयी। (अब तो छोड़ दो।)'

[२६४]

तबहिं स्याम इक बुद्धि उपाई।
जुवती गईं घरनि सब अपनैं, गृह-कारज जननी अटकाई॥
आपु गए जमलार्जुन-तरु तर, परसत पात उठे झहराई।
दिए गिराइ धरनि दोऊ तरु, सुत कुबेर के प्रगटे आई॥

दोउ कर जोरि करत दोउ अस्तुति, चारि भुजा तिन्ह प्रगट दिखाई।
सूर धन्य ब्रज जनम लियौ हरि, धरनी की आपदा नसाई ॥

उसी समय श्यामसुन्दरने एक उपाय सोच लिया। गोपियाँ तो सब अपने-अपने घर चली गयीं और मैया घरके काममें फँस गयी। (अवसर पाकर ऊखल घसीटते) स्वयं यमलार्जुनके वृक्षोंके नीचे पहुँच गये। इनके छूते ही (वृक्षोंके) पत्ते हिल उठे, श्यामने दोनों वृक्षोंको पृथ्वीपर गिरा दिया, उनसे कुबेरके पुत्र (नलकूबर और मणिग्रीव) प्रकट हो गये। दोनों हाथ जोड़कर वे दोनों स्तुति करने लगे, श्यामने चतुर्भुज रूप प्रकट करके उन्हें दर्शन दिया। सूरदासजी (के शब्दोंमें कुबेर-पुत्र) कहते हैं कि यह ब्रज धन्य है जहाँ श्रीहरिने अवतार लिया और पृथ्वीकी आपत्ति (भार) दूर की !

राग बिलावल

[२६५]

धनि गोबिंद जो गोकुल आए।
धनि-धनि नंद, धन्य निसि-बासर, धनि जसुमति जिन श्रीधर जाए॥
धनि-धनि बाल-केलि जमुना-तट, धनि बन सुरभी-बृंद चराए।
धनि यह समौ, धन्य ब्रज-बासी, धनि-धनि बेनु मधुर धुनि गाए॥
धनि-धनि अनख, उरहनौ धनि-धनि, धनि माखन, धनि मोहन खाए।
धन्य सूर ऊखल तरु गोबिंद हमहि हेतु धनि भुजा बँधाए॥

(कुबेर-पुत्र स्तुति करते हैं—)गोविन्द धन्य हैं, जो गोकुलमें प्रकट हुए। श्रीनन्दजी परम धन्य हैं। (श्यामकी लीलाके) ये दिन और रात्रियाँ धन्य हैं तथा माता यशोदा धन्य हैं जिन्होंने मोहनको जन्म दिया। बाल-क्रीड़ा जहाँ होती है, वह यमुना-तट धन्य-धन्य है और यह वृन्दावन धन्य है जहाँ गायोंका झुंड चराते हैं। यह समय धन्य है, व्रजवासी धन्य हैं; जिससे मधुर ध्वनिमें गान करते हैं, वह वंशी अत्यन्त धन्य है, परम धन्य है। गोपियोंका क्रोध करना,

उलाहना देना भी धन्य-धन्य है, मक्खन धन्य है और मोहनका उसे खाना भी धन्य है। सूरदासजी कहते हैं—यह ऊखल धन्य है, यमलार्जुनके वृक्ष धन्य हैं और वे गोविन्द धन्यातिधन्य हैं, जिन्होंने हमारे लिये अपने हाथ बँधवाये तथा उनके (बाँध जानेवाले) हाथ भी धन्य हैं।

राग नट

[२६६]

मोहन ! हौं तुम ऊपर वारी।
कंठ लगाइ लिए, मुख चूमति, सुंदर स्याम बिहारी॥
काहे कौं ऊखल सौं बाँध्यौ, कैसी मैं महतारी।
अतिहिं उतंग बयारि न लागत, क्यौं टूटे तरु भारी॥
बारंबार बिचारति जसुमति, यह लीला अवतारी।
सूरदास स्वामी की महिमा, कापै जाति बिचारी॥

'मोहन ! मैं तुम्हारे ऊपर न्यौछावर हूँ।' (यह कहकर मैयाने) लीला-विहारी श्यामसुन्दरको गलेसे लगा लिया और उनका मुखचुम्बन करने लगीं। 'मैंने क्यों तुम्हें ऊखलमें बाँध दिया, मैं कैसी (निष्ठुर) माता हूँ। ये वृक्ष तो बड़े ऊँचे हैं, इन्हें हवा भी नहीं लगती (आँधीमें भी ये झुकते नहीं थे)! ऐसे भारी वृक्ष कैसे टूट गये !' यशोदाजी यही बार-बार विचार कर रही हैं। सूरदासजी कहते हैं—मेरे स्वामीकी यह तो अवतार-लीला है; उनकी महिमा भला, किससे सोची (समझी) जा सकती है।

राग सारंग

[२६७]

अब घर काहू कैं जनि जाहु।
तुम्हरैं आजु कमी काहे की, कत तुम अनतहिं खाहु॥
बरै जेंवरी जिहिं तुम बाँधे, परैं हाथ भहराइ।
नंद मोहि अतिहीं त्रासत हैं, बाँधे कुँवर कन्हाइ॥
रोग जाउ मेरे हलधर के, छोरत हौ तब स्याम।
सूरदास-प्रभु खात फिरौ जनि, माखन-दधि तुव धाम॥

सूरदासजी कहते हैं—(मैया पश्चात्ताप करती कह रही हैं–) 'लाल! अब किसीके घर मत जाया करो। तुम्हारे यहाँ इस समय किस बातका अभाव है, दूसरेके यहाँ जाकर तुम क्यों खाते हो! जिस रस्सीसे तुम्हें बाँधा था, वह जल जाय; (तुम्हें बाँधनेवाले मेरे) ये हाथ टूटकर गिर पड़ें; व्रजराज मुझे बहुत ही डाँट रहे हैं कि 'तूने मेरे कुँवर कन्हाईको बाँध दिया!' मेरे बलरामके सब रोग-दोष नष्ट हो जायँ, वह तभी श्यामसुन्दरको छोड़ रहा था। मोहन! तुम्हारे घरमें ही दही-मक्खन बहुत है, (दूसरोंके घर) खाते मत घूमो।'

[२६८]

व्रज-जुवती स्यामहि उर लावतिं।
बारंबार निरखि कोमल तनु, कर जोरतिं, विधि कौं जु मनावतिं॥
कैसैं बचे अगम तरु कैं तर, मुख चूमतिं, यह कहि पछितावतिं।
उरहन लै आवतिं जिहिं कारन, सो सुख फल पूरन करि पावतिं॥
सुनौ महरि, इन कौं तुम बाँधति, भुज गहि बंधन-चिह्न दिखावतिं।
सूरदास प्रभु अति रति-नागर, गोपी हरषि हृदय लपटावतिं॥

व्रजकी गोपियाँ श्यामसुन्दरको हृदयसे लगा रही हैं। बार-बार उनके सुकुमार शरीरको देखकर हाथ जोड़कर दैवको मनाती हैं (कि यह सकुशल रहे)। 'बड़े विकट वृक्षोंके नीचे पड़कर ये कैसे बचे?' यह सोचकर मुख चूमती हैं तथा यह कहते हुए पश्चात्ताप करती हैं कि—'जिसके लिये हम उलाहना लेकर आती थीं, उस सुखका फल पूर्णरूपमें हम पा रही हैं। व्रजरानी! सुनो, तुम इन्हें (इतने सुकुमारको) बाँधती हो?' (यह कहकर) हाथ पकड़कर बन्धनके चिह्न (रस्सीके निशान) दिखलाती हैं। सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी क्रीड़ा करनेमें अत्यन्त चतुर हैं (उन्होंने अपनी इस क्रीड़ासे सबको मोहित कर लिया है)। गोपियाँ हर्षित होकर उन्हें हृदयसे लिपटा रही हैं।

राग कान्हरौ

[२६९]

मोहि कहतिं जुवती सब चोर।
खेलत कहूँ रहौं मैं बाहिर, चितै रहतिं सब मेरी ओर ॥
बोलि लेतिं भीतर घर अपनैं, मुख चूमतिं, भरि लेतिं अँकोर।
माखन हेरि देतिं अपनैं कर, कछु कहि बिधि सौं करति निहोर ॥
जहाँ मोहि देखतिं, तहँ टेरतिं, मैं नहिं जात दुहाई तोर।
सूर स्याम हँसि कंठ लगायौ, वै तरुनी कहँ बालक मोर ॥

(श्यामसुन्दर मैयासे कहते हैं-) 'व्रजकी युवतियाँ मुझे चोर कहती हैं। मैं बाहर कहीं भी खेलता रहूँ, सब मेरी ओर ही देखा करती हैं। मुझे घरके भीतर बुला लेती हैं और वहाँ मेरा मुख चूमती हैं, मुझे भुजाओंमें भरकर हृदयसे लगा लेती हैं। अपने हाथसे भली प्रकार देखकर मुझे मक्खन देती हैं और कुछ कहकर विधातासे निहोरा करती हैं। जहाँ मुझे देखती हैं, वहीं पुकारती हैं; किंतु मैया ! तेरी दुहाई, मैं जाता नहीं।' सूरदासजी कहते हैं—(यह सुनकर) माताने हँसकर उन्हें गले लगा लिया (और बोलीं) 'कहाँ तो मेरा यह भोला बालक और कहाँ वे सब तरुणियाँ।'

राग केदारौ

[२७०]

जसुमति कहति कान्ह मेरे प्यारे, अपनैं ही आँगन तुम खेलौ।
बोलि लेहु सब सखा संग के, मेरौ कह्यौ कबहुँ जिनि पेलौ ॥
ब्रज-बनिता सब चोर कहतिं तोहिं, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ।
आजु मोहि बलराम कहत हे, झूठहिं नाम धरति हैं तेरौ ॥
जब मोहि रिस लागति तब त्रासति, बाँधति, मारति, जैसैं चेरौ।
सूर हँसति ग्वालिनि दै तारी, चोर नाम कैसैहुँ सुत ! फेरौ ॥

सूरदासजी कहते हैं—(समझाते हुए) यशोदाजी कह रही हैं-'मेरे

प्यारे कन्हाई ! तुम अपने ही आँगनमें खेलो। अपने साथके सब सखाओंको बुला लो, मेरा कहना कभी टाला मत करो। व्रजकी सब स्त्रियाँ तुम्हें चोर कहती हैं, इससे मेरा मुख लज्जासे संकुचित हो जाता है। परंतु आज मुझसे बलराम कहते थे कि वे सब तुम्हें झूठमूठ बदनाम करती हैं। जब मुझे क्रोध आता है, तब मैं तुम्हें दासके समान डाँटती हूँ, बाँधती हूँ और मार भी देती हूँ। गोपियाँ ताली बजाकर (चिढ़ाकर) हँसती हैं, अतः पुत्र ! यह चोर नाम तो किसी प्रकार बदल (ही) डालो।'

राग बिलावल

[२७१]

धेनु दुहत हरि देखत ग्वालनि।
आपुन बैठि गए तिन कैं सँग, सिखवहु मोहि कहत गोपालनि॥
काल्हि तुम्हें गो दुहन सिखावैं, दुहीं सबै अब गाइ।
भोर दुहौ जनि नंद-दुहाई, उन सौं कहत सुनाइ॥
बड़ौ भयौ अब दुहत रहौंगौ, अपनी धेनु निबेरि।
सूरदास प्रभु कहत सौंह दै, मोहिं लीजौ तुम टेरि॥

श्यामसुन्दर गोपोंको गायें दुहते देखते हैं। (एक दिन) स्वयं भी उनके साथ बैठ गये और गोपालोंसे कहने लगे—'मुझे भी सिखलाओ।' (गोपोंने कहा—) 'इस समय तो सब गायें दुही जा चुकी हैं, कल तुम्हें गाय-दुहना सिखलायेंगे।' तब उनसे सुनाकर कहने लगे—'तुमलोगोंको बाबा नन्दकी शपथ है, सबेरे मत दुह लेना। मैं अब बड़ा हो गया, अपनी गायें अलग करके स्वयं दुह लिया करूँगा।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी शपथ देकर (गोपोंसे) कह रहे हैं—'तुमलोग मुझे पुकार लेना।'

राग कान्हरू

[२७२]

मैं दुहिहौं मोहि दुहन सिखावहु।
कैसैं गहत दोहनी घुटुवनि, कैसैं बछरा थन लै लावहु॥

कैसैं लै नोई पग बाँधत, कैसैं लै गैया अटकावहु।
कैसैं धार दूध की बाजति; सोइ-सोइ विधि तुम मोहि बतावहु॥
निपट भई अब साँझ कन्हैया, गैयनि पै कहुँ चोट लगावहु।
सूर स्याम सौं कहत ग्वाल सब, धेनु दुहन प्रातहिं उठि आवहु॥

(श्यामसुन्दर गोपोंसे कहते हैं–) 'मैं गाय दुहूँगा, मुझे दुहना सिखला दो। दोहनी घुटनोंमें कैसे पकड़ते हो? बछड़ेको लाकर थनसे कैसे लगाते हो? नोई (पैर बाँधनेकी रस्सी) लेकर (गायके पिछले दोनों) पैरोंको कैसे बाँधते हो? गायको ही लाकर कैसे (उछलने-कूदनेसे) अटकाये (रोके) रहते हो? दूधकी धार (बर्तनमें) शब्द कैसे करती है, तुमलोग जो कुछ करते हो, वह सारा ढंग मुझे बतलाओ।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरसे गोपलोग कह रहे हैं—'कन्हाई! अब एकदम संध्या हो गयी है, कहीं तुम गायोंसे चोट लगा लोगे; गाय दुहना है तो सबेरे ही उठकर आ जाना।'

राग बिलावल

[२७३]

जागौ हो तुम नंद-कुमार!
हौं बलि जाउँ मुखारबिंद की, गो-सुत मेलौ खरिक सम्हार॥
अब लौं कहा सोए मन-मोहन, और बार तुम उठत सबार।
बारहिं-बार जगावति माता, अंबुज-नैन! भयौ भिनुसार॥
दधि मथि कै माखन बहु दैहौं, सकल ग्वाल ठाढ़े दरबार।
उठि कै मोहन बदन दिखावहु, सूरदास के प्रान-अधार॥

माता बार-बार जगा रही हैं—'कमलनयन! उठो, सबेरा हो गया। नन्दनन्दन! तुम जागो। मैं तुम्हारे मुखकमलपर बलिहारी जाती हूँ, बछड़ोंको सँभालकर गोष्ठमें पहुँचा दो। मनमोहन! अबतक तुम क्या सोये हो, दूसरे दिनों तो तुम सबेरे ही उठ जाते थे। दही मथकर मैं तुम्हें बहुत-सा मक्खन दूँगी,

(देखो) सभी ग्वाल-बालक द्वारपर खड़े हैं। उठकर (उन्हें) अपना मनोमोहक मुख तो दिखलाओ।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे तो तुम प्राणाधार ही हो।

[२७४]

जागहु हो ब्रजराज हरी !
लै मुरली आँगन ह्वै देखौ, दिनमनि उदित भए द्विघरी॥
गो-सुत गोठ बँधन सब लागे, गो-दोहन की जून टरी।
मधुर बचन कहि सुतहि जगावति, जननि जसोदा पास खरी॥
भोर भयौ दधि-मथन होत, सब ग्वाल सखनि की हाँक परी।
सूरदास-प्रभु-दरसन कारन, नींद छुड़ाई चरन धरी॥

माता यशोदा पास खड़ी होकर बड़ी मीठी वाणीसे पुत्रको जगा रही हैं—'ब्रजराज श्यामसुन्दर ! तुम जागो। मुरली लेकर आँगनमें आकर देखो तो, सूर्योदय हुए दो घड़ियाँ बीत चुकी हैं। सब बछड़े गोष्ठमें बाँधे जाने लगे हैं, गोदोहनका समय बीत चुका है। सबेरा हो गया है, सब घरोंमें दही मथा जा रहा है। तुम्हारे सब ग्वाल-सखाओंकी पुकार सुनायी पड़ रही है।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीका दर्शन करनेके लिये मैयाने उनका चरण पकड़कर (हिलाकर) उनकी निद्रा दूर कर दी।

[२७५]

जागहु लाल, ग्वाल सब टेरत।
कबहुँ पितंबर डारि बदन पर, कबहुँ उघारि जननि तन हेरत॥
सोवत मैं जागत मनमोहन, बात सुनत सब की अवसेरत।
बारंबार जगावति माता, लोचन खोलि पलक पुनि गेरत॥
पुनि कहि उठी जसोदा मैया, उठहु कान्ह रबि-किरनि उजेरत।
सूर स्याम, हँसि चितै मातु-मुख, पट कर लै, पुनि-पुनि मुख फेरत॥

(माता कहती हैं–) 'लाल ! जाग जाओ, सब गोप-बालक तुम्हें पुकार रहे हैं।' मोहन कभी मुखपर पीताम्बर डाल लेते हैं और कभी मुख

खोलकर माताकी ओर देखते हैं। मनमोहन सोतेमें भी जाग रहे हैं, सबकी बातें सुनते हैं, किंतु उठनेमें विलम्ब कर रहे हैं। माता बार-बार जगाती हैं, नेत्र खोलकर भी फिर पलकें बंद कर लेते हैं। यशोदा माता फिर बोल उठीं—'कन्हाई ! उठो। सूर्यकी किरणें प्रकाश फैला रही हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर हँसकर माताके मुखकी ओर देखकर फिर वस्त्र हाथमें लेकर बार-बार (सोनेके लिये) मुख घुमा लेते हैं।

राग सूहो बिलावल

[२७६]

जननि जगावति, उठौ कन्हाई ! प्रगट्यौ तरनि, किरनि महि छाई ॥
आवहु चंद्र-बदन दिखराई। बार-बार जननी बलि जाई ॥
सखा द्वार सब तुमहि बुलावत। तुम कारन हम धाए आवत ॥
सूर स्याम उठि दरसन दीन्हौ। माता देखि मुदित मन कीन्हौ ॥

माता जगा रही हैं—'कन्हाई ! उठो। सूर्य उग गया, उसकी किरणें पृथ्वीपर फैल गयीं। आओ, अपना चन्द्रमुख दिखलाओ, मैया बार-बार बलिहारी जाती है। सब सखा द्वारपर खड़े तुमको बुला रहे हैं कि 'मोहन, तुम्हारे लिये ही हम दौड़े आते हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरने (यह सुनकर) उठकर दर्शन दिया, उन्हें देखकर माताका मन आनन्दित हो गया।

राग रामकली

[२७७]

दाऊ जू, कहि स्याम पुकार्‌यौ।
नीलांबर कर ऐंचि लियौ हरि, मनु बादर तैं चंद उजार्‌यौ ॥
हँसत-हँसत दोउ बाहिर आए, माता लै जल बदन पखार्‌यौ।
दतवनि लै दुहुँ करी मुखारी, नैननि कौ आलस जु बिसार्‌यौ ॥
माखन लै दोउनि कर दीन्हौ, तुरत-मथ्यौ, मीठौ अति भार्‌यौ।
सूरदास-प्रभु खात परस्पर, माता अंतर-हेत बिचार्‌यौ ॥

श्यामसुन्दरने—'दाऊजी !' कहकर पुकारा । हरिने हाथसे इस प्रकार नीलाम्बर खींच लिया, मानो बादल (हटाकर उस) से चन्द्रमाको प्रकाशित कर दिया । हँसते हुए दोनों भाई बाहर आये, जननीने पानी लेकर उनका मुख धुलाया, दातौन लेकर दोनों (भाइयों) ने दन्तधावन किया और नेत्रोंका आलस्य दूर कर दिया । (मैयाने) तुरंतका निकाला हुआ अत्यन्त भारी (जलहीन खूब ठोस) मक्खन लाकर दोनोंके हाथोंपर रख दिया । सूरदासजी कहते हैं कि माताके हृदयके प्रेमका विचार करके मेरे दोनों स्वामी परस्पर (एक दूसरेको खिलाते हुए मक्खन) खा रहे हैं ।

राग बिलावल

[२७८]

जागहु-जागहु नंद-कुमार ।
रबि बहु चढ़्यौ, रैनि सब निघटी, उचटे सकल किवार ॥
वारि-वारि जल पियति जसोदा, उठि मेरे प्रान-अधार ।
घर-घर गोपी दह्यौ बिलोवैं, कर कंगन-झंकार ॥
साँझ दुहन तुम कह्यौ गाइ कौं, तातैं होति अबार ।
सूरदास प्रभु उठे तुरतहीं, लीला अगम अपार ॥

(माता कहती हैं—) 'नन्दनन्दन ! जागो, जाग जाओ ! सूर्य बहुत ऊपर चढ़ आया, पूरी रात्रि बीत गयी, सब किवाड़ खुल गये ।' माता यशोदा (अपने लालके आयुवर्धनकी कामनासे उसपर) घुमा-घुमाकर जल पीती हैं (और कहती हैं—) 'मेरे प्राणोंके आधार ! उठो ! घर-घरमें गोपियाँ (अपने) हाथके कङ्कणोंकी झंकार करती दही मथ रही हैं । तुमने संध्यासमय गाय दुहनेके लिये कहा था, इसलिये अब देर हो रही है ।' सूरदासजी कहते हैं— (यह सुनते ही) मेरे स्वामी तुरंत उठ गये । इनकी लीला अगम्य और अपार है ।

[२७९]

तनक कनक की दोहनी, दै-दै री मैया ।
तात दुहन सीखन कह्यौ, मोहि धौरी गैया ॥

अटपट आसन बैठि कै, गो-थन कर लीन्हौ।
धार अनतहीं देखि कै, ब्रजपति हँसि दीन्हौ॥
घर-घर तैं आईं सबै, देखन ब्रज-नारी।
चितै चतुर चित हरि लियौ, हँसि गोप-बिहारी॥
बिप्र बोलि आसन दियौ, कह्यौ बेद उचारी।
सूर स्याम सुरभी दुही, संतनि हितकारी॥

(मोहन बोले—) 'मैया री! मुझे सोनेकी दोहनी तो दे दे। बाबाने मुझे धौरी (कपिला) गायको दुहना सिखानेके लिये कहा है।' (दोहनी लेकर गोष्ठमें गये) अटपटे आसनसे बैठकर गायका थन हाथमें लिया; किंतु (दूधकी) धार (बर्तनमें न पड़कर) अन्यत्र पड़ते देख ब्रजराज हँस पड़े। घर-घरसे ब्रजकी स्त्रियाँ (मोहनका गाय दुहना) देखने आयीं। उनकी ओर देखकर हँसकर गोपोंमें क्रीड़ा करनेवाले श्यामने उनका चित्त हरण कर लिया। (ब्रजराजने) ब्राह्मणोंको बुलाकर आसन दिया और उनसे वेदोच्चारण (स्वस्तिपाठ) करनेकी प्रार्थना की। सूरदासजी कहते हैं कि सत्पुरुषोंका मङ्गल करनेवाले श्यामसुन्दरने आज गाय दुहा।

राग रामकली

[२८०]

आजु मैं गाइ चरावन जैहौं।
बृंदाबन के भाँति-भाँति फल अपने कर मैं खैहौं॥
ऐसी बात कहौ जनि बारे, देखो अपनी भाँति।
तनक-तनक पग चलिहौ कैसैं, आवत ह्वैहै राति॥
प्रात जात गैया लै चारन, घर आवत हैं साँझ।
तुम्हरौ कमल-बदन कुम्हिलैहै, रेंगत घामहिं माँझ॥
तेरी सौं मोहिं घाम न लागत, भूख नहीं कछु नेक।
सूरदास-प्रभु कह्यौ न मानत, पर्‌यौ आपनी टेक॥

(श्यामसुन्दर बोले-) 'आज मैं गाय चराने जाऊँगा । वृन्दावनके अनेक प्रकारके फलोंको अपने हाथों (तोड़कर) खाऊँगा।' (माता बोलीं-) 'मेरे लाल ! ऐसी बात मत कहो ! अपनी (शक्तिकी) ओर तो देखो, तुम्हारे पैर अभी छोटे-छोटे हैं,(वनमें) कैसे चलोगे ? (घर लौटकर) आनेमें रात्रि हो जायगी । (गोप तो) सबेरे गायें चराने ले जाते हैं और संध्या होनेपर घर आते हैं। तुम्हारा कमलमुख धूपमें घूमते-घूमते म्लान हो जायगा ।' (श्याम बोले-) 'तेरी शपथ ! मुझे धूप लगती ही नहीं और थोड़ी भी भूख नहीं है ।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीने अपनी हठ पकड़ रक्खी है, वे (किसीका) कहना नहीं मान रहे हैं ।

[२८१]

मैया ! हौं गाइ चरावन जैहौं ।
तू कहि महर नंद बाबा सौं, बड़ौ भयौ न डरैहौं ॥
रैता, पैता, मना, मनसुखा, हलधर संगहि रैहौं ।
बंसीबट तर ग्वालनि कैं सँग, खेलत अति सुख पैहौं ॥
ओदन भोजन दै दधि काँवरि, भूख लगे तैं खैहौं ।
सूरदास है साखि जमुन-जल सौंह देहु जु नहैहौं ॥

(श्यामसुन्दर कहते हैं-) 'मैया ! मैं गाय चराने जाऊँगा । तू व्रजराज नन्दबाबासे कह दे—अब मैं बड़ा हो गया, डरूँगा नहीं । रैता, पैता, मना, मनसुखा आदि सखाओं तथा दाऊ दादाके साथ ही रहूँगा। वंशीवटके नीचे गोप-बालकोंके साथ खेलनेमें मुझे अत्यन्त सुख मिलेगा। भोजनके लिये छीकेमें भात और दही दे दे, भूख लगनेपर खा लूँगा ।' सूरदासजी कहते हैं कि 'यमुनाजल मेरा साक्षी है; शपथ दे दो यदि मैं वहाँ स्नान करूँ तो ।'

[२८२]

चले सब गाइ चरावन ग्वाल ।
हेरी-टेर सुनत लरिकनि के, दौरि गए नँदलाल ॥

फिरि इत-उत जसुमति जो देखै, दृष्टि न परे कन्हाई।
जान्यौ जात ग्वाल सँग दौरयौ, टेरति जसुमति धाई ॥
जात चल्यौ गैयनि के पाछें, बलदाऊ कहि टेरत।
पाछें आवति जननी देखी, फिरि-फिरि इत कौं हेरत ॥
बल देख्यौ मोहन कौं आवत, सखा किए सब ठाढ़े।
पहुँची आइ जसोदा रिस भरि, दोउ भुज पकरे गाढ़े ॥
हलधर कह्यौ, जान दै मो सँग, आवहिं आज-सवारे।
सूरदास बल सौं कहै जसुमति, देखे रहियौ प्यारे ॥

सब गोप-बालक गाय चराने चले। बालकोंके द्वारा उच्चारित गायोंको पुकारनेका शब्द सुनते ही नन्दनन्दन भी दौड़कर चले गये। फिर यशोदाजी जो इधर-उधर देखने लगीं तो कन्हाई कहीं दीखते ही न थे। यह जानकर कि वह गोप-बालकोंके साथ भागा जा रहा है, यशोदाजी पुकारते हुए दौड़ पड़ीं। यह कहकर पुकारने लगीं कि 'बलराम! देखो, कृष्ण गायोंके पीछे चला जा रहा है (उसे रोको)।' मोहनने माताको पीछे आते देखा तो बार-बार घूमकर उधरको ही देखते हैं। बलरामजीने श्यामको आते देखा तो सब सखाओंको खड़ा कर लिया। (इतनेमें) यशोदाजी आ पहुँचीं, क्रोधमें भरकर उन्होंने (श्यामके) दोनों हाथ कसकर पकड़ लिये। बलरामजी बोले—'(इसे) मेरे साथ जाने दे, आज शीघ्र ही हम सब लौट आयेंगे।' सूरदासजी कहते हैं—श्रीयशोदाजी बलरामजीसे बोलीं—प्यारे कन्हाईको देखते रहना (इस छोटे भाईकी सँभाल रखना)।

राग बिलावल

[२८३]

खेलत कान्ह चले ग्वालनि सँग।
जसुमति यहै कहत घर आई, हरि कीन्हे कैसे रँग ॥

प्रातहि तैं लागे याही ढँग, अपनी टेक करयौ है।
देखौ जाइ आजु बन कौ सुख, कहा परोसि धरयौ है॥
माखन-रोटी अरु सीतल जल, जसुमति दियौ पठाइ।
सूर नंद हँसि कहत महरि सौं, आवत कान्ह चराइ॥

कन्हाई खेलते हुए गोप-बालकोंके साथ चल पड़े। यशोदाजी यह कहते हुए घर लौट आयीं कि 'श्यामने आज कैसा ढंग पकड़ा। सवेरेसे इसी धुनमें लगा था और (अन्तमें) अपनी हठ पूरी करके रहा है। आज जाकर वनका सुख भी देख लो कि वहाँ क्या परोसकर रखा है।' मक्खन, रोटी और शीतल जल यशोदाजीने (वनमें) भेज दिया। सूरदासजी कहते हैं कि नन्दजी हँसकर व्रजरानीसे कह रहे हैं—'कन्हाईको गायें चराने आता है।'

राग सारंग

[२८४]

बृंदाबन देख्यौ नँद-नंदन, अतिहिं परम सुख पायौ।
जहँ-जहँ गाइ चरति, ग्वालनि सँग, तहँ-तहँ आपुन धायौ॥
बलदाऊ मोकौं जनि छाँड़ौ, संग तुम्हारैं ऐहौं।
कैसैहुँ आजु जसोदा छाँड़यौ, काल्हि न आवन पैहौं॥
सोवत मोकौं टेरि लेहुगे, बाबा नंद दुहाई।
सूर स्याम बिनती करि बल सौं, सखनि समेत सुनाई॥

श्रीनन्दनन्दनने जब वृन्दावन देखा तो उनको बहुत बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। जहाँ-जहाँ गायें चरती हुई जाती थीं, वहाँ-वहाँ गोपबालकोंके साथ स्वयं भी दौड़ते रहे। (बड़े भाईसे बोले—) 'दाऊ दादा! मुझे छोड़कर मत आया करो, मैं तुम्हारे साथ ही आऊँगा। आज तो किसी प्रकार मैया यशोदाने छोड़ दिया है, (अकेले) कल नहीं आ पाऊँगा। नन्दबाबाकी शपथ, मैं सोता रहूँ तो मुझे पुकार लेना।' सूरदासजी कहते हैं कि इस प्रकार श्यामसुन्दरने सखाओंसहित बलरामजीसे प्रार्थना की।

राग गौरी

[२८५]

वन तैं आवत धेनु चराए ॥
संध्या समय साँवरे मुख पर, गो-पद-रज लपटाए।
बरह-मुकुट कैं निकट लसति लट, मधुप मनौ रुचि पाए ॥
बिलसत सुधा जलज-आनन पर उड़त न जात उड़ाए।
बिधि-वाहन-भच्छन की माला, राजत उर पहिराए ॥
एक बरन बपु नहिं बड़-छोटे, ग्वाल बने इक धाए।
सूरदास बलि लीला प्रभु की, जीवत जन जस गाए ॥

(श्याम) वनसे गायें चराकर आ रहे हैं। संध्याके समय उनके साँवले मुखपर गायोंके खुरसे उड़ती धूलि लगी है। मयूरपिच्छके पास अलकें ऐसी शोभा देती हैं मानो भौंरे अमृतपूर्ण खिले कमलके समान मुखके चारों ओर रुचिपूर्वक बैठे हैं और उड़ानेसे भी उड़ते नहीं। हृदयपर मोतियोंकी माला पहन रक्खी है, जो (बड़ी) शोभा दे रही है। सभी गोपबालक एक समान रंग-रूप तथा अवस्थाके हैं, कोई बड़ा-छोटा नहीं है, सब साथ दौड़ते हुए शोभित हो रहे हैं। सूरदास अपने स्वामीकी इस लीलापर बलिहारी है, यह सेवक तो उनका यशोगान करके ही जीता है।

[२८६]

जसुमति दौरि लिए हरि कनियाँ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन, हौं बलि जाउँ निछनियाँ ॥
मो कारन कछु आन्यौ है बलि, बन-फल तोरि नन्हैया।
तुमहिं मिलैं मैं अति सुख पायौ, मेरे कुँवर कन्हैया ॥
कछुक खाहु जो भावै मोहन, दै री माखन-रोटी।
सूरदास-प्रभु जीवहु जुग-जुग हरिहलधर की जोटी ॥

यशोदाजीने दौड़कर श्यामको गोदमें उठा लिया। (बोलीं—) 'मेरा

लाल आज गाय चराने गया था। मैं सर्वथा इसपर बलिहारी जाती हूँ। मैं तेरी बलैया लूँ, मेरे नन्हे लाल ! मेरे लिये भी वनसे कुछ फल तोड़कर लाया है ? मेरे कुँवर कन्हाई ! तुमसे मिलनेपर मुझे बहुत सुख मिला। मोहन ! जो भी अच्छा लगे, कुछ खा लो।' (श्याम बोले–) 'मैया, मक्खन-रोटी दे !' सूरदासके स्वामी श्याम-बलरामकी यह जोड़ी युग-युग जीवे।

राग सारंग

[२८७]

मैं अपनी सब गाइ चरैहौं।
प्रात होत बल कैं सँग जैहौं, तेरे कहैं न रैहौं॥
ग्वाल-बाल गाइनि के भीतर, नैंकहु डर नहिं लागत।
आजु न सोवौं नंद-दुहाई, रैनि रहौंगौ जागत॥
और ग्वाल सब गाइ चरैहैं मैं घर बैठौ रैहौं ?
सूर स्याम तुम सोइ रहौ अब, प्रात जान मैं दैहौं॥

(श्यामसुन्दर मातासे कहते हैं–) 'मैं अपनी सब गायें चराऊँगा। सबेरा होनेपर दाऊ दादाके साथ जाऊँगा, तेरे कहनेसे (घर) नहीं रहूँगा। ग्वालबालकों तथा गायोंके बीचमें रहनेसे मुझे तनिक भी भय नहीं लगता है। नन्दबाबाकी शपथ ! आज (मैं) सोऊँगा नहीं, रातभर जागता रहूँगा। दूसरे गोपबालक तो गाय चरायेंगे और मैं घर बैठा रहूँ ?' सूरदासजी कहते हैं (माता बोलीं—) 'श्याम, अब तुम सो रहो, सबेरे मैं तुम्हें जाने दूँगी।'

राग केदारौ

[२८८]

बहुतै दुख हरि सोइ गयौ री।
साँझहि तैं लाग्यौ इहि बातहिं, क्रम-क्रम बोधि लयौ री॥
एक दिवस गयौ गाइ चरावन, ग्वालनि संग सबारै।
अब तौ सोइ रह्यौ है कहि कै, प्रातहिं कहा बिचारै॥

यह तौ सब बलरामहिं लागै, सँग लै गयौ लिवाइ ।
सूर नंद यह कहत महरि सौं, आवन दै फिरि धाइ ॥

(व्रजरानी कहती हैं–) 'सखी ! श्याम बहुत दुखी होकर सो गया। सायंकालसे ही इसी चर्चामें (गायें चरानेकी धुनमें) लगा था, किसी प्रकार धीरे-धीरे मैं समझा सकी । एक दिन सबेरे ही ग्वाल-बालकोंके साथ गाय चराने चला गया । सो अब तो (कल जानेको) कहकर सो रहा है, पता नहीं सबेरे क्या सोचेगा (कैसी हठ ठानेगा) । सब तो बलरामसे स्पर्द्धा करते हैं, वही इसे (भी) अपने साथ ले गया था ।' सूरदासजी कहते हैं कि श्रीनन्दजी (यह सुनकर) व्रजरानीसे कहने लगे–'उसे दौड़-घूम आने दो ।'

राग कान्हरौ

[२८९]

पौढ़े स्याम जननि गुन गावत ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन, कहि-कहि मन हुलसावत ॥
कौन पुन्य-तप तैं मैं पायौ ऐसौ सुंदर बाल ।
हरषि-हरषि कै देति सुरनि कौं सूर सुमन की माल ॥

श्यामसुन्दर सो गये हैं, माता उनका गुणगान करती हैं—'आज मेरा लाल गाय चराने गया है' बार-बार यह कहकर मन-ही-मन उल्लसित होती हैं । 'पता नहीं किस पुण्य तथा तपसे ऐसा सुन्दर बालक मैंने पाया ।' सूरदासजी कहते हैं, बार-बार हर्षित होकर वे देवताओंको फूलोंकी माला चढ़ा रही हैं ।

राग बिलावल

[२९०]

करहु कलेऊ कान्ह पियारे !
माखन-रोटी दियौ हाथ पर, बलि-बलि जाउँ जु खाहु लला रे ॥

टेरत ग्वाल द्वार हैं ठाढ़े, आए तब के होत सबारे।
खेलहु जाइ घोष के भीतर, दूरि कहूँ जनि जैयहु बारे॥
टेरि उठे बलराम स्याम कौं, आवहु जाहिं धेनु बन चारे।
सूर स्याम कर जोरि मातु सौं, गाइ चरावन कहत हहा रे॥

'प्यारे कन्हाई ! कलेऊ कर लो।' (यह कहकर माताने) हाथपर मक्खन-रोटी दे दी (और बोलीं–) 'लाल ! तुमपर बार-बार बलि जाती हूँ, खा लो ! सबेरा होते ही सब गोपबालक आ गये थे, तभीसे द्वारपर खड़े तुम्हें पुकार रहे हैं। जाओ, गाँवके भीतर खेलो ! अभी तुम बच्चे हो, कहीं दूर मत जाना।' (इतनेमें) बलरामजी श्यामको पुकार उठे–'आओ, वनमें गायें चराने चलें।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर दोनों हाथ जोड़कर मातासे गायें चरानेकी आज्ञाके लिये अनुनय-विनय कर रहे हैं।

[२९१]

मैया री मोहि दाऊ टेरत।
मोकौं बन-फल तोरि देत हैं, आपुन गैयनि घेरत॥
और ग्वाल सँग कबहुँ न जैहौं, वै सब मोहि खिझावत।
मैं अपने दाऊ सँग जैहौं, बन देखैं सुख पावत॥
आगैं दै पुनि ल्यावत घर कौं, तू मोहि जान न देति।
सूर स्याम जसुमति मैया सौं हा-हा करि कहै केति॥

(श्यामसुन्दर कहते हैं–) 'अरी मैया ! मुझे दाऊ दादा पुकार रहे हैं। मुझे वे वनके फल तोड़-तोड़कर दिया करते हैं और स्वयं गायें हाँकते-घेरते हैं। दूसरे गोपकुमारोंके साथ कभी नहीं जाऊँगा, वे सब मुझे चिढ़ाते हैं। मैं अपने दाऊ दादाके साथ जाऊँगा, वन देखनेसे मुझे आनन्द मिलता है। फिर वे मुझे आगे करके ले आते हैं। परंतु तू जो मुझे जाने नहीं देती।' सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर मैया यशोदासे कितनी ही अनुनय करके कह रहे हैं!

राग सारंग

[२९२]

बोलि लियौ बलरामहि जसुमति ।
लाल सुनौ हरि के गुन, कालिहिहि तैं लँगरई करत अति ॥
स्यामहि जान देहि मेरैं सँग, तू काहैं डर मानति ।
मैं अपने ढिग तैं नहिं टारौं, जियहिं प्रतीति न आनति ॥
हँसी महरि बल की बतियाँ सुनि, बलिहारी या मुख की ।
जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौं, कहति बीर के रुख की ॥

यशोदाजीने बलरामको बुला लिया (और बोलीं—)'लाल ! तुम इस श्यामके गुण तो सुनो, कलसे ही यह अत्यन्त चपलता कर रहा है ।' (बलराम बोले–)'श्यामको मेरे साथ जाने दो, तुम भय क्यों करती हो । अपने मनमें विश्वास क्यों नहीं करती—मैं अपने पाससे इसे तनिक भी हटने नहीं दूँगा ।' व्रजरानी बलरामजीकी बातें सुनकर हँस पड़ीं (और बोलीं—) 'इस मुखकी बलिहारी, अच्छा इसे लिवा जाओ ।' सूरदासजी कहते हैं कि इस प्रकार (मैयाने) भाई (श्रीकृष्ण)के मनकी बात कह दी ।

राग नट

[२९३]

अति आनंद भए हरि धाए ।
टेरत ग्वाल-बाल सब आवहु, मैया मोहि पठाए ॥
उत तैं सखा हँसत सब आवत, चलहु कान्ह ! बन देखहिं ।
बनमाला तुम कौं पहिरावहिं, धातु-चित्र तनु रेखहिं ॥
गाइ लईं सब घेरि घरनि तैं, महर गोप के बालक ।
सूर स्याम चले गाइ चरावन, कंस उरहि के सालक ॥

श्यामसुन्दर अत्यन्त आनन्दित होकर दौड़ पड़े और गोप-बालकोंको पुकारने लगे—'सब लोग आ जाओ ! मैयाने मुझे भेज दिया है ।'

उधरसे सारे सखा भी हँसते हुए आ रहे हैं (और कह रहे हैं--) कन्हाई! चलो, हमलोग वन देखें। तुमको वनमाला (गूँथकर) पहिनायेंगे और (गेरू, खड़िया, मैनसिल आदि) वन-धातुओंकी रेखाओंसे तुम्हारे शरीरपर चित्र बनवायेंगे।' घरोंसे व्रजगोपोंके बालकोंने सारी गायोंको एकत्र करके हाँक लिया। सूरदासजी कहते हैं कि (इस प्रकार) कंसके हृदयको पीड़ा देनेवाले व्रजराज नन्दके कुमार श्यामसुन्दर गायें चराने चले।

राग बिलावल

[२९४]

नंद महर के भावते, जागौ मेरे बारे।
प्रात भयौ उठि देखिऐ, रवि-किरनि उज्यारे॥
ग्वाल-बाल सब टेरहीं, गैया बन चारन।
लाल! उठौ मुख धोइऐ, लागी बदन उघारन॥
मुख तैं पट न्यारौ कियौ, माता कर अपनैं।
देखि बदन चक्रित भइ, सौंतुष की सपनैं॥
कहा कहौं वा रूप की, को बरनि बतावै।
सूर स्याम के गुन अगम, नँद-सुवन कहावै॥

(दूसरे दिन माता जगा रही हैं-) 'व्रजराज नन्दके लाड़िले, मेरे लाल! जागो, उठकर देखो तो सबेरा हो गया, सूर्यकिरणोंका प्रकाश फैल गया। सब गोपबालक वनमें गायें चरानेके लिये पुकार रहे हैं। लाल! उठो, मुख धो लो।' (यह कहकर) माता मुख खोलने लगी। माताने अपने हाथसे मुखसे वस्त्र अलग कर दिया। (मोहनका) मुख देखकर वे चकित हो गयीं, वे सम्मुख ही (आनन्दसे) सो रहे थे। उस रूप (शोभा)को क्या कहूँ- कौन वर्णन करके उसे बतला सकता है। सूरदासजी कहते हैं कि ये श्यामसुन्दर नन्द-पुत्र कहलाते हैं; किंतु इनके गुण अगम्य हैं (उन्हें जाना नहीं जा सकता)।

राग रामकली

[२९५]

लालहि जगाइ बलि गई माता।
निरखि मुख-चंद-छबि, मुदित भइ मनहिं-मन,
कहत आधैं बचन भयौ प्राता॥
नैन अलसात अति, बार-बार जमुहात,
कंठ लगि जात, हरषात गाता।
बदन पोंछियौ जल जमुन सौं धोइ कै,
कह्यौ मुसुकाइ, कछु खाहु ताता॥
दूध औट्यौ आनि, अधिक मिसिरी सानि,
लेहु माखन पानि प्रान-दाता।
सूर-प्रभु कियौ भोजन बिबिध भाँति सौं,
पियौ पय मोद करि घूँट साता॥

अपने लालको जगाकर माता उसपर न्यौछावर हो गयी। उस चन्द्र-मुखकी शोभा देखकर मन-ही-मन आनन्दित हुई। (श्याम) आधी (अस्पष्ट) वाणीमें कहते हैं—'सबेरा हो गया?' नेत्र अधिक आलस्यभरे हैं, बार-बार जम्हाई लेते हैं, माताके गले लिपट जाते हैं, इससे उसका शरीर हर्षित (पुलकित) हो रहा है। यमुना-जलसे धोकर मुख पोंछ दिया और मुसकराकर (मैया) बोली—'लाल! कुछ खा लो। मेरे प्राणदाता! औटाया (गाढ़ा किया) दूध लायी हूँ, उसमें खूब अधिक मिश्री मिलायी है; (और) यह मक्खन (अपने) हाथपर ले लो।' सूरदासजीके स्वामीने अनेक प्रकारसे भोजन किया और हर्षित होकर (केवल) सात घूँट दूध पिया।

राग ललित

[२९६]

उठे नंद-लाल सुनत जननी मुख बानी।
आलस भरे नैन, सकल सोभा की खानी॥

गोपी जन ,विथकित ह्वै चितवतिं सब ठाढ़ी।
नैन करि चकोर, चंद-बदन प्रीति बाढ़ी॥
माता जल झारी ले, कमल-मुख पखार्‍यौ।
नैन नीर परस करत आलसहिं बिसार्‍यौ॥
सखा द्वार ठाढ़े सब, टेरत हैं बन कौं।
जमुना-तट चलौ कान्ह, चारन गोधन कौं॥
सखा सहित जेंवहु, मैं भोजन कछु कीन्हौ।
सूर स्याम हलधर सँग सखा बोलि लीन्हौ॥

माताके मुखके शब्द सुनकर श्रीनन्दलाल उठ गये (जाग गये)। समस्त शोभाके निर्झर उनके नेत्र आलस्यपूर्ण थे। सब गोपियाँ उस (मुख) को देखती हुई मुग्ध खड़ी रह गयीं। अपने नेत्रोंको उन्होंने चकोर बना लिया, जिनका प्रेम (मोहनके) चन्द्रमुखसे बढ़ता ही जाता था। जलकी झारी लेकर माताने कमलमुखको धोया, नेत्रोंसे जलका स्पर्श होनेसे आलस्य भूल गया (दूर हो गया)। सब सखा द्वारपर खड़े वनमें चलनेके लिये पुकार रहे हैं —'कन्हाई ! गायें चराने यमुना किनारे चलो।' सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दरने बलरामजीके साथ सब सखाओंको बुला लिया (और बड़े भाईसे बोले—) 'दादा ! तुम सखाओंके साथ कलेऊ करो, मैंने कुछ भोजन कर लिया है।'

राग बिलावल

[२९७]

दोउ भैया जेंवत माँ आगैं।
पुनि-पुनि लै दधि खात कन्हाई, और जननि पै माँगैं॥
अति मीठौ दधि आजु जमायौ, बलदाऊ तुम लेहु।
देखौ धौं दधि-स्वाद आपु लै, ता पाछैं मोहि देहु॥
बल-मोहन दोउ जेंवत रुचि सौं, सुख लूटति नँदरानी।
सूर स्याम अब कहत अघाने, अँचवन माँगत पानी॥

दोनों भाई माताके सामने बैठे भोजन कर रहे हैं। कन्हाई बार-बार दही लेकर खाते हैं तथा मैयासे और माँगते हैं। (कहते हैं—) 'आज बहुत मीठा दही जमा है, दाऊ दादा! तुम भी लो। पहिले स्वयं लेकर दहीका स्वाद देख लो, फिर पीछे मुझे देना।' (इस प्रकार) बलराम और श्याम रुचिपूर्वक भोजन कर रहे हैं। श्रीनन्दरानी यह आनन्द लूट रही हैं। सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दर कहने लगे—'अब तृप्त हो गये।' वे आचमन करने (मुँह धोने) के लिये जल माँग रहे हैं।

राग रामकली

[२९८]

(द्वारैं) टेरत हैं सब ग्वाल कन्हैया, आवहु बेर भई।
आवहु बेगि, बिलम जनि लावहु, गैया दूरि गई॥
यह सुनतहिं दोऊ उठि धाए, कछु अँचयौ कछु नाहिं।
कितिक दूर सुरभी तुम छाँड़ी, बन तौ पहुँची नाहिं॥
ग्वाल कह्यौ कछु पहुँची ह्वैहैं, कछु मिलिहैं मग माहिं।
सूरदास बल-मोहन भैया, गैयनि पूछत जाहिं॥

(द्वारपरसे) सब गोपकुमार पुकार रहे हैं—'कन्हाई, आओ! देर हो गयी है। शीघ्र आओ! देर मत करो। गायें दूर चली गयी हैं।' यह सुनते ही दोनों भाई उठकर दौड़ पड़े। कुछ आचमन किया, कुछ नहीं किया (पूरा मुख भी नहीं धोया)। 'तुम लोगोंने गायोंको कितनी दूर छोड़ दिया? कहीं वे वनमें तो नहीं पहुँच गयीं?' (यह पूछनेपर) गोपबालकोंने कहा—'कुछ (वनमें) पहुँच गयी होंगी और कुछ मार्गमें मिलेंगी।' सूरदासजी कहते हैं कि श्याम और बलराम दोनों भाई गायोंको पूछते हुए (कि वे किधर गयी हैं?) चले जा रहे हैं।

राग बिलावल

[२९९]

बन पहुँचत सुरभी लईं जाइ।
जैहौ कहा सखनि कौं टेरत, हलधर संग कन्हाइ॥

जेंवत परखि लियौ नहिं हम कौं, तुम अति करी चँड़ाइ।
अब हम जैहैं दूरि चरावन, तुम सँग रहै बलाइ॥
यह सुनि ग्वाल धाइ तहँ आए, स्यामहि अंकम लाइ।
सखा कहत यह नंद-सुवन सौं, तुम सब के सुखदाइ॥
आजु चलौ बृंदावन जैऐ, गैयाँ चरैं अघाइ।
सूरदास-प्रभु सुनि हरषित भए, घर तैं छाँक मँगाइ॥

वन पहुँचते-पहुँचते गायोंको पकड़ लिया (उनके समीप पहुँचकर उन्हें घेर लिया)। फिर बलरामजीके साथ कन्हाई सखाओंको पुकारने लगे—'(तुमलोग) कहाँ जाओगे ? भोजन करते समय तुमने हमारी प्रतीक्षा नहीं की, बहुत उतावली की, अब हम दूर (गायें) चराने जायँगे, तुम्हारे साथ मेरी बला रहे ।' यह सुनकर गोपबालक वहाँ दौड़े आये और श्यामसुन्दरको हृदयसे लगा लिया। सखा नन्दकुमारसे यह बोले—'तुम तो सभीको सुख देनेवाले हो; चलो, आज वृन्दावन चलें, वहाँ गायें तृप्त होकर चरें।' सूरदासके स्वामी यह सुनकर प्रसन्न हो गये, उन्होंने घरसे छाक (दोपहरका भोजन) मँगवा लिया।

[३००]

चले सब बृंदावन समुहाइ।
नंद-सुवन सब ग्वालनि टेरत, ल्यावहु गाइ फिराइ॥
अति आतुर ह्वै फिरे सखा सब, जहँ-तहँ आए धाइ।
पूछत ग्वाल बात किहिं कारन, बोले कुँवर कन्हाइ॥
सुरभी बृंदावन कौं हाँकौ, औरनि लेहु बुलाइ।
सूर स्याम यह कही सबनि सौं, आपु चले अतुराइ॥

सब (बालक) एकत्र होकर वृन्दावन चले। नन्दनन्दन सब गोपबालकोंको पुकार रहे हैं—'गायोंको घुमा लाओ।' इससे सब सखा अत्यन्त आतुर होकर लौटे और जहाँ-तहाँसे दौड़े आये। गोपबालक यह बात पूछ रहे हैं—'कुँवर कन्हाई ! किसलिये हम सबको तुमने बुलाया ?'

सूरदासजी कहते हैं 'श्यामसुन्दरने सबसे यह कहा कि 'गायें वृन्दावनके लिये हाँको, दूसरे सब सखाओंको भी बुला लो !' और स्वयं (भी) शीघ्रतापूर्वक चल पड़े ।

राग धनाश्री

[३०१]

गैयनि घेरि सखा सब ल्याए।
देख्यौ कान्ह जात बृंदावन, यातैं मन अति हरष बढ़ाए ॥
आपुस मैं सब करत कुलाहल, धौरी, धूमरि धेनु बुलाए ।
सुरभी हाँकि देत सब जहँ-तहँ, टेरि-टेरि हेरी सुर गाए ॥
पहुँचे आइ बिपिन घन बृंदा, देखत द्रुम दुख सबनि गँवाए ।
सूर स्याम गए अघा मारि जब, ता दिन तैं इहिं बन अब आए॥

सब सखा गायोंको एकत्र करके हाँक लाये; उन्होंने देखा कि कन्हाई वृन्दावन जा रहा है, इससे उनके मनमें अत्यन्त हर्ष हुआ । धौरी, धूमरी गायोंको पुकार-पुकारकर सब परस्पर कोलाहल कर रहे हैं । सब गायोंको इधर-उधर हाँक देते हैं और उच्चस्वरसे 'हेरी' स्वरमें (पदोंमें 'हेरी' शब्द लगाकर) गा रहे हैं । सब-के-सब सघन वृन्दावनमें आ पहुँचे, वहाँके वृक्षोंको देखकर सभीके कष्ट (सारी थकावट) दूर हो गये । सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दर जिस दिन अघासुरको मारकर गये थे, उस दिनके बाद आज इस वनमें आये हैं ।

राग नट-नारायन

[३०२]

चरावत बृंदावन हरि धेनु ।
ग्वाल सखा सब संग लगाए, खेलत हैं करि चैनु ॥
कोउ गावत, कोउ मुरलि बजावत, कोउ बिषान, कोउ बेनु ।
कोउ निरतत कोउ उघटि तार दै, जुरि ब्रज-बालक-सेनु ॥

त्रिबिध पवन जहँ बहत निसादिन, सुभग कुंज घन ऐनु।
सूर स्याम निज धाम बिसारत, आवत यह सुख लैनु ॥

श्रीकृष्णचन्द्र वृन्दावनमें गायें चरा रहे हैं और सब गोपसखाओं-को साथ लेकर आनन्दकी सृष्टि करते हुए खेल रहे हैं। कोई गाता है, कोई वंशी बजाता है, कोई सींग बजाता है और कोई बाँसकी नली ही बजाता है। व्रजके बालकोंकी सेना एकत्र हो गयी है; उनमें कोई नाचता है, कोई ताल देकर समपर तान तोड़ता है। जहाँ त्रिविध (शीतल, मन्द, सुगन्ध) पवन रात-दिन चलता है और सुन्दर घने कुञ्ज ही निवासस्थान हैं, सूरदासजी कहते हैं—वहाँ (वृन्दावनमें) श्यामसुन्दर अपने घरको भी भूलकर यह (क्रीड़ा-का) सुख लेने आते हैं।

राग धनाश्री

[३०३]

बृंदाबन मोकौं अति भावत।
सुनहु सखा तुम सुबल, श्रीदामा,
ब्रज तैं बन गौ चारन आवत ॥
कामधेनु सुरतरु सुख जितने,
रमा सहित बैकुंठ भुलावत।
इहिं बृंदाबन, इहिं जमुना-तट,
ये सुरभी अति सुखद चरावत ॥
पुनि-पुनि कहत स्याम श्रीमुख सौं,
तुम मेरैं मन अतिहिं सुहावत।
सूरदास सुनि ग्वाल चकृत भए,
यह लीला हरि प्रगट दिखावत ॥

(श्यामसुन्दर कहते हैं—)'सखा सुबल, श्रीदामा, तुमलोग सुनो! वृन्दावन मुझे बहुत अच्छा लगता है, इसीसे व्रजसे मैं यहाँ वनमें गायें

चराने आता हूँ। कामधेनु, कल्पवृक्ष आदि जितने वैकुण्ठके सुख हैं, लक्ष्मीके साथ वैकुण्ठके उन सब सुखोंको मैं भूल जाता हूँ। इस वृन्दावनमें, यहाँ यमुनाकिनारे इन गायोंको चराना मुझे अत्यन्त सुखदायी लगता है।' श्यामसुन्दर बार-बार अपने श्रीमुखसे कहते हैं—'तुमलोग मेरे मनको बहुत अच्छे लगते हो।' सूरदासजी कहते हैं कि गोपबालक यह सुनकर चकित हो गये, श्रीहरि अपनी लीलाका यह रहस्य उन्हें प्रत्यक्ष दिखला (बतला) रहे हैं।

राग बिलावल

[३०४]

ग्वाल सखा कर जोरि कहत हैं,
हमहि स्याम! तुम जनि बिसरावहु।
जहाँ-जहाँ तुम देह धरत हौ,
तहाँ-तहाँ जनि चरन छुड़ावहु॥
ब्रज तैं तुमहि कहूँ नहिं टारौं,
यहै पाइ मैंहूँ ब्रज आवत।
यह सुख नहिं कहुँ भुवन चतुर्दस,
इहिं ब्रज यह अवतार बतावत॥
और गोप जे बहुरि चले घर,
तिन सौं कहि ब्रज छाक मँगावत।
सूरदास-प्रभु गुप्त बात सब,
ग्वालनि सौं कहि-कहि सुख पावत॥

गोपसखा हाथ जोड़कर कहते हैं—'श्यामसुन्दर! तुम हमें कभी भूलना मत। जहाँ-जहाँ भी तुम शरीर (अवतार) धारण करो, वहाँ-वहाँ हमसे अपने चरण छुड़ा मत लेना (हमें भी साथ ही रखना)।' (श्रीकृष्णचन्द्र बोले—) 'व्रजसे तुमलोगोंको कहीं पृथक् नहीं हटाऊँगा;

क्योंकि यही (तुम्हारा साथ) पाकर तो मैं भी व्रजमें आता हूँ । इस व्रजमें इस अवतारमें जो आनन्द प्राप्त हो रहा है, यह आनन्द चौदहों लोकोंमें कहीं नहीं है ।' यह मोहनने बतलाया तथा जो कुछ गोपबालक लौटकर घर जा रहे थे, उनसे कहकर 'छाक' (दोपहरका भोजन) मँगवाया । सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामी अपने गोप-सखाओंसे सब गुप्त (रहस्यकी) बातें बतला-बतलाकर आनन्द पाते हैं ।

[३०५]

काँधे कान्ह कमरिया कारी, लकुट लिए कर घेरै हो ।
बृंदाबन मैं गाइ चरावै, धौरी, धूमरि टेरै हो ॥
लै लिवाइ ग्वालनि बुलाइ कै, जहँ-तहँ बन-बन हेरै हो ।
सूरदास प्रभु सकल लोकपति, पीतांबर कर फेरै हो ॥

कन्हाई कंधेपर काला कम्बल और हाथमें छड़ी लेकर गायें हाँकता है । वृन्दावनमें वह गायें चराता है और 'धौरी' 'धूमरी' इस प्रकार नाम ले-लेकर उन्हें पुकारता है । गोपकुमारोंको पुकारकर साथ लेकर-लिवाकर जहाँ-तहाँ वन-वनमें उन (गायों)को ढूँढ़ता है । सूरदासका यह स्वामी समस्त लोकोंका नाथ होनेपर भी हाथसे पीताम्बर (पटुका) उड़ा रहा है । (इस संकेतसे गायोंको बुला रहा है ।)

व्रज-प्रवेश-शोभा

राग गौरी

[३०६]

वै मुरली की टेर सुनावत ।
बृंदाबन सब बासर बसि निसि-आगम जानि चले ब्रज आवत ॥
सुबल, सुदामा, श्रीदामा सँग, सखा मध्य मोहन छबि पावत ।
सुरभी-गन सब लै आगैं करि, कोउ टेरत कोउ बेनु बजावत ॥
केकी-पच्छ-मुकुट सिर भ्राजत, गौरी राग मिलै सुर गावत ।
सूर स्याम के ललित बदन पर, गोरज-छबि कछु चंद छपावत ॥

पूरे दिनभर वृन्दावनमें रहकर, रात्रि आनेवाली है—यह समझकर वह (श्याम) वंशीकी ध्वनि सुनाता हुआ व्रज चला आ रहा है। सुबल, सुदामा, श्रीदामा आदि सखाओंके बीचमें मोहन शोभित हो रहा है। गायोंके समूहको सबोंने हाँककर आगे कर लिया है; कोई पुकार रहा है और कोई वंशी बजा रहा है। (श्यामके) मस्तकपर मोरपंखका मुकुट शोभा दे रहा है और वह गौरी रागमें (सखाओंसे) स्वर मिलाकर गा रहा है। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरके मनोहर मुखपर गायोंके पदोंसे उड़ी धूलि ऐसी लगती है जैसे चन्द्रमा कुछ-कुछ (बादलोंमें) छिपा है।

[३०७]

हरि आवत गाइनि के पाछे।
मोर-मुकुट मकराकृति कुंडल, नैन बिसाल कमल तैं आछे॥
मुरली अधर धरन सीखत हैं, बनमाला पीतांबर काछे।
ग्वाल-बाल सब बरन-बरन के, कोटि मदन की छबि किए पाछे॥
पहुँचे आइ स्याम ब्रज पुर मैं, घरहिं चले मोहन-बल आछे।
सूरदास-प्रभु दोउ जननी मिलि लेति बलाइ बोलि मुख बाछे॥

श्रीकृष्णचन्द्र गायोंके पीछे-पीछे आ रहे हैं। मयूरपिच्छका मुकुट है, मकरके आकारवाले कुण्डल हैं, बड़े-बड़े नेत्र कमलसे भी अधिक सुन्दर हैं, अभी ओष्ठोंपर वंशी रखना सीख ही रहे हैं, वनमाला पहिने हैं तथा पीताम्बरकी कछनी बाँधे हैं। सब गोपबालक अनेक रंगोंके हैं, वे करोड़ों कामदेवोंकी शोभाको भी पीछे किये (उससे भी अधिक सुन्दर) हैं। श्यामसुन्दर व्रजपुरीमें आ पहुँचे, श्रीबलराम और मोहन भली प्रकार अपने घर चले। सूरदासके स्वामीसे दोनों माताएँ (यशोदाजी और रोहिणीजी) मिलीं और मुखसे 'मेरे लाल!' कहती हुई बलैयाँ लेने लगीं।

[३०८]

आजु हरि धेनु चराए आवत।
मोर-मुकुट बनमाल बिराजत, पीतांबर फहरावत॥

जिहिं-जिहिं भाँति ग्वाल सब बोलत, सुनि स्रवननि मन राखत।
आपुन टेर लेत ताही सुर, हरषत पुनि पुनि भाषत॥
देखत नंद-जसोदा-रोहिनि, अरु देखत ब्रज-लोग।
सूर स्याम गाइनि सँग आए, मैया लीन्हे रोग॥

आज श्याम गायें चराकर आ रहे हैं। मयूरपिच्छका मुकुट और वनमाला शोभा दे रही है, पीताम्बरका पटुका उड़ रहा है। सब गोपसखा जिस-जिस प्रकारसे बोलते हैं, उसी प्रकारसे (उसी भावसे) उनकी बातें सुनते हैं तथा उनका मन रखते हैं। स्वयं भी (सखाओंके स्वर-में-स्वर मिलाकर) उसी स्वरमें टेर लगाते हैं और हर्षित होकर बार-बार उसे ही दुहराते हैं। श्रीनन्दजी, यशोदा मैया और रोहिणी माता देख रही हैं, व्रजके सब लोग (उनका आना) देख रहे हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दर गायोंके साथ आ गये। मैयाने—'मेरे लालकी सब रोग-व्याधि मुझे लगे' यह कहकर उनकी बलैयाँ ली।

राग कान्हरौ

[३०९]

आजु बने बन तैं ब्रज आवत।
नाना रंग सुमन की माला, नंदनँदन-उर पर छबि पावत॥
संग गोप गोधन-गन लीन्हे, नाना गति कौतुक उपजावत।
कोउ गावत, कोउ नृत्य करत, कोउ उघटत, कोउ करताल बजावत॥
राँभति गाइ बच्छ हित सुधि करि, प्रेम उमँगि थन दूध चुवावत।
जसुमति बोलि उठी हरषित ह्वै, कान्हा धेनु चराए आवत॥
इतनी कहत आइ गए मोहन, जननी दौरि हिए लै लावत।
सूर स्याम के कृत्य जसोमति, ग्वाल-बाल कहि प्रगट सुनावत॥

आज मोहन वनसे सजे हुए आ रहे हैं। अनेक रंगोंके पुष्पोंकी माला श्रीनन्दनन्दनके वक्षःस्थलपर शोभा दे रही है। साथमें गोपकुमार तथा

गायोंका समूह लिये अनेक प्रकारकी चाल चलकर कुतूहलकी सृष्टि करते आते हैं। कोई गाता है, कोई समस्वर तान तोड़ रहा है, कोई उछलता है और कोई हाथसे तालियाँ बजाता है। गायें बछड़ोंका स्मरण करके उनके लिये प्रेमसे रँभा रही हैं और प्रेमसे उमंगमें भरकर थनोंसे दूध टपका रही हैं। श्रीयशोदाजी हर्षित होकर पुकार उठीं—'कन्हाई गायें चराकर आ रहा है।' (उनके) इतना कहते ही मोहन आ गये, माता दौड़कर (उठाकर) उन्हें हृदयसे लगा रही हैं। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरके (वनमें किये) काम गोपबालक स्पष्ट वर्णन करके यशोदाजीको सुनाते हैं।

राग गौरी

[३१०]

बल-मोहन बन तैं दोउ आए।
जननि जसोदा मातु रोहिनी, हरषित कंठ लगाए॥
काहैं आजु अबार लगाई, कमल-बदन कुम्हिलाए।
भूखे गए आजु दोउ भैया, करन कलेउ न पाए॥
देखहु जाइ कहा जेवन कियौ, रोहिनि तुरत पठाई।
मैं अन्हवाए देति दुहुनि कौं, तुम अति करौ चँड़ाई॥
लकुट लियौ, मुरली कर लीन्ही, हलधर दियौ बिषान।
नीलांबर-पीतांबर लीन्हे, सैंति धरति करि प्रान॥
मुकुट उतारि धर्‌यौ लै मंदिर, पोंछति है अँग-धातु।
अरु बनमाल उतारति गर तैं, सूर स्याम की मातु॥

बलराम और श्याम—दोनों भाई वनसे आ गये। हर्षित होकर मैया यशोदा तथा माता रोहिणीने उन्हें गले लगाया। (वे बोलीं—) 'आज देर क्यों कर दी? तुम्हारे कमलमुख तो सूख रहे हैं। आज दोनों भाई खाली पेट गये थे, कलेऊ भी नहीं कर पाये थे। तुम जाकर देखो तो क्या भोजन बना है।' (यह कहकर यशोदाजीने) रोहिणीजीको तुरंत भेज

दिया—'मैं दोनोंको स्नान कराये देती हूँ, तुम अत्यन्त शीघ्रता करो।' (माताने) छड़ी ली, हाथमें वंशी ले ली, बलरामजीने सींग दे दिया, नीलाम्बर और पीताम्बर लेकर अपने प्राणोंके समान सम्हालकर मैया उनको रखती है। उन्होंने मुकुट उतारकर घरके भीतर ले जाकर रख दिया, सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरकी माता उनके गलेसे वनमाला भी उतार रही हैं और अब शरीरमें लगी (गेरू, खड़िया आदि) धातुएँ पोंछ रही हैं।

[३११]

मैया ! हौं न चरैहौं गाइ।
सिगरे ग्वाल घिरावत मोसौं, मेरे पाइ पिराइँ॥
जौ न पत्याहि पूछि बलदाउहि, अपनी सौंह दिवाइ।
यह सुनि माइ जसोदा ग्वालनि, गारी देति रिसाइ॥
मैं पठवति अपने लरिका कौं, आवै मन बहराइ।
सूर स्याम मेरौ अति बालक, मारत ताहि रिंगाइ॥

(श्यामसुन्दर कहते हैं—) 'मैया ! मैं गाय नहीं चराऊँगा। सभी गोपबालक मुझसे ही गायें हँकवाते हैं, (दौड़ते-दौड़ते) मेरे पैर दर्द करने लगते हैं। यदि तुझे विश्वास न हो तो दाऊ भैयाको अपनी शपथ देकर पूछ ले।' सूरदासजी कहते हैं, यह सुनकर मैया यशोदा रुष्ट होकर ग्वालोंको गाली देने लगीं (और बोलीं—) 'मैं तो अपने लड़केको इसलिये भेजती हूँ कि वह (अपना) मन बहला आवे; मेरा श्याम निरा बालक है, उसे सब दौड़ा-दौड़ाकर मारे डालते हैं।'

[३१२]

मैया ! बहुत बुरौ बलदाऊ।
कहन लग्यौ बन बड़ो तमासौ, सब मौड़ा मिलि आऊ॥
मोहूँ कौं चुचकारि गयो लै, जहाँ सघन बन झाऊ।
भागि चलौ कहि गयौ उहाँ तैं, काटि खाइ रे हाऊ॥

हौं डरपौं, काँपौं अरु रोवौं, कोउ नहिं धीर धराऊ।
थरसि गयौं नहिं भागि सकौं, वै भागे जात अगाऊ॥
मोसौं कहत मोल कौ लीनौ, आपु कहावत साऊ।
सूरदास बल बड़ौ चवाई, तैसेहिं मिले सखाऊ॥

(श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं—) 'मैया ! यह दाऊ दादा बहुत बुरा है। कहने लगा कि 'वनमें बड़ा तमाशा (अद्भुत दृश्य) है, सभी बालक एकत्र होकर आ जाओ।' मुझे भी पुचकारकर वहाँ ले गया, जहाँ झाउओंका घना वन है। (वहाँ जानेपर) यह कहकर भाग गया कि 'अरे भाग चलो, यहाँ हाऊ काट खायेगा।' मैं डरता था, काँपता था और रोता था; मुझे धैर्य दिलानेवाला भी कोई नहीं था। मैं डर गया था, भाग पाता नहीं था, वे सब आगे-आगे भागे जाते थे। मुझसे कहता है कि 'तू मोल लिया हुआ है और स्वयं भला कहलाता है।' सूरदासजी कहते हैं—(मैयाने कहा—) 'बलराम तो बड़ा झूठा है और वैसे ही सखा भी मिल गये हैं।'

[३१३]

तुम कत गाइ चरावन जात।
पिता तुम्हारौ नंद महर सौ, अरु जसुमति सी जाकी मात॥
खेलत रहौ आपने घर मैं, माखन दधि भावै सो खात।
अमृत बचन कहौ मुख अपने, रोम-रोम पुलकित सब गात॥
अब काहू के जाहु कहूँ जनि, आवति हैं जुवती इतरात।
सूर स्याम मेरे नैननि आगे तैं कत कहूँ जात हौ तात॥

सूरदासजी कहते हैं—(मैया बोली—) 'तुम गायें चराने क्यों जाते हो ? व्रजराज नन्द-जैसे तुम्हारे पिता हैं और (मुझ) यशोदा-जैसी तुम्हारी माता है। तुम अपने घरपर ही खेलते रहो और मक्खन-दही—जो अच्छा लगे, खा लिया करो। अपने मुखसे अमृतके समान बातें कहो। (तुम्हारी मधुर

वाणी सुनकर) मेरे पूरे शरीरका रोम-रोम पुलकित हो जाता है । अब किसीके घर कहीं मत जाओ । ये युवतियाँ तो गर्वमें फूली (कुछ-न-कुछ दोष लगाने) आती ही हैं । मेरे लाल ! श्यामसुन्दर ! मेरी आँखोंके आगेसे कहीं भी क्यों जाते हो ?'

[३१४]

माँगि लेहु जो भावै प्यारे ।
बहुत भाँति मेवा सब मेरैं, षटरस ब्यंजन न्यारे ॥
सबै जोरि राखति हित तुम्हरैं, मैं जानति तुम बानि ।
तुरत मथ्यौ दधिमाखन आछौ, खाहु देउँ सो आनि ॥
माखन-दधि लागत अति प्यारौ, और न भावै मोहि ।
सूर जननि माखन-दधि दीन्हौ, खात हँसत मुख जोहि ॥

(माताने कहा—) 'प्यारे लाल ! जो रुचे, वह माँग लो । मेरे घर बहुत प्रकारके सभी मेवे हैं, षट्रस भोजनके पदार्थ अलग रखे हैं । यह सब तुम्हारे लिये ही मैं एकत्र कर रखती हूँ, क्योंकि तुम्हारा स्वभाव मैं जानती हूँ । तुरंतके मथे दहीसे निकला अच्छा मक्खन है; उसे लाकर देती हूँ, खा लो ।' (श्यामसुन्दर बोले—) 'मुझे मक्खन और दही अत्यन्त प्रिय लगता है, और कुछ मुझे रुचता नहीं ।' सूरदासजी कहते हैं कि मैयाने दही-मक्खन दिया; उसे खाते हुए हँस रहे हैं, माता उनका मुख देख रही है ।

राग आसावरी

[३१५]

सुनि मैया, मैं तौ पय पीवौं,मोहि अधिक रुचि आवै री ।
आजु सवारैं धेनु दुही मैं, वहै दूध मोहि प्यावै री ॥
और धेनु कौ दूध न पीवौं, जो करि कोटि बनावै री ।
जननी कहति दूध धौरी कौ, पुनि-पुनि सौंह करावै री ॥
तुम तैं मोहि और को प्यारौ, बारंबार मनावै री ।
सूर स्याम कौं पय धौरी कौ माता हित सौं ल्यावै री ॥

(मोहन बोले—) 'मैया ! सुन, मैं तभी दूध पीऊँगा और तभी वह मुझे अत्यन्त रुचिकर लगेगा, जब आज सबेरे मैंने जो गाय दुही थी, उसीका दूध यदि तू मुझे पिलाये। चाहे तू करोड़ों उपाय करके बनाये (दूधको गाढ़ा मीठा आदि करे), तो भी दूसरी गायका दूध नहीं पीऊँगा।' माता कहती हैं—यह उसी धवलाका दूध है, (इतनेपर भी मानते नहीं) बार-बार शपथ करवाते हैं। माता बार-बार (यह कहकर) मनाती हैं—'मुझे तुमसे अधिक प्यारा और कौन है (जिसे देनेके लिये धवलाका दूध रखूँगी)।' सूरदासजी कहते हैं कि माता श्यामसुन्दरके लिये बड़े प्रेमसे धवला गायका दूध लाती हैं।

राग गौरी

[३१६]

आछौ दूध पियौ मेरे तात।
तातौ लगत बदन नहिं परसत, फूँक देति है मात॥
औटि धर्‌यौ है अबहीं मोहन, तुम्हरैं हेत बनाइ।
तुम पीवौ, मैं नैननि देखौं, मेरे कुँवर कन्हाइ॥
दूध अकेली धौरी कौ यह, तन कौं अति हितकारि।
सूर स्याम पय पीवन लागे, अति तातौ दियौ डारि॥

(मैया कहती है—) 'मेरे लाल ! बड़ा अच्छा दूध है, पी लो।' गरम लगता है, इससे मुखसे छूते नहीं—माता फूँक देकर शीतल करती है। (वह कहती है—) 'मोहन ! इसे अभी-अभी तुम्हारे ही लिये बनाकर (भली प्रकार) उबालकर रखा है। मेरे कुँवर कन्हाई ! तुम पीओ और मैं अपनी आँखों (तुम्हें दूध पीते) देखूँ। यह केवल धौरीका दूध है, शरीरके लिये अत्यन्त लाभकारी है।' सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दर दूध पीने लगे; किंतु वह अत्यन्त गरम था, इससे गिरा दिया।

राग कल्यान

[३१७]

ये दोऊ मेरे गाइ-चरैया।
मोल बिसाहि लियौ मैं तुम कौं, जब दोउ रहे नन्हैया॥

तुम सौं टहल करावति निसि-दिन, और न टहल करैया।
यह सुनि स्याम हँसे कहि दाऊ, झूठ कहति है मैया॥
जानि परत नहिं साँच झुठाई, चारत धेनु झुरैया।
सूरदास जसुदा मैं चेरी कहि-कहि लेति बलैया॥

(मैया यशोदा विनोदमें कहती हैं—) 'ये दोनों मेरी गायें चरानेवाले हैं। तुम दोनों जब बहुत छोटे थे, तभी मैंने तुमको दाम देकर खरीद लिया था। इसीलिये तो तुम दोनोंसे रात-दिन सेवा कराती हूँ, मेरे यहाँ दूसरा कोई सेवा करनेवाला है कहाँ।' यह सुनकर श्यामसुन्दर यह कहते हुए हँस पड़े— 'दाऊ दादा! मैया झूठ बोल रही है।' सूरदासजी कहते हैं—यशोदाजी बोलीं—सच और झूठ भी (तुम्हें) समझ नहीं पड़ती; देखो तो गायें चरवाते-चरवाते तुम दोनोंको मैंने सुखा डाला; (किंतु सच तो यह है कि) मैं ही तुम्हारी सेविका हूँ। यह कह-कहकर बलैयाँ लेती हैं।

राग बिहागरौ

[३१८]

सोवत नींद आइ गई स्यामहि।
महरि उठी पौढ़ाइ दुहुनि कौं, आपु लगी गृह कामहिं॥
बरजति है घर के लोगनि कौं, हरुएँ लै-लै नामहि।
गाढ़े बोलि न पावत कोऊ, डर मोहन-बलरामहि॥
सिव-सनकादि अंत नहिं पावत, ध्यावत अह-निसि-जामहिं।
सूरदास-प्रभु ब्रह्म सनातन, सो सोवत नँद-धामहिं॥

सोते ही श्यामसुन्दरको निद्रा आ गयी। व्रजरानी दोनों भाइयोंको सुलाकर उठीं और स्वयं घरके काममें लग गयीं। धीरे-धीरे नाम ले-लेकर घरके लोगोंको मना करती हैं, मोहन और बलरामजीके (जाग जानेके) भयसे कोई जोरसे बोल नहीं पाता है। सूरदासजी कहते हैं—रात-दिन प्रत्येक समय ध्यान करते हुए भी शंकरजी तथा सनकादि ऋषि जिनका अन्त नहीं पाते, वे ही सनातन ब्रह्मस्वरूप मेरे स्वामी नन्दभवनमें सो रहे हैं।

[३१९]

देखत नंद कान्ह अति सोवत ।
भूखे गए आजु बन भीतर, यह कहि-कहि मुख जोवत ॥
कह्यौ नहीं मानत काहू कौ, आपु हठी दोउ बीर ।
बार-बार तनु पोंछत कर सौं, अतिहिं प्रेम की पीर ॥
सेज मँगाइ लई तहँ अपनी, जहाँ स्याम-बलराम ।
सूरदास प्रभु कैं ढिग सोए, सँग पौढ़ी नँद-बाम ॥

श्रीनन्दजी देख रहे हैं कि कन्हाई गाढ़ी निद्रामें सो रहे हैं। 'आज यह वनमें भूखा ही गया था ।' यह कह-कहकर (अपने लालका) मुख देखते हैं। 'ये दोनों भाई अपनी ही हठ करनेवाले हैं, दूसरे किसीका कहना नहीं मानते ।'(यह कहते हुए व्रजराज) बार-बार हाथसे (पुत्रोंका) शरीर पोंछते (सहलाते) हैं, प्रेमकी अत्यन्त पीड़ा उन्हें हो रही है । जहाँ श्याम-बलराम सो रहे थे, वहीं अपनी भी शय्या उन्होंने मँगा ली। सूरदासजी कहते हैं कि (आज) व्रजराज मेरे स्वामीके पास ही सोये, श्रीनन्दरानी भी (वहाँ) पुत्रोंके साथ ही सोयीं ।

राग बिलावल

[३२०]

जागियै गोपाल लाल, प्रगट भई अंसु-माल,
मिट्यौ अंधकाल, उठौ जननी-सुखदाई ।
मुकुलित भए कमल-जाल, कुमुद-बृंद बन बिहाल,
मेटहु जंजाल, त्रिबिध ताप तन नसाई ॥
ठाढ़े सब सखा द्वार, कहत नंद के कुमार,
टेरत हैं बार-बार, आइयै कन्हाई ।
गैयनि भइ बड़ी बार, भरि-भरि पय थननि भार,
बछरा-गन करैं पुकार, तुम बिनु जदुराई ॥

तातैं यह अटक परी, दुहन-काल सौंह करी,
आवहु उठि क्यौं न हरी, बोलत बल भाई।
मुख तैं पट झटकि डारि, चंद-बदन दियौ उघारि,
जसुमति बलिहारि वारि, लोचन-सुखदाई॥
धेनु दुहन चले धाइ, रोहिनी लई बुलाइ,
दोहनि मोहि दै मँगाइ, तबहीं लै आई।
बछरा दियौ थन लगाइ, दुहत बैठि कै कन्हाइ,
हँसत नंदराइ, तहाँ मातु दोउ आई॥
दोहनि कहुँ दूध-धार, सिखवत नँद बार-बार,
यह छबि नहिं वार-पार, नंद-घर बधाई।
हलधर तब कह्यौ सुनाइ, धेनु बन चलौ लिवाइ,
मेवा लीन्हौ मँगाइ, बिविध-रस मिठाई॥
जेंवत बलराम-स्याम, संतन के सुखद धाम,
धेनु-काज नहिं बिराम, जसुदा जल ल्याई।
स्याम-राम मुख पखारि, ग्वाल-बाल दिए हँकारि,
जमुना-तट मन बिचारि, गाइनि हँकराई॥
सृंग-बेनु-नाद करत, मुरली मधु अधर धरत,
जननी-मन हरत, ग्वाल गावत सुघराई।
बृंदाबन तुरत जाइ, धेनु चरति तृन अघाइ,
स्याम हरष पाइ, निरखि सूरज बलि जाई॥

(माता कहती हैं—) गोपाल लाल ! जागो, सूर्यकी किरणें दीखने लगीं, अन्धकार मिट गया, माताको सुख देनेवाले लाल ! उठो ! कमल-समूह खिल गये, कुमुदिनियोंका वृन्द जलमें मलिन पड़ गया, (तुम उठकर) सब जंजाल दूर करो, (व्रजवासियोंके) शरीरके तीनों (आधिदैविक, आधिभौतिक, आध्यात्मिक) कष्ट नष्ट कर दो। सब सखा द्वारपर खड़े हैं,

वे बार-बार पुकारकर कह रहे हैं—'नन्दलाल ! कन्हाई ! आओ, गायोंको बड़ी देर हो गयी, उनके थन दूधके भारसे बहुत भर गये हैं, यदुनाथ ! तुम्हारे बिना बछड़ोंका समूह भी (दूध पीनेके लिये) पुकार कर रहा है। यह रुकावट इसलिये पड़ गयी है कि दुहते समय तुमने शपथ दिला दी (कि मेरे आये बिना गायें मत दुहना)। तुम्हारे भैया बलराम बुला रहे हैं—'श्यामसुन्दर ! उठकर आते क्यों नहीं हो ?' (यह सुनकर मोहनने) मुखसे झटककर वस्त्र दूर कर दिया, चन्द्रमुख खोल दिया। माता यशोदाके नेत्रोंको बड़ा सुख मिला, माताने जल न्योछावर किया (और पी लिया)। (श्याम) दौड़कर गाय दुहने चले और माता रोहिणीको बुलाया—'मुझे दोहनी मँगा दो।' तभी माता (दोहनी) ले आयीं। बछड़ेको थनसे लगा दिया, कन्हाई बैठकर दूध दुहने लगे, व्रजराज नन्दजी (खड़े) हँस रहे हैं, वहाँ दोनों माताएँ भी आ गयीं। कहीं दोहनी है और कहीं दूधकी धार जाती है, नन्दजी बार-बार सिखला रहे हैं; इस शोभाका कोई अन्त नहीं है, श्रीनन्दजीके घरमें बधाई बज रही है। तब बलरामजीने सम्बोधन करके कहा—'गायें वनको ले चलो।' मेवा और अनेक प्रकारके स्वादवाली मिठाइयाँ मँगा लीं। सत्पुरुषोंके आनन्दधाम श्रीश्याम और बलराम भोजन कर रहे हैं; किंतु गायोंके लिये (गायोंकी चिन्तासे) उन्हें अवकाश नहीं है। माता यशोदा जल ले आयीं, बलराम-श्यामने मुख धोकर गोप-बालकोंको पुकार लिया, यमुना-किनारे जानेकी इच्छा करके गायोंको हँकवा दिया। सब शृङ्ग और वेणु (बाँसकी नली) का शब्द करते हैं, अधरोंपर वंशी रखकर मधुर ध्वनिमें बजाते हुए माताका चित्त हरण करते हैं, गोप-बालक सुघराई राग गा रहे हैं। तत्काल वृन्दावन जाकर गायें संतुष्ट होकर घास चर रही हैं, श्यामसुन्दर इससे हर्षित हो रहे हैं। यह शोभा देखकर सूरदास बलिहारी जाता है।

राग धनाश्री

[३२१]

हेरी देत चले सब बालक।
आनँद सहित जात हरि खेलत, संग मिले पशु-पालक ॥

कोउ गावत, कोउ बेनु बजावत, कोउ नाचत, कोउ धावत।
किलकत कान्ह देखि यह कौतुक, हरषि सखा उर लावत॥
भली करी तुम मोकौं ल्याए, मैया हरषि पठाए।
गोधन-बृंद लिए ब्रज-बालक, जमुना-तट पहुँचाए॥
चरति धेनु अपनैं-अपनैं रँग, अतिहिं सघन बन चारौ।
सूर संग मिलि गाइ चरावत, जसुमति कौ सुत बारौ॥

सब बालक 'हेरी' देते (गायोंको हाँकते-पुकारते) चले जा रहे हैं। श्याम आनन्दके साथ चरवाहोंके साथ मिलकर खेलते हुए जा रहे हैं। कोई गाता है, कोई वेणु बजाता है, कोई नाचता है और कोई दौड़ता है। कन्हाई यह क्रीड़ा देखकर किलकारियाँ लेते हैं और आनन्दित होकर सखाओंको हृदयसे लगा लेते हैं। (कहते हैं—) 'तुमलोगोंने अच्छा किया जो मुझे साथ ले आये, मैयाने भी प्रसन्नतापूर्वक भेजा है। व्रजके बालक गायोंका झुंड साथ लिये यमुना-किनारे पहुँच गये। वन खूब सघन है, वहाँ चरने योग्य तृण बहुत है, गायें अपनी-अपनी मौजसे चर रही हैं। सूरदासजी कहते हैं कि ये बालक यशोदानन्दन (बालकोंके) साथ होकर गायें चरा रहे हैं।

राग नट

[३२२]

चले बन धेनु चारन कान्ह।
गोप-बालक कछु सयाने, नंद के सुत नान्ह॥
हरष सौं जसुमति पठाए, स्याम-मन आनंद।
गाइ गो-सुत गोप बालक, मध्य श्री नँद-नंद॥
सखा हरि कौं यह सिखावत, छाँड़ि जिनि कहुँ जाहु।
सघन बृंदावन अगम अति, जाइ कहुँ न भुलाहु॥

सूर के प्रभु हँसत मन मैं, सुनत हीं यह बात।
मैं कहूँ नहिं संग छाँड़ौं, बनहिं बहुत डरात॥

कन्हाई वनमें गायें चराने जा रहे हैं। गोप-बालक कुछ बड़े हैं, नन्दनन्दन सबसे छोटे हैं। यशोदाजीने उन्हें प्रसन्नतापूर्वक भेज दिया, इससे कन्हाईका चित्त प्रसन्न है। गाय, बछड़े और गोपबालकोंके बीचमें श्रीनन्दनन्दन हैं। सखा श्यामसुन्दरको यही सिखला रहे हैं कि 'हमलोगोंको छोड़कर कहीं जाना मत; क्योंकि वृन्दावन खूब घना और अत्यन्त अगम्य है, (अन्यत्र) कहीं जाकर (मार्ग) न भूल जाना।' सूरदासके स्वामी यह बात सुनकर मन-ही-मन हँस रहे हैं (कहते हैं—) 'मैं कहीं तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूँगा, वनसे मैं बहुत डरता हूँ।'

राग देवगंधार

[३२३]

द्रुम चढ़ि काहे न टेरौ कान्हा, गैयाँ दूरि गईं।
धाईं जाति सबनि के आगैं, जे वृषभानु दईं॥
घेरैं घिरतिं न तुम बिनु माधौ, मिलति न बेगि दईं।
बिडरतिं फिरतिं सकल बन महियाँ, एकै एक भईं॥
छाँड़ि खेड़ सब दौरि जात हैं, बोलौ ज्यौं सिखईं।
सूरदास-प्रभु-प्रेम समुझि, मुरली सुनि आइ गईं॥

(सखा कहते हैं—) 'कन्हाई! वृक्षपर चढ़कर पुकारते क्यों नहीं? देखो, गायें दूर चली गयीं। जो (गायें) वृषभानुजीने दी थीं, वे सबके आगे दौड़ी जा रही हैं। माधव! तुम्हारे बिना ये घेरकर लौटानेमें नहीं आतीं। हा दैव! ये तो शीघ्र मिलतीं ही नहीं। सम्पूर्ण वनमें ये भड़कती भाग रही हैं। सभी एक दूसरीसे पृथक् हो गयी हैं। अपने झुंडको छोड़कर सब दौड़ी जाती हैं; अब तुमने उन्हें जैसे सिखाया है, वैसे बुला लो।' सूरदासजी कहते हैं कि मेरे स्वामीका प्रेम समझकर सब वंशीकी ध्वनि सुनते ही लौट आयीं।

राग कल्यान

[३२४]

जब सब गाइ भईं इक ठाईं। ग्वालनि घर कौं घेरि चलाईं॥
मारग मैं तब उपजी आगि। दसहूँ दिसा जरन सब लागि॥
ग्वाल डरपि हरि पैं कह्यौ आइ। सूर राखि अब त्रिभुवन-राइ॥

जब गायें एक स्थानपर एकत्र हो गयीं, तब उन्हें घेरकर गोपबालकोंने घरकी ओर हाँक दिया। उसी समय मार्गमें दावानल प्रकट हो गया, दसों दिशाओंमें सब कुछ जलने लगा। गोपबालक भयभीत होकर श्यामके समीप आये। सूरदासजी कहते हैं, सब बोले—'त्रिभुवनके स्वामी! अब रक्षा करो।'

राग कान्हरौ

[३२५]

अब कैं राखि लेहु गोपाल।
दसहूँ दिसा दुसह दावागिनि, उपजी है इहिं काल॥
पटकत बाँस काँस-कुस चटकत, लटकत ताल-तमाल।
उचटत अति अंगार, फुटत फर, झपटत लपट कराल॥
धूम-धूँधि बाढ़ी धर-अंबर, चमकत बिच-बिच ज्वाल।
हरिन बराह, मोर चातक, पिक, जरत जीव बेहाल॥
जनि जिय डरहु, नैन मूँदहु सब, हँसि बोले नँदलाल।
सूर अगिनि सब बदन समानी, अभय किए ब्रज-बाल॥

(गोपबालक कहते हैं—) 'गोपाल! इस बार रक्षा कर लो। इस समय दसों दिशाओंमें असह्य दावाग्नि प्रकट हो गयी है। बाँस पटापट शब्द करते फट रहे हैं, जलते कुश एवं काशसे चटचटाहट हो रही है, ताल और तमालके (बड़े) वृक्ष भी (जलकर) गिर रहे हैं। बहुत अधिक चिनगारियाँ उछल रही हैं, फल फूट रहे हैं और दारुण लपटें फैल रही हैं।

धुएँका अन्धकार पृथ्वीसे आकाशतक बढ़ गया है, उसके बीच-बीचमें ज्वाला चमक रही है । हरिन, सूअर, मोर, पपीहे, कोयल आदि जीव बड़ी दुर्दशाके साथ भस्म हो रहे हैं ।' (यह सुनकर) श्रीनन्दलाल हँसकर बोले—'अपने चित्तमें डरो मत ! सब लोग नेत्र बंद कर लो ।' सूरदासजी कहते हैं कि सब अग्नि मेरे प्रभुके मुखमें प्रविष्ट हो गयी, उन्होंने व्रजके बालकोंको निर्भय कर दिया ।

राग गौरी

[३२६]

देखौ री नँद-नंदन आवत ।
बृंदावन तैं धेनु-बृंद मैं बेनु अधर धरें गावत ॥
तन घनस्याम कमल-दल-लोचन अंग-अंग छबि पावत ।
कारी-गोरी, धौरी-धूमरि लै-लै नाम बुलावत ॥
बाल गोपाल संग सब सोभित मिलि कर-पत्र बजावत ।
सूरदास मुख निरखतहीं सुख गोपी-प्रेम बढ़ावत ॥

(गोपियाँ कहती हैं–) 'सखी, देखो ! नन्दनन्दन आ रहे हैं। वृन्दावनसे लौटते हुए गायोंके झुंडमें ओष्ठपर वंशी धरे वे गा रहे हैं। मेघके समान श्याम शरीर है, कमलदलके समान नेत्र हैं, प्रत्येक अङ्ग अत्यन्त शोभा दे रहा है। 'काली ! लाल ! धौरी ! धूमरी ! (कृष्णा ! गौरी ! कपिला ! धूम्रा !) इस प्रकार नाम ले-लेकर गायोंको बुलाते हैं ।' सब गोप-बालक साथमें शोभित हैं, मिलकर (एक स्वर एवं लयसे) तालियाँ और पत्तोंके बाजे बजाते हैं।' सूरदासजी कहते हैं कि इनका तो मुख देखनेसे ही आनन्द होता है, ये गोपियोंके प्रेमको बढ़ा रहे हैं ।

[३२७]

रजनी-मुख बन तैं बने आवत, भावति मंद गयंद की लटकनि ।
बालक-बृंद बिनोद हँसावत, करतल लकुट धेनु की हटकनि ॥

बिगसित गोपी मनौ कुमुद सर, रूप-सुधा लोचन-पुट घटकनि।
पूरन कला उदित मनु उड़पति, तिहिं छन बिरह-तिमिर की झटकनि॥
लज्जित मनमथ निरखि बिमल छबि, रसिक रंग भौंहनि की मटकनि।
मोहनलाल, छबीलौ गिरिधर, सूरदास बलि नागर-नटकनि॥

संध्याके समय श्याम वनसे सजे हुए आ रहे हैं; उनका गजराजके समान झूमते हुए मन्दगतिसे चलना चित्तको बड़ा रुचिकर लगता है। बालकोंका समूह उन्हें अपने विनोदसे हँसाता चलता है, हाथोंमें गायोंको रोकने (हाँकने) की छड़ी है। गोपियोंका मनरूपी कुमुद-पुष्प इनके रूप-सुधाके सरोवरमें प्रफुल्लित होता है और नेत्रोंरूपी दोनोंसे वे उस रूप-सुधाका पान करती हैं। मानो चन्द्रमा अपनी पूर्णकलाओंके साथ उदित हो गये हैं और उसी क्षण विरहरूपी अन्धकार (वहाँसे) भाग छूटा है। कामदेव भी यह निर्मल शोभा देखकर लज्जित हो गया है; भौंहोंका चलाना तो रसिकोंके लिये आनन्ददायक है। सूरदासजी कहते हैं—ये मोहनलाल गिरधारी तो परम छबीले हैं, इन नटनागरके नृत्यपर मैं बलिहारी हूँ।

राग धनाश्री

[३२८]

दै री मैया दोहनी, दुहिहौं मैं गैया।
माखन खाएँ बल भयौ, करौं नंद-दुहैया॥
कजरी धौरी सेंदुरी, धूमरि मेरी गैया।
दुहि ल्याऊँ मैं तुरतहीं, तू करि दै घैया॥
ग्वालिनि की सरि दुहत हौं, बूझहि बल भैया।
सूर निरखि जननी हँसी, तब लेति बलैया॥

(श्याम बोले—) 'मैया री! मुझे दोहनी दे, मैं गाय दुहूँगा। मक्खन खानेसे मैं बलवान् हो गया हूँ।' यह बात बाबा नन्दकी शपथ करके कहता हूँ। 'कजरी, धौरी, लाल, धूमरी आदि मेरी जो गायें हैं, मैं उन्हें तुरंत

दुह लाता हूँ, तू नैया (ताजे दूधके ऊपरसे निकाला हुआ मक्खन) तैयार कर दे । तू दाऊ दादासे पूछ ले मैं गोपियोंके समान ही दुह लेता हूँ ।' सूरदासजी कहते हैं—(अपने लालको) देखकर माता हँस पड़ीं और तब बलैयाँ लेने लगीं ।

राग सारंग

[३२९]

बाबा मोकौं दुहन सिखायौ ।
तेरैं मन परतीति न आवै, दुहत अँगुरियनि भाव बतायौ ॥
अँगुरी-भाव देखि जननी तब हँसि कै स्यामहि कंठ लगायौ ।
आठ बरष के कुँवर कन्हैया, इतनी बुद्धि कहाँ तैं पायौ ॥
माता लै दोहनि कर दीन्ही, तब हरि हँसत दुहन कौं धायौ ।
सूर स्याम कौं दुहत देखि तब, जननी मन अति हर्ष बढ़ायौ ॥

(श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं–) 'बाबाने मुझे दुहना सिखलाया है । तेरे मनमें विश्वास नहीं होता ?' (यह कहकर) अँगुलियोंसे दुहनेका भाव बतलाया, तब अँगुलियोंका भाव देखकर मैयाने हँसकर श्यामसुन्दरको गले लगा लिया । (बोलीं) 'कुँवर कन्हाई ! तुम आठ ही वर्षके तो हो, इतनी सब समझदारी कहाँसे पा गये ?' माताने लाकर दोहनी हाथमें दे दी, तब श्याम हँसते हुए दुहनेको दौड़ गये । सूरदासजी कहते हैं—उस समय श्यामसुन्दर-को गाय दुहते देखकर माताके चित्तमें अत्यन्त आनन्द हुआ ।

राग धनाश्री

[३३०]

जननि मथति दधि, दुहत कन्हाई ।
सखा परस्पर कहत स्याम सौं, हमहू सौं तुम करत चँड़ाई ॥
दुहन देहु कछु दिन अरु मोकौं, तब करिहौ मो सम सरि आई ।
जब लौं एक दुहौगे तब लौं, चारि दुहौंगो नंद-दुहाई ॥

झूठहिं करत दुहाई प्रातहिं, देखहिंगे तुम्हरी अधिकाई।
सूर स्याम कह्यौ कालिह दुहैंगे, हमहूँ तुम मिलि होड़ लगाई ॥

माता दही मथ रही है और कन्हाई गाय दुह रहे हैं। सखा श्यामसे परस्पर कहते हैं—'तुम हमसे भी अधिक उतावली (शीघ्र दोहन) करते हो ?' (मोहन बोले—) 'अभी कुछ दिन मुझे और दुह लेने दो (मेरे हाथ अभ्यस्त हो जाने दो), तब आकर मेरी बराबरी करना। बाबा नन्दकी शपथ! जबतक तुम एक गाय दुहोगे, तबतक मैं चार दुह दूँगा।' (सखा बोले–) 'सबेरे-सबेरे झूठी शपथ खा रहे हो, तुम्हारी अधिकता (शीघ्रगति) हम देखेंगे।' सूरदासजी कहते हैं—श्यामसुन्दरने कहा—'अच्छा, कल हम और तुम दोनों होड़ लगाकर दुहेंगे। (देखें कौन शीघ्र दुहता है।)'

राग नट

[३३१]

राखि लियौ ब्रज नंद-किसोर।
आयौ इंद्र गर्ब करि कै चढ़ि, सात दिवस वरषत भयौ भोर ॥
बाम भुजा गोबर्धन धारयौ, अति कोमल नखहीं की कोर।
गोपी-ग्वाल-गाइ-ब्रज राखे, नैंकु न आई बूँद-झकोर ॥
अमरापति तब चरन परयौ लै जब बीते जुग गुन के जोर।
सूर स्याम करुना करि ताकौं, पठै दियौ घर मानि निहोर ॥

श्रीनन्दनन्दनने व्रजकी रक्षा कर ली। गर्व करके इन्द्र चढ़ आये थे, वर्षा करते-करते आठवें दिनका सबेरा उन्होंने कर दिया (सात दिन-रात वर्षा होती ही रही)। किंतु अत्यन्त सुकुमार श्यामने बायें हाथके नखकी नोकपर गोवर्धन पर्वतको उठा रखा। ऐसी विपत्तिमें मोहनने गोपियों, गोपों तथा गायोंकी रक्षा की, किसीतक बूँदकी तनिक फुहार भी नहीं पहुँची। इस प्रकार जब दोनों (श्याम और इन्द्र) के गुण (शक्ति) के संघर्षमें इन्द्रकी

शक्ति समाप्त हो गयी, तब वह आकर चरणोंपर गिर पड़ा। सूरदासजी कहते हैं कि श्यामसुन्दरने (शरणागतका) निहोरा मानकर दया करके उसे अपने घर (स्वर्ग) भेज दिया। (अन्यथा वे इन्द्रको स्वर्गसे च्युत कर सकते थे।)

राग मलार

[३३२]

देखौ माई ! बदरनि की बरियाई।
कमल-नैन कर भार लिए हैं, इंद्र ढीठ झरि लाई॥
जाकैं राज सदा सुख कीन्हौं, तासौं कौन बड़ाई।
सेवक करै स्वामि सौं सरवरि, इन बातनि पति जाई॥
इंद्र ढीठ बलि खात हमारी, देखौ अकिल गँवाई।
सूरदास तिहिं बन काकौ डर, जिहिं बन सिंह सहाई॥

(गोपबालक कहते हैं–) 'अरे, इन बादलोंकी जबरदस्ती तो देखो ! कमललोचन श्याम तो हाथपर (पर्वतका) भार उठाये थे और ढीठ इन्द्रने झड़ी लगा रखी थी। जिसके राज्यमें (रहकर) सदा सुख करते रहे, उसी-से क्या बड़प्पन दिखाना। सेवक स्वामीसे बराबरी करने चले—ऐसी बातोंसे सम्मान नष्ट ही होता है। देख तो, बुद्धि खोकर ढीठ इन्द्र हमारी बलि (भेंट) खाता था (हम व्रजके लोग जो इन्द्रके भी सम्मान्य हैं—उनके द्वारा की हुई पूजा स्वीकार करता था)। सूरदासजी कहते हैं—जिस वनका सिंह (स्वामी) कन्हाई है, उस वनमें भला, किसका भय।

राग सोरठ

[३३३]

(तेरैं)भुजनि बहुत बल होइ कन्हैया।
बार-बार भुज देखि तनक-से, कहति जसोदा मैया॥
स्याम कहत नहिं भुजा पिरानी, ग्वालनि कियौ सहैया।
लकुटिनि टेकि सबनि मिलि राख्यौ, अरु बाबा नँदरैया॥

मोसौं क्यौं रहतौ गोबरधन, अतिहिं बड़ौ वह भारी।
सूर स्याम यह कहि परबोध्यौ चकित देखि महतारी॥

मैया यशोदाजी बार-बार छोटी-सी भुजा देखकर कहती हैं—'कन्हाई! तेरी भुजामें बहुत बल हो।' श्यामसुन्दर कहते हैं—'गोपोंने (पर्वत उठानेमें) मेरी सहायता की, इससे मेरा हाथ दुखा नहीं। सबने और नन्द बाबाने भी मिलकर लाठियोंके सहारे उसे रोक रखा। नहीं तो भला, वह गोवर्धन मुझसे कैसे रोके रुकता, वह तो बहुत ही बड़ा और भारी है।' सूरदासजी कहते हैं कि माताको चकित देखकर श्यामसुन्दरने यह कहकर आश्वासन दिया।

राग श्री

[३३४]

जयति नँदलाल जय जयति गोपाल,
जय जयति ब्रजबाल-आनंदकारी।
कृष्न कमनीय मुखकमल राजितसुरभि,
मुरलिका-मधुर-धुनि बन-बिहारी॥
स्याम घन दिब्य तन पीत पट दामिनी,
इंद्र-धनु मोर कौ मुकुट सोहै।
सुभग उर माल मनि कंठ चंदन अंग,
हास्य ईषद जु त्रैलोक्य मोहै॥
सुरभि-मंडल मध्य भुज सखा-अंस दियैं,
त्रिभँगि सुंदर लाल अति बिराजै।
बिस्वपूरनकाम कमल-लोचन खरे
देखि सोभा काम कोटि लाजै॥

स्रवन कुंडल लोल, मधुर मोहन बोल,
बेनु-धुनि सुनि सखनि चित्त मोदै।
कलप-तरुवर-मूल सुभग जमुना-कूल,
करत क्रीड़ा-रंग सुख विनोदै॥
देव, किंनर, सिद्ध, सेस, सुक, सनक, सिव,
देखि बिधि, ब्यास मुनि सुजस गायौ।
सूर गोपाललाल सोई सुख-निधि नाथ,
आपुनौ जानि कै सरन आयौ॥

श्रीनन्दलालकी जय हो ! गोपालकी जय हो ! जय हो ! व्रजके गोप-कुमारोंको आनन्द देनेवाले प्रभुकी बार-बार जय हो ! श्रीकृष्णचन्द्रके सुन्दर मुखमें कमलकी सुगन्ध शोभा देती है और वंशीकी मधुर ध्वनि करते हुए वे वृन्दावनमें क्रीड़ा करते हैं। मेघके समान श्याम शरीर है, उसपर विद्युत्के समान पीताम्बर है और इन्द्रधनुषके समान मयूरपिच्छका मुकुट शोभा देता है। सुन्दर वक्षःस्थलपर वनमाला है, कण्ठमें कौस्तुभ मणि है, अङ्गोंमें चन्दन लगा है; मन्दहास्य ऐसा है, जो त्रिलोकीको मोहित करता है। गायोंके झुंडके बीचमें सखाके कंधेपर भुजा रखे त्रिभंगीसे खड़े सुन्दर गोपाललाल अत्यन्त शोभा दे रहे हैं। विश्वकी कामनाओंको पूर्ण करनेवाले उनके नेत्र पूर्ण विकसित कमलके समान हैं, (मोहनकी) शोभा देखकर करोड़ों कामदेव लज्जित हो रहे हैं। कानोंमें चञ्चल कुण्डल हैं, मोहनकी मधुर वाणी एवं वंशीकी ध्वनि सुनकर सखाओंका चित्त आनन्दित हो रहा है। मनोहर यमुना-किनारे उत्तम कल्पवृक्षके नीचे खेलकी उमंगमें सुखपूर्वक विनोद—क्रीड़ा कर रहे हैं। देवता, किन्नर, सिद्ध, शेष, शुकदेव-सनकादिक ऋषि, शंकरजी तथा ब्रह्मा यह छटा देख रहे हैं; व्यास-मुनिने उनके सुयशका गान (वर्णन) किया है। उन्हीं सुखके निधान गोपालको अपना स्वामी समझ-कर सूरदास उनकी शरणमें आया है।

राग भैरव

[३३५]

जै गोविंद माधव मुकुंद हरि। कृपा-सिंधु कल्यान कंस-अरि।
प्रनतपाल केसव कमलापति। कृष्न कमल-लोचन अगतिनि गति ॥
रामचंद्र राजीव-नैन बर। सरन साधु श्रीपति सारँगधर।
बनमाली बामन बीठल बल। बासुदेव बासी ब्रज-भूतल ॥
खर-दूषन-त्रिसिरासुर-खंडन। चरन-चिन्ह दंडक-भुव-मंडन।
बकी-दवन बक-बदन-बिदारन। बरुन-बिषाद नंद-निस्तारन ॥
रिषि-मख-त्रान ताड़का-तारक। बन बसि तात-बचन-प्रतिपालक।
काली-दवन केसि-कर-पातन। अघ-अरिष्ट-धेनुक-अनुघातन ॥
रघुपति प्रबल पिनाक बिभंजन। जग-हित जनक-सुता-मन-रंजन।
गोकुल-पति गिरिधर गुन-सागर। गोपी-रवन रास-रति-नागर ॥
करुनामय कपि-कुल-हितकारी। बालि-बिरोधि कपट-मृग-हारी।
गुप्त गोप-कन्या-ब्रत-पूरन। द्विज-नारी दरसन दुख-चूरन ॥
रावन-कुंभकरन-सिर-छेदन। तरुवर सात एक सर भेदन।
संखचूड़-चानूर-सँहारन। सक्र कहै मम रच्छा-कारन ॥
उत्तर-क्रिया गीध की करी। दरसन दै सबरी उद्धरी।
जे पद सदा संभु-हितकारी। जे पद परसि सुरसरी गारी ॥
जे पद रमा हृदय नहिं टारै। जे पद तिहूँ भुवन प्रतिपारैं।
जे पद अहि-फन-फन प्रति धारी। जे पद बृंदा-बिपिन-बिहारी ॥
जे पद सकटासुर-संहारी। जे पद पांडव-गृह पग धारी।
जे पद रज गौतम-तिय तारी। जे पद भक्तनि के सुखकारी ॥
सूरदास सुर जाँचत ते पद। करहु कृपा अपने जन पर सद ॥

गोविन्द ! माधव ! मुकुन्द ! हरि ! कृपासागर ! कल्याणमय ! कंसके शत्रु ! आपकी जय हो। केशव ! लक्ष्मीपति ! नाथ ! आप शरणागतका पालन करनेवाले हैं। कमललोचन श्रीकृष्ण ! जिनका कोई सहारा नहीं है, उनके आप ही सहारे हैं। (आप ही) श्रेष्ठ पद्मलोचन श्रीरामचन्द्र हैं, साधु पुरुषोंके आश्रय शार्ङ्ग-धनुषधारी लक्ष्मीकान्त हैं। (आप ही) वनमाली, वामन, विट्ठल, बलराम और वासुदेव हैं जो व्रजभूमिमें निवास कर रहे हैं। (आप ही) खर-दूषण तथा त्रिशिरा आदि राक्षसोंके विनाशक तथा अपने चरण-चिह्नोंसे दण्डक वनकी भूमिको सुशोभित करनेवाले हैं। (आप) पूतनाका शासन करनेवाले, बकासुरका मुख फाड़ देनेवाले तथा वरुणके क्लेशसे (वरुणके दूतद्वारा पकड़कर ले जाये जानेपर) नन्दबाबा-का छुटकारा करानेवाले हैं। (आप रामावतारमें) महर्षि विश्वामित्रके यज्ञकी रक्षा करनेवाले, ताड़का राक्षसीका उद्धार करनेवाले तथा वनमें (चौदह वर्ष) रहकर पिताकी आज्ञाका पालन करनेवाले हैं। (आप ही) कालियनागका मर्दन करनेवाले, केशी राक्षसको मारनेवाले तथा अघासुर, अरिष्टासुर एवं धेनुकासुरका वध करनेवाले हैं। (आप ही) अत्यन्त सुदृढ़ शिव-धनुष पिनाकको तोड़नेवाले, संसारके हितकारी एवं श्रीजानकीजीका मनोरञ्जन करनेवाले श्रीरघुनाथ हैं। (आप ही) गोकुलके स्वामी, गोवर्धनको धारण करनेवाले, गुणोंके सागर, रासक्रीडामें परम चतुर गोपिकारमण हैं। (आप) करुणामय, कपिकुलके हितकारी, वालीके शत्रु तथा कपटसे मृग बने मारीचको मारनेवाले हैं (और आप ही अपनेको पतिरूपमें प्राप्त करनेके उद्देश्यसे किये गये) गोपकुमारियोंके गुप्त व्रतको पूर्ण करनेवाले तथा ब्राह्मणपत्नियोंको दर्शन देकर उनके दुःखको नष्ट करनेवाले हैं। (आप ही) रावण तथा कुम्भकर्णका मस्तक काटनेवाले तथा एक ही बाणसे सात ताल-वृक्षोंको भेदन करनेवाले हैं। (आप ही) शङ्खचूड तथा चाणूरका संहार करनेवाले हैं तथा आपको ही इन्द्र अपनी रक्षा करनेवाला

कहते हैं। (आपने रामावतारमें) गीधराज (जटायु) की अन्त्येष्टि क्रिया की तथा दर्शन देकर शबरीका उद्धार किया। (आपके) जो चरण शंकरजीके सदा हितकारी (ध्येय) हैं, जिन चरणोंका स्पर्श करके गङ्गाजी प्रकट हुईं, जिन चरणोंको लक्ष्मीजी (कभी) हृदयसे हटाती (ही) नहीं, जो चरण तीनों लोकोंका प्रतिपालन करते हैं, जिन चरणोंको आपने कालिय नागके एक-एक फणपर रखा, जो चरण वृन्दावनमें क्रीड़ा करते घूमे, जिन चरणोंसे (छकड़ा उलटकर) आपने शकटासुरका संहार किया, जो चरण पाण्डवोंके घर पधारे, जिन चरणोंकी धूलि गौतम ऋषिकी पत्नी अहल्याका उद्धार करनेवाली है, जो चरण सदा ही भक्तोंका मङ्गल करनेवाले हैं, हे देव ! सूरदास उन्हीं चरणोंमें याचना करता है कि आप अपने (इस) सेवकपर सदा कृपा करते रहें।

परिशिष्ट

पदोंमें आये मुख्य कथा-प्रसङ्ग

मत्स्यावतार—

प्रलयकालमें ब्रह्माजीके असावधान होनेपर दैत्य हयग्रीवने उनके मुखसे निकले वेदोंको हरण कर लिया और पातालमें जा छिपा। इससे व्याकुल होकर ब्रह्माजीने भगवान्‌की प्रार्थना की। भगवान् नारायणने मत्स्यावतार ग्रहण किया। उन्होंने हयग्रीवको मारकर वेदोंका उद्धार किया।

ऐसी भी कथा आती है कि किसी कल्पके अन्तमें प्रलयके समय शङ्खासुर नामके दैत्यने ब्रह्माजीसे वेदोंका हरण कर लिया था। उस जलमें रहनेवाले दैत्यको मत्स्यावतार धारण करके भगवान्‌ने मारा।

कच्छपावतार—

महर्षि दुर्वासाके शापसे इन्द्रकी श्री नष्ट हो गयी। दैत्योंने आक्रमण करके देवताओंके साथ उन्हें पराजित कर दिया। स्वर्गपर दैत्यराज बलिका अधिकार हो गया। देवताओंने भगवान् नारायणकी शरण ली। भगवान्‌ने उन्हें दैत्योंसे संधि करके क्षीरसमुद्रका मन्थन करनेका आदेश दिया। इन्द्र बलिके पास गये। बलि तथा दैत्योंने समुद्र-मन्थनसे प्राप्त अमृतमें समान भाग पानेकी आशामें देवताओंसे संधि कर ली। समुद्र-मन्थनके लिये वे लोग मिलकर मन्दराचलको लाने लगे। जब देवता और दैत्य उस महापर्वतको ढोनेमें असमर्थ हो गये, तब भगवान् नारायण स्वयं पर्वतको गरुड़पर रखकर ले आये। क्षीर-समुद्रमें डालनेपर वह पर्वत डूबने लगा। देवता-दैत्य उसे पकड़े नहीं रह सके। भगवान् नारायणने विशाल कच्छपका रूप धारण किया। वे उस पर्वतको अपनी पीठपर उठाये रहे। साथ ही वे अपने चतुर्भुज रूपसे अकेले ही वासुकि नागका मुख एवं पूँछ पकड़कर, उसे

मन्दराचलमें लपेटे समुद्र-मन्थन भी करते रहे; क्योंकि देवता और दैत्य समुद्र मथते-मथते थक चुके थे। उन लोगोंके किये कुछ हुआ नहीं। उनके थक जानेपर श्रीहरिने मन्थन प्रारम्भ किया। तभी समुद्रसे चौदहों रत्न एवं अमृत निकला।

वामनावतार—

भगवान् नारायणने मोहिनी-रूप धारण करके समुद्रसे निकला अमृत देवताओंको ही पिला दिया। दैत्योंको अमृत नहीं मिला। इससे क्रुद्ध होकर दैत्योंने देवताओंसे युद्ध छेड़ दिया। युद्धमें देवता विजयी हुए। किंतु शुक्राचार्यने युद्धमें मारे गये दैत्योंको जीवित कर दिया। दैत्यराज बलिने थोड़े ही दिनोंमें अपनी सेवासे आचार्य शुक्रको प्रसन्न कर लिया। शुक्राचार्यकी कृपासे बलिको यज्ञकुण्डसे निकला रथ, दिव्य धनुष तथा अस्त्र-शस्त्र मिले। उन्होंने दैत्योंको साथ लेकर फिर स्वर्गपर चढ़ाई की। देवता उनकी अजेय शक्ति देखकर स्वर्ग छोड़कर भाग गये, किंतु स्वर्गका राज्य तो सौ अश्वमेध यज्ञ करनेवाला ही स्थायी रूपसे कर सकता है। शुक्राचार्य इस नियमको जानते थे। उन्होंने बलिको पृथ्वीपर लाकर नर्मदा-किनारे अश्वमेध यज्ञ प्रारम्भ कराया। निन्यानबे अश्वमेध यज्ञ बलिके निर्विघ्न पूरे हो गये।

उधर देवमाता अदिति अपने पुत्र देवताओंकी पराजयसे बहुत दुखी थीं। उन्होंने अपने पति महर्षि कश्यपसे इस दुःखको दूर करनेकी प्रार्थना की। कश्यपजीने उन्हें भगवान्‌की आराधना करनेको कहा, अदितिकी आराधनासे प्रसन्न होकर भगवान् नारायणने उन्हें दर्शन दिया और उनके पुत्र होकर प्रकट होनेका वरदान भी।

भगवान् वामनरूपमें अदितिके पुत्र होकर प्रकट हुए। वहाँसे वे बलिकी यज्ञशालामें पधारे। उस समय बलि सौवाँ अश्वमेध यज्ञ कर रहे थे। बलिने परम तेजस्वी वामनजीका स्वागत तथा पूजन किया और उनसे जो चाहे, माँगनेको कहा। वामनभगवान्‌ने अपने पैरोंसे तीन पैर

पृथ्वी माँगी। यद्यपि शुक्राचार्यने बलिको भूमि देनेसे मना किया और बतला दिया कि इस रूपमें साक्षात् विष्णु ही तुम्हें छलने आये हैं; किंतु सत्यवादी बलिने वामनको भूमि देनेका संकल्प कर ही दिया।

भगवान् वामनने तत्काल विराट् रूप प्रकट किया। पूरी पृथ्वी उनके एक पदमें नप गयी। दूसरे पदसे उन्होंने स्वर्ग तथा ऊपरके सब लोक नाप लिये। उस समय भगवान्का वह पद ब्रह्मलोकतक जा पहुँचा। ब्रह्माजीने उसी चरणको धोकर अपने कमण्डलुमें रख लिया। भगवान्का वही चरणोदक गङ्गाजीके रूपमें पीछे पृथ्वीपर आया।

बलिने तीसरे पैरके लिये स्थान न देखकर अपना मस्तक आगे कर दिया। भगवान्ने उसके मस्तकपर तीसरा पैर रखा। इस प्रकार छलसे बलिका सब राज्य लेकर वामन भगवान्ने इन्द्रको दे दिया। भगवान्की आज्ञासे दैत्योंके साथ बलि सुतल-लोक चले गये।

वाराहावतार—

ब्रह्माजी अपने ब्रह्मलोकमें बैठे पहले मानसी सृष्टि कर रहे थे। उस समय पृथ्वी समुद्रमें डूब गयी थी। जब ब्रह्माजीने मनुको उत्पन्न करके उन्हें सृष्टिके विस्तारकी आज्ञा दी, तब मनुने कहा—'मेरी संतानोंके रहनेका स्थान तो पृथ्वी है। उसके उद्धारका यत्न कीजिये।'

ब्रह्माजी दूसरा कोई उपाय न देखकर भगवान्का ध्यान करने लगे। उसी समय उनकी नाकसे ही अँगूठेके बराबर वाराह-शिशुके रूपमें भगवान् प्रकट हुए। तनिक देरमें ही वाराह भगवान्का शरीर पर्वतके समान विशाल हो गया। वे समुद्रके जलमें घुस गये।

दितिका पुत्र हिरण्याक्ष इतना बलवान् था कि उससे कोई युद्ध कर नहीं सकता था। वह युद्ध करनेके लिये प्रतिद्वन्द्वी ढूँढ़ता तीनों लोकोंमें घूम रहा था। नारदजीने उसे पाताल जाकर वाराह भगवान्से युद्ध करनेको कहा। वह जब पाताल पहुँचा, तब भगवान् वाराह पृथ्वीको दाँतोंपर उठाकर ला रहे थे। हिरण्याक्ष उनके पीछे लग गया। ऊपर आकर

भगवान्‌ने पृथ्वीकी स्थापना की और फिर युद्ध करके हिरण्याक्ष दैत्यको मार दिया।

नृसिंहावतार—

भगवान् नारायणने वाराहावतार धारण करके हिरण्याक्षको मार दिया, इससे उसके बड़े भाई हिरण्यकशिपुको बड़ा क्रोध आया। उसने घोर तपस्या प्रारम्भ की। अन्तमें जब ब्रह्माजी प्रसन्न होकर वरदान देने आये, तब उसने कहा—'मैं आपकी सृष्टिके किसी प्राणीसे, मनुष्य या पशु-से, पृथ्वीमें या आकाशमें, दिनमें या रातमें, घरमें या बाहर, किसी अस्त्र-शस्त्रसे न मारा जाऊँ।'

यह वरदान पाकर वह अजेय हो गया। स्वर्गपर उसने अधिकार कर लिया। सभी देवता और लोकपाल भयसे उसकी सेवा करने लगे। उसने वेद-पाठ, यज्ञ तथा भगवान्‌का नाम लेनातक अपराध घोषित कर दिया।

हिरण्यकशिपुके छोटे पुत्र प्रह्लाद परम भगवद्भक्त थे। वे भगवान्‌की भक्ति छोड़ दें—इसके लिये हिरण्यकशिपुने उन्हें बहुत समझाया, डराया-धमकाया और जब वे न माने तो उन्हें मार डालनेकी चेष्टा करने लगा। लेकिन विष देकर, अग्निमें डालकर, समुद्रमें डुबाकर, पर्वतसे गिराकर, सर्प तथा सिंहादिके सामने डलवाकर, मारण-प्रयोग करवाकर—इस प्रकार अनेक प्रयत्न करके भी वह प्रह्लादको न मार सका। भगवान्‌ने सर्वत्र प्रह्लादकी रक्षा की।

अन्तमें हिरण्यकशिपु स्वयं प्रह्लादको मारनेके लिये उद्यत हुआ। उसने पूछा—'कहाँ है तेरा भगवान्?'

प्रह्लादजी बोले—'मेरे प्रभु तो सर्वत्र हैं।'

असुरने क्रोधमें पूछा—'इस खंभेमें भी है?'

प्रह्लादके 'हाँ' कहते ही उसने वज्रके समान घूँसा खंभेपर मारा। खंभा बीचसे फट गया। प्रलयके समान गर्जना करते हुए भगवान्

अद्भुत रूपमें प्रकट हो गये। उनका मुख सिंहके समान था और शेष शरीर मनुष्यके समान। नृसिंह भगवान्‌ने हिरण्यकशिपुको पकड़ लिया। संध्याके समय, द्वारकी चौखटपर ले जाकर अपनी जाँघोंपर पटककर नखोंसे ही भगवान्‌ने उस असुरका पेट फाड़कर उसे मार दिया।

परशुराम-अवतार—

महर्षि जमदग्निके पुत्रके रूपमें भगवान् परशुरामरूपसे प्रकट हुए। उस समय क्षत्रियनरेश प्रजाको पीड़ा देनेवाले, धर्मविरोधी और पापी हो रहे थे। उनका संहार करनेके लिये ही यह अवतार हुआ था। राजा कृतवीर्यके पुत्र अर्जुनके सहस्र भुजाएँ थीं। वह सेनाके साथ एक बार महर्षि जमदग्निके आश्रममें आया। जमदग्निजीने कामधेनु गौके प्रभावसे उसका भली प्रकार स्वागत-सत्कार किया। किंतु कामधेनुकी महिमा देखकर वह दुष्ट राजा ऋषिके न देनेपर बलपूर्वक उनसे वह गाय छीन ले गया।

उस समय परशुरामजी आश्रममें नहीं थे। लौटनेपर उन्होंने सहस्रार्जुनकी दुष्टता सुनी तो क्रोधमें भरकर दौड़ पड़े। युद्धमें उन्होंने सहस्रार्जुनको मार डाला और अपनी गौ लौटा लाये। किंतु सहस्रार्जुनके पुत्रोंने अपने पिताकी मृत्युका बदला लेनेका निश्चय कर लिया। एक दिन परशुरामजी आश्रमसे बाहर गये हुए थे। उस समय आकर ध्यान करते हुए जमदग्नि ऋषिका मस्तक वे काट ले गये। लौटनेपर परशुराम-जीको बड़ा क्रोध आया। उन्होंने सहस्रार्जुनके पुत्रोंको तो मारा ही, पृथ्वीके सभी क्षत्रियनरेशोंका इक्कीस बार संहार किया। अपने पिताका मस्तक लाकर उन्हें अपने योगबलसे जीवित करके सप्तर्षियोंमें प्रतिष्ठित किया। परशुरामजी अमर हैं। कलियुगके अन्तमें जब भगवान् कल्कि-रूपसे अवतार लेंगे, तब परशुरामजी कल्कि भगवान्‌को अस्त्र-शस्त्रकी शिक्षा देंगे। अगले मन्वन्तरमें वे भी सप्तर्षियोंमेंसे एक होंगे।

रामावतार—

त्रेतामें देवताओं तथा ब्रह्माजीकी प्रार्थनासे पृथ्वीका भार दूर करनेके

लिये भगवान्ने अयोध्यामें महाराज दशरथके यहाँ अपने अंशोंके साथ अवतार लिया। महाराज दशरथकी तीन रानियाँ थीं—कौसल्या, कैकेयी और सुमित्रा। इनमें कौसल्याजीके पुत्ररूपमें भगवान् श्रीराम स्वयं प्रकट हुए। कैकेयीजीके पुत्र भरत और सुमित्राजीके लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न हुए।

ज्यों ही ये कुमार बड़े हुए, त्यों ही महर्षि विश्वामित्र अयोध्या आये। मारीच-सुबाहु राक्षस गंदी वस्तुओंकी वर्षा करके उनका यज्ञ बार-बार भ्रष्ट कर देते थे। ऋषिके आग्रहपर महाराज दशरथने राम-लक्ष्मणको उनके साथ कर दिया। मार्गमें ताड़का नामक राक्षसीने उनपर आक्रमण किया। उसे श्रीरामने एक ही बाणसे मारकर मुक्त कर दिया। महर्षिके आश्रमपर पहुँचकर दोनों भाई यज्ञकी रक्षा करने लगे। जब राक्षसोंने आक्रमण किया, तब श्रीरामने सुबाहुको मार दिया और मारीचको बाण मारकर सौ योजन दूर समुद्र-किनारे फेंक दिया। लक्ष्मणने पूरी राक्षस-सेनाको नष्ट कर दिया।

यज्ञ पूरा होनेपर महर्षि विश्वामित्र दोनों भाइयोंको लेकर जनकपुर चले; क्योंकि वहाँ महाराज जनककी कन्या श्रीसीताजीके विवाहके लिये स्वयंवर होनेवाला था। जो जनकजीके यहाँ रखे शंकरजीके भारी धनुषको उठा लेता, उसीके साथ जानकीजीका विवाह होता। मार्गमें महर्षि गौतमके शापसे पत्थरकी मूर्ति बनी पड़ी उनकी पत्नी अहल्या मिली। विश्वामित्र-जीके कहनेसे श्रीरामने अपने चरणोंसे उसे छू दिया। उनकी चरणधूलि पड़ते ही अहल्याका पाप-शाप नष्ट हो गया। वह देवीके रूपमें प्रकट होकर अपने पतिके लोकको चली गयी। जनकपुर पहुँचनेपर जब कोई नरेश शंकरजीके पिनाक नामक धनुषको नहीं उठा सका, तब अन्तमें महर्षि-की आज्ञासे श्रीराम उठे। उन्होंने उस पिनाकको उठाकर उसपर डोरी चढ़ायी और खींचकर धनुषको तोड़ दिया। पीछे शंकरजीका धनुष टूटनेका समाचार पाकर वहाँ परशुरामजी क्रोधमें भरे आये। किंतु श्रीरामका प्रताप देखकर उन्हें अपना धनुष देकर लौट गये। जनकजीने अयोध्या दूत भेजा। महाराज दशरथ बारात सजाकर आये। श्रीरामजीका विवाह

तो सीताजीसे हुआ ही, उनके तीनों भाइयोंका विवाह भी वहीं जनकजी तथा उनके भाईकी दूसरी पुत्रियोंसे हो गया ।

अयोध्या लौटनेपर कुछ दिन आनन्दसे बीते । महाराज दशरथने श्रीरामको युवराज-पद देना चाहा । उसी समय देवताओंकी प्रेरणासे रानी कैकेयीकी बुद्धिमें भेद पड़ गया । उन्होंने महाराज दशरथसे वचन लेकर भरतके लिये राज्य और श्रीरामके लिये चौदह वर्षका वनवास माँगा । पिताके वचनोंकी रक्षाके लिये श्रीजानकीजी तथा भाई लक्ष्मणजीके साथ श्रीराम वन चले गये । उनका वियोग न सह सकनेके कारण महाराज दशरथका परलोकवास हो गया । भरतजीने चित्रकूट जाकर श्रीरामको लौटानेका प्रयत्न किया; किंतु श्रीरामने उन्हें समझा-बुझाकर लौटा दिया ।

एक वनसे दूसरे वनमें घूमते श्रीराम पञ्चवटी पहुँचे । मार्गमें वे विराध राक्षसको मार चुके थे । पञ्चवटीमें रावणकी बहिन शूर्पणखा उनके पास कपटपूर्वक बुरे अभिप्रायसे आयी । उसकी दुष्टताके कारण लक्ष्मणजीने उसके नाक-कान काट लिये । शूर्पणखा दौड़ी हुई रावणके सेवक खर-दूषणके पास गयी । खर-दूषण और त्रिशिरा——ये तीनों भाई चौदह हजार राक्षसी सेना लेकर युद्ध करने आये; किंतु श्रीरामने अकेले ही थोड़ी-सी देरमें सबको यमलोक भेज दिया ।

शूर्पणखा लङ्का पहुँची, उसकी सब बातें सुनकर रावण मारीचको साथ लेकर पञ्चवटी आया । मारीच सोनेका मृग बनकर घूमने लगा । सीताजीके कहनेसे श्रीराम उसे मारने दौड़े । दूर जाकर उन्होंने मारीचको मार दिया । मरते समय उस राक्षसने लक्ष्मणजीका नाम पुकारा । लक्ष्मणजी भी श्रीजानकीजीके कहनेसे श्रीरामके पास गये । उसी समय रावणने सीताका हरण कर लिया । वह जब श्रीजानकीजीको ले जा रहा था, मार्गमें गीधराज जटायुने उसे रोका, किंतु रावणने तलवारसे जटायुके पंख काट दिये । सीताजीको लङ्का ले जाकर उसने अशोकवाटिकामें रख दिया ।

मारीचको मारकर श्रीराम लौटे । आश्रममें सीताको न देख वे

वियोगमें व्याकुल होकर लक्ष्मणके साथ उन्हें ढूँढ़ते आगे चले। मार्गमें घायल जटायु मिले। श्रीरामको रावणद्वारा जानकीजीके हरे जानेका समाचार देकर जटायुने शरीर छोड़ दिया। भक्तवत्सल रामजीने बड़े सम्मानसे जटायुका अन्तिम संस्कार किया।

वहाँसे चलते हुए रामजी शबरीके आश्रममें पहुँचे। शबरीने उनका सत्कार किया और प्रभुने उसे भक्तिका उपदेश किया। फिर ऋष्यमूक पर्वतके पास पहुँचनेपर हनुमान्‌जी मिले, उन्होंने सुग्रीवसे परिचय तथा मित्रता करायी। वानरराज वालीने अपने छोटे भाई सुग्रीवको मारकर निकाल दिया था। रघुनाथजीने एक ही बाणसे सात तालवृक्षोंको विद्ध करके सुग्रीवको विश्वास दिलाया कि वे वालीको मार देंगे। फिर वालीको मारकर उन्होंने सुग्रीवको किष्किन्धाका राज्य दिया।

सुग्रीवने सीताजीका समाचार लेने चारों ओर वानर भेजे। उनमेंसे श्रीहनुमान्‌जी समुद्र कूदकर लङ्का गये। वे सीताजीसे मिलनेके बाद लङ्कामें आग लगाकर, उसे जलाकर लौट आये। समाचार पाकर श्रीरामने वानरी सेनाके साथ प्रस्थान किया। रावणका भाई विभीषण श्रीरामकी शरण आ गया। समुद्रपर पुल बनाकर श्रीरघुनाथजी कपिदलके साथ लङ्का पहुँच गये। युद्धमें श्रीरामके हाथों रावणका भाई कुम्भकर्ण तथा स्वयं रावण भी मारा गया।

विभीषणको लङ्काका राज्य देकर श्रीराम सीताजी, लक्ष्मणजी तथा वानरवीरोंके साथ पुष्पक विमानमें बैठकर अयोध्या लौट आये।

श्रीकृष्ण-चरित—

मथुरानरेश उग्रसेनजीके पुत्र कंसने पिताको कारागारमें डाल दिया था और वह स्वयं राजा बन बैठा था। उसने अपनी चचेरी बहिन देवकी और उनके पति वसुदेवजीको भी कैद कर रखा था और उनकी संतानोंको मार दिया करता था; क्योंकि आकाशवाणीने कंसको बताया था कि देवकीका पुत्र उसे मारेगा। देवकीके सातवें गर्भमें भगवान् शेष आये, योगमायाने

उन्हें वसुदेवजीकी दूसरी पत्नी रोहिणीके गर्भमें पहुँचा दिया, जो उस समय गोकुलमें नन्दजीके घर रहती थीं। इस प्रकार रोहिणीजीसे बलरामजीका जन्म हुआ।

देवकीके आठवें पुत्रके रूपमें स्वयं भगवान्‌ने अवतार लिया। योगमायाके प्रभावसे कारागारके द्वार खुल गये। वसुदेवजी रातमें ही अपने कुमारको गोकुलमें नन्दजीकी पत्नी यशोदाजीकी पलंगपर रख आये और उसी रात उत्पन्न हुई यशोदाजीकी कन्या उठा लाये। कंस जब इस कन्याको पटककर मारने चला, तब कन्या हाथसे छूटकर आकाशमें चली गयी। अष्टभुजा देवीके रूपमें प्रकट होकर उसने कंससे कहा—'तेरा मारनेवाला कहीं पैदा हो गया है।'

कंसने उसी दिन राक्षसोंको नवजात शिशुओंको मारनेकी आज्ञा दी। उसकी आज्ञासे राक्षसी पूतना शिशु-हत्या करती घूमती हुई एक दिन सुन्दर नारीवेष बनाकर स्तनोंमें विष लगाये गोकुल नन्दभवन पहुँची। वह दूध पिलानेके बहाने श्रीकृष्णचन्द्रको मार डालना चाहती थी। श्रीकृष्णने दूधके साथ उसके प्राण भी पी लिये। पूतना मर गयी।

कंसका भेजा शकटासुर राक्षस अदृश्यरूपसे छकड़ेमें आ घुसा था। माताने उसी छकड़ेके नीचे श्रीकृष्णको सुला दिया था। राक्षस छकड़ा दबाकर उन्हें मार डालना चाहता था, परंतु श्यामने अपने नन्हे चरण उछालकर छकड़ेको गिरा दिया। छकड़ा उलट गया, टूट गया और राक्षस तो समाप्त ही हो गया।

कंसका भेजा दैत्य तृणावर्त बवंडरके रूपमें आया और श्यामको आकाशमें उड़ा ले गया। किंतु कन्हाईने उसका गला दबा दिया। राक्षस स्वयं मरकर गिर पड़ा।

एक बार जब लड़कोंने कहा—'मोहनने मिट्टी खायी है' और माता यशोदा उन्हें डाँटने लगीं, तब श्यामने मुख खोलकर अपने मुखमें ही उन्हें पूरा ब्रह्माण्ड दिखा दिया। एक बार घरमें दहीका मटका फोड़कर कन्हाई

चोरीसे बंदरोंको मक्खन खिला रहे थे। माताने उन्हें पकड़ लिया और ऊखलसे बाँधने लगीं; किंतु रस्सी बार-बार दो अंगुल छोटी हो जाती थी। किंतु माताका परिश्रम देखकर श्रीकृष्ण स्वयं बँध गये और जब माता घरके काममें लग गयीं, तब ऊखल घसीटते हुए वे द्वारपर लगे यमलार्जुन वृक्षोंके बीचसे निकलकर उनमें ऊखल अड़ाकर खींचने लगे। इससे वे दोनों वृक्ष जड़से उखड़कर गिर पड़े। बात यह है कि कुबेरके पुत्र नल-कूबर और मणिग्रीव एक बार स्त्रियोंके साथ नंगे होकर शराबके नशेमें चूर स्नान कर रहे थे। देवर्षि नारदके उधरसे निकलनेपर भी उन्होंने न वस्त्र पहिने, न प्रणाम किया। इससे नारदजीने उन्हें वृक्ष होनेका शाप दे दिया। वे दोनों गोकुलमें अर्जुन वृक्ष हो गये। जब श्रीकृष्णने वृक्षोंको उखाड़ दिया, तब दोनों फिर देवता होकर अपने लोकको चले गये।

गोकुलमें बार-बार उत्पात होते देखकर नन्दजी गोपोंके साथ वहाँ-से नन्दगाँवमें आ बसे। यहाँ भी कंसके कई राक्षस आये। सबसे पहले वत्सासुर बछड़ा बनकर आया था, जिसे श्रीकृष्णने पैर पकड़कर पटककर मार दिया। फिर बकासुर बगुला बनकर आया, श्यामने उसकी चोंच पकड़कर चीर डाला उसे। अघासुर तो बड़ा भारी अजगर ही बनकर आया था। गोपबाल तथा बछड़े उसके मुखको गुफा समझकर उसमें चले भी गये थे। श्रीकृष्णचन्द्र भी उन्हें बचाने उसके मुखमें गये और अपना शरीर इतना बढ़ा लिया कि असुरकी श्वास ही रुक गयी। प्राणवायु रुकनेसे उसका मस्तक फट गया और वह मर गया।

मय दानवका पुत्र व्योमासुर गोपबालक बनकर गोपकुमारोंमें आ मिला था। वह खेलमें छलपूर्वक गोपबालकोंको ले जाकर गुफामें बंद कर देता था। श्रीकृष्णचन्द्रने उसे पकड़ लिया तथा घूसे-थप्पड़ोंसे ही मार डाला। कंसका भेजा प्रलम्बासुर भी गोपबालक बनकर ही आया था। वह खेलमें बलरामजीको पीठपर बैठाकर मथुरा भाग जाना चाहता था; किंतु बलरामजीके एक ही घूसेसे उसकी कपालक्रिया हो

गयी। तालवनमें धेनुक नामका असुर गधेके रूपमें अपने परिवारके साथ रहता था। गोपबालकोंकी ताल खानेकी इच्छा जानकर दोनों भाई वहाँ गये। बलरामजीने धेनुकको पैर पकड़कर ताड़के पेड़पर दे मारा। उसके परिवारके राक्षस दौड़े आये तो उनको मारनेमें श्याम भी बड़े भाईकी सहायतामें जुट गये। कंसका भेजा असुर अरिष्टासुर साँड़ बनकर आया था। उसे श्रीकृष्णने जब मार दिया, तब सबसे अन्तमें केशी राक्षस आया घोड़ा बनकर। कन्हाईने उसके मुखमें अपनी भुजा डाल दी। वह भुजा इतनी बढ़ी कि केशीका शरीर ककड़ीके समान फट गया।

कुबेरका सेवक शङ्खचूड नामका यक्ष घूमता हुआ वृन्दावन आ गया था। उसने वनमें क्रीड़ा करती गोपियोंको पकड़ लिया और उन्हें लेकर भागा। किंतु गोपियोंकी पुकार सुनकर श्यामसुन्दर दौड़ पड़े। कुछ ही दूर जाकर यक्षका सिर एक घूसेसे उन्होंने चूर्ण कर दिया।

एक बार गोप अम्बिकावनकी यात्रा करने गये थे। वहाँ रात्रिमें सोते समय नन्दबाबाको एक अजगरने पकड़ लिया और निगलने लगा। गोपोंद्वारा मशालोंसे जलाये जानेपर भी जब उसने व्रजराजको नहीं छोड़ा, तब श्रीकृष्णने आकर उसे चरणसे मारा। उनका चरण-स्पर्श होते ही अजगरका शरीर छूट गया। वह देवरूप धारण करके स्वर्ग चला गया। इसी प्रकार एक बार नन्दबाबा एकादशीके व्रतके बाद भ्रमसे रात्रिमें ही सबेरा हुआ समझकर यमुनामें स्नान करने घुसे। एक वरुणका सेवक उन्हें वरुणलोक पकड़ ले गया। पिताके डूबनेकी बात सुनकर श्रीकृष्णचन्द्र यमुनामें कूद पड़े और वरुणलोक जाकर बाबाको ले आये।

यमुनाजीमें सौ फनोंवाला कालियनाग रहता था। उसके विषसे वहाँका यमुनाजल विषैला हो गया था। खेल-ही-खेलमें श्यामसुन्दर ह्रदमें कूद पड़े। एक बार तो कालियने उन्हें अपने शरीरसे लपेट लिया; किंतु कुछ देरमें वे उसके बन्धनसे छूट गये। कूदकर वे सर्पके फनपर खड़े हो गये और एकसे दूसरे फनपर कूदकर नृत्य करने लगे। कालियके फन चिथड़े हो

गये। अन्तमें उसने भगवान्‌को पहचानकर क्षमा माँगी। श्रीकृष्णकी आज्ञासे कालिय परिवारके साथ समुद्रमें चला गया।

देवराज इन्द्रका गर्व नष्ट करनेके लिये श्रीकृष्णचन्द्रने गोपोंको इन्द्रका यज्ञ करनेसे रोक दिया और गिरिराज गोवर्धनकी पूजा करायी। इससे क्रोधमें आकर इन्द्रने व्रजपर प्रलय-वर्षा प्रारम्भ कर दी। श्रीकृष्णचन्द्रने गोवर्धन पर्वतको उठाकर बायें हाथकी छोटी अँगुलीपर रख लिया और सात दिन-रात रखे खड़े रहे। पर्वतके नीचे पूरे व्रजके लोग सुरक्षित थे। अन्तमें सात दिन-रात वर्षा करके इन्द्र हार गये। वर्षा बंद हो गयी। श्यामसुन्दरने पर्वत यथास्थान रख दिया। इन्द्रने आकर भगवान्‌से क्षमा माँगी।

व्रजकी बालिकाएँ चाहती थीं कि हमारे पति श्रीकृष्ण ही हों। इसके लिये वे मार्गशीर्ष महीनेमें प्रातःकाल यमुनास्नान करके देवीकी पूजा करती थीं। जिस दिन महीना पूरा हुआ, उस दिन आकर श्यामसुन्दर उनके वस्त्र लेकर कदम्बपर जा चढ़े। पीछे जब मोहनके कहनेपर वे सब जलसे बाहर आ गयीं, उनके वस्त्र लौटाकर श्यामने वर्षभर बाद उनके साथ रास करनेका वचन दिया। एक वर्ष बाद शरद् ऋतुकी पूर्णिमाको उन्होंने उनके साथ वृन्दावनमें रास-क्रीड़ा की।

उधर जब कंसका भेजा केशी भी श्रीकृष्णके हाथों मारा गया, तब कंसने अक्रूरको बलराम-श्यामको मथुरा बुलाने भेजा। दोनों भाई मथुरा आये। पहले ही दिन श्रीकृष्णचन्द्रने कंसके धोबीको मार दिया, उसके धनुषको तोड़ दिया। दूसरे दिन अखाड़ेके द्वारपर कुवलयापीड़ हाथीको मारकर दोनों भाई अखाड़ेमें प्रविष्ट हुए। बलरामजीसे मल्लयुद्धमें मुष्टिक और श्यामके द्वारा चाणूर मारा गया। श्रीकृष्णने ऊँचे मञ्चपर बैठे बकवाद करते कंसके केश पकड़कर उसे नीचे पटककर मार दिया। मथुराका राज्य फिर उग्रसेनजीको मिला। वसुदेव-देवकी अपने पुत्रोंको पाकर आनन्द-मग्न हो गये।

श्याम-बलरामने उज्जैन जाकर सांदीपनि ऋषिसे शिक्षा प्राप्त की

और समुद्रमें डूबकर मरे हुए उनके पुत्रको यमलोकसे लाकर गुरुदक्षिणामें दिया। अपने जामाता कंसके मारे जानेसे रुष्ट मगधराज जरासंध बार-बार मथुरापर आक्रमण कर रहा था। सत्रह बार वह पराजित हुआ; किंतु अठारहवीं बार नरनाट्य करते श्रीकृष्णचन्द्र उसके सामनेसे भाग खड़े हुए। मथुरा सूनी पड़ी थी। समुद्रमें द्वारिका बसाकर मथुराके लोगोंको वहाँ पहले ही लीलामय भेज चुके थे। जरासंधसे पहले ही आकर कालयवन मारा जा चुका था। जरासंध अपनेको विजयी मानकर भले लौटे, उसके हाथ लगना कुछ नहीं था।

द्वारिका पहुँचनेपर ब्रह्माजीके आदेशसे महाराज रैवतने अपनी पुत्री रेवतीका विवाह बलरामजीसे कर दिया और श्रीकृष्णचन्द्रके विवाहोंका क्रम प्रारम्भ हो गया। जरासंध आदि शिशुपालके सहायकोंका मान-मर्दन करके वे रुक्मिणीजीको हर लाये। सत्राजित्‌ने स्वयं अपनी पुत्री सत्यभामाका उनसे विवाह कर दिया; क्योंकि सूर्यसे प्राप्त स्यमन्तक मणिके हरणका जो झूठा कलङ्क उसने श्रीकृष्णपर लगाया था, उस दोषका मार्जन करनेके लिये वह उन्हें अपना जामाता बना लेनेको उत्सुक था। जाम्बवतीजी तो इस स्यमन्तक-प्रसङ्गका उपहार ही थीं। स्यमन्तककी खोजमें जानेपर सत्राजित्‌का भाई सिंहद्वारा मारा गया—यह खोज मिली, सिंह आगे मरा पड़ा मिला और उसे मारनेवालेकी खोज करते श्रीकृष्णचन्द्र ऋक्षराज जाम्बवंतकी गुफामें पहुँच गये। पहले तो जाम्बवंतजीने आक्रमण ही कर दिया। पेड़, पत्थर और वे न रहे तो घूँसोंसे ही युद्ध चलता रहा अविराम रात-दिन पूरे अट्ठाईस दिन। किंतु अन्तमें जाम्बवंतजीका शरीर पिस-सा उठा। अपने आराध्यको उन्होंने पहचान लिया। क्षमा माँगी और अपनी पुत्री जाम्बवती भेंट कर दी।

इस संग्रहके पदोंमें यहीं तकके चरितोंकी कहीं-कहीं चर्चा हुई है। पूरा श्रीकृष्ण-चरित तो यहाँ देना कठिन ही है। जाम्बवतीजीके अतिरिक्त

कालिन्दी, मित्रविन्दा, भद्रा, लक्ष्मणा तथा सत्या—ये मुख्य पटरानियाँ उनकी थीं। भौमासुरको मारकर उसके यहाँसे सोलह सहस्र राजकुमारियोंका उन्होंने उद्धार किया। उनका भी पाणिग्रहण करना आवश्यक ही था—इसके बिना उनका उद्धार कुछ अर्थ ही नहीं रखता।

दन्तवक्त्र, विदूरथ, पौण्ड्रक, शाल्व, द्विविद आदि असुर—पृथ्वीका भार दूर करनेके लिये ही जिनका अवतार हुआ था, वे असुरोंका संहार तो करते ही। कुछका उन्होंने किया, कुछका उनके बड़े भैयाने। महाभारतका संग्राम उनकी भू-भार-हरणकी क्रीड़ा ही तो थी। अपार तथा अचिन्त्य हैं उन लीलामयके चरित।

कविता और भजनोंकी पुस्तकें

सचित्र, संक्षिप्त भक्त-चरित-मालाकी पुस्तकें

सम्पादक—श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार

भक्त बालक—पाँच बालक भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ७२, सचित्र, मूल्य ।-)
भक्त नारी—पाँच स्त्री भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ६८, चित्र ६, मूल्य ... ।-)
भक्त-पञ्चरत्न—पाँच भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ८८, चित्र २, मूल्य ... ।-)
आदर्श भक्त—सात भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ९८, चित्र १२, मूल्य ... ।-)
भक्त-चन्द्रिका—छः भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ८८, सचित्र, मूल्य ... ।-)
भक्त-सप्तरत्न—सात भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ८८, सचित्र, मूल्य ... ।-)
भक्त-कुसुम—छः भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ८४, सचित्र, मूल्य ... ।-)
प्रेमी भक्त—पाँच भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ८८, सचित्र, मूल्य ... ।-)
प्राचीन भक्त—पंद्रह भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ १५२, चित्र ४, मूल्य ... ॥)
भक्त-सौरभ—पाँच भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ११०, सचित्र, मूल्य ... ।-)
भक्त-सरोज—दस भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ १०४, सचित्र, मूल्य ... ।=)
भक्त-सुमन—दस भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ ११२, चित्र ४, मूल्य ... ।=)
भक्त-सुधाकर—बारह भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ १००, चित्र १२, मूल्य ॥)
भक्त-महिलारत्न—नौ भक्त महिलाओंकी कथाएँ, पृष्ठ १००, चित्र ७, मू० ।≡)
भक्त-दिवाकर—आठ भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ १००, चित्र ८, मूल्य ।≡)
भक्त-रत्नाकर—चौदह भक्तोंकी कथाएँ, पृष्ठ १००, चित्र ८, मूल्य ।≡)

ये बूढ़े-बालक, स्त्री-पुरुष—सबके पढ़ने योग्य, बड़ी सुन्दर और शिक्षाप्रद पुस्तकें हैं। एक-एक प्रति अवश्य पास रखने योग्य है।

पता—गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

आजु नंद के द्वारैं भीर।
इक आवत, इक जात बिदा ह्वै, इक ठाढ़े मंदिर कैं तीर॥
कोउ केसरि कौ तिलक बनावति, कोउ पहिरति कंचुकी सरीर।
एकनि कौं गौ-दान समर्पत, एकनि कौं पहिरावत चीर॥
एकनि कौं भूषन पाटंबर, एकनि कौं जु देत नग हीर।
एकनि कौं पुहुपनि की माला, एकनि कौं चंदन घसि नीर॥
एकनि माथैं दूब-रोचना, एकनि कौं बोधति दै धीर।
सूरदास धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य-सरीर॥

—इसी पुस्तकसे